श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित



प्रभुपाद हरिदास गोस्वामी

श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित

रचयिता प्रभुपाद हरिदास गोस्वामी



जय शचिनन्दन जय गौरहरि।
विष्णुप्रिया-प्राणनाथ नदिया बिहारी ॥





आर्यावर्त्त प्रकाशन गृह
९५-ए, चितरञ्जन एवेन्यू, कलकत्ता-१२

प्रकाशन-तिथि :

दीपावली गौराब्द ४७८
विक्रम सम्वत् २०२१
शकाब्द १८८६
बङ्गाब्द १३७१
ईस्वी सन् १९६४

प्रकाशक
रामनिवास ढंढारिया
आर्यावर्त्त प्रकाशन-गृह
६५-ए, चित्तरञ्जन एवेन्यु,
कलकत्ता-१२ (फ़ोन ३४-७३२२)

न्योछावर
२रु. ५० पैसे

प्राप्ति स्थान

★ श्रीमती सुशीला सुन्दरी देवी
बूढ़ा शिव टोला,
नवद्वीप

★ राजवैद्य पं० लक्ष्मीनारायणजी
पुराना शहर
वृन्दावन

★ श्रीकृष्ण जन्म-स्थान सेवा संघ,
कटरा केशवदेव,
मथुरा

★ आर्यावर्त प्रकाशन-गृह
६५-ए, चितरञ्जन एवेन्यू,
कलकत्ता-१२

★ गोपाल ग्रन्थालय
१८७, दादी सेठ अग्यारी लेन,
बम्बई-२

★ राधा ग्रन्थ कुटीर
मेन रोड, गांधीनगर
दिल्ली-३१

मुद्रक —
राधा प्रेस
मेन रोड, गांधीनगर
दिल्ली-३१

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ-संख्या



प्रकाशकीय निवेदन

प्रेम और करुणाके मूर्तिमान विग्रह श्रीचैतन्यमहाप्रभुकी बङ्गालमें भगवान श्रीकृष्णका ही दूसरा रूप मानकर पूजा-आराधना की जाती है। श्रीचैतन्य महाप्रभुका उद्भव ही ऐसे समय हुआ था जब कि सारे देशमें हिन्दू-धर्मावलम्वी विधर्मियोंके अत्याचारसे संत्रस्त थे और अपने आपको तथा अपने प्राणप्रिय वैष्णवधर्मको खतरेमें अनुभव कर रहे थे। श्रीमन् महाप्रभुने अवतीर्ण होकर भगवानके गुणानुवाद कीर्त्तनके प्रति लोगोंमें अनुरक्ति उत्पन्न तो की ही, अपने भक्तों और अनुयायिओंमें साहस और धर्म-रक्षाके लिए सर्वस्वार्पणकी भावनाका संचार भी किया। भक्तगण जगह-जगह भाव-विभोर होकर सामूहिक कीर्त्तन करते और श्रीमहाप्रभु द्वारा प्रवाहित प्रेम-रस-मंदाकिनीमें अवगाहन कर अपने आपको धन्य-धन्य अनुभव करते। आज भी श्रीमहाप्रभु द्वारा प्रवर्तित प्रेम-भावकी रसानुभूतिसे भावुक भक्तगण अपनेको पावन करते हैं।

इन्हीं महाप्रभुजी की प्रथम-गृहिणी श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीका संक्षिप्त जीवन-चरित्र ही प्रस्तुत-पुस्तकका विषय है। श्रीचैतन्यदेवके जीवनसे सम्बन्धित प्राचीन बङ्गला साहित्यमें भी श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीके विषयमें कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं था। दैवी

प्रेरणासे प्रेरित होकर १३२० बङ्गाब्दमें प्रभुपाद श्रीहरिदासजी गोस्वामीने इन प्रातः वंद्यनीया देवीके जीवन-चरित्र सम्बन्धी एक स्वतंत्र ग्रन्थकी रचना कर इस महत् अभावकी पूर्ति की।

श्रीमन्महाप्रभुजीकी द्वितीय गृहिणी श्रीविष्णुप्रियाजीकी भाँति ही श्रीलक्ष्मी-प्रिया देवीका जीवन भी पतिपरायणताका उत्कृष्ट उदाहरण है। हिन्दी भाषी आस्तिक पाठकगण उनके नाम तथा गुणोंसे प्रायः अपरिचित से हैं। अतएव मूल बङ्गला पुस्तकका यह हिन्दी रूपान्तर उनके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए, जिसे पण्डित श्रीगौरीशंकरजी द्विवेदीने पूरा किया है, हमें अत्यन्त प्रसन्नता अनुभव हो रही है।

प्रभुपाद श्रीगोस्वामीकी मूल भावनाको हिन्दी रूपान्तरमें भी ज्यों का त्यों सुरक्षित रखनेकी चेष्टा रूपान्तरकार महोदयने की है। बङ्गला भाषाकी प्राञ्जलता और सौष्ठवको हिन्दी पाठकों तक पहुँचानेकी दृष्टिसे ही, रूपान्तरकार महोदयने, वाक्य-विन्यासोंमें कहीं-कहीं बङ्गला भाषाकी छटा और प्रवाहको आने दिया है ताकि पाठक मूल भावोंको निकटसे हृदयङ्गम कर सकें। मूल ग्रन्थमें उपशीर्षक अवश्य नहीं थे, पर अपने पाठकोंकी सुविधाके लिये हमने उन्हें हिन्दी संस्करणमें देकर किञ्चित स्वतन्त्रता बरती है। आशा है विज्ञ पाठक इसकी उपादेयता अनुभव करेंगे।

प्रभुपादजीने अन्य बङ्गला ग्रन्थोंमें उपलब्ध पद्योंके समीचीन उद्धरण प्रस्तुत पुस्तकके बङ्गला संस्करणमें स्थान-स्थान पर प्रयुक्त किये हैं। हिन्दी अनुवादके समय उनमें से सरल पद्योंको तो यथावत ही रख लिया है, पर किंचित भी दुरूह पद्योंका सरल अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इन पद्य-उद्धरणोंके नीचे सम्बन्धित संदर्भ-ग्रन्थोंके नाम सांकेतिक रूपमें दे दिये गये हैं जिनका पूरा विवरण निम्न प्रकारसे है—

संक्षिप्त नाम	पूरा नाम	रचनाकार
चै० भा०	श्रीचैतन्य-भागवत	ठाकुरवृन्दावनदास
चै० च०	श्रीचैतन्य-चरितामृत	कविराज श्रीकृष्णदास
चै० मं०	श्रीचैतन्य-मङ्गल	ठाकुर श्रीलोचनदास
ज० चै० मं०	श्रीचैतन्य-मङ्गल	ठाकुर श्रीजयानन्द
प्रे० वि०	श्रीप्रेम-विलास	श्रीनित्यानन्ददास
अ० प्र०	श्रीअद्वैत-प्रकाश	श्रीईशान नागर

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका वर्णन अति अल्प था लेकिन था बड़ा मधुर। वे यौवनोद्गमके प्रारम्भमें ही अप्रकट हो गई थीं। उनकी बाल-लीलाकी कोई कथा ग्रन्थमें नहीं मिली। उनकी बाल्य अवस्थामें गङ्गाघाट पर श्रीगौराङ्ग दर्शनसे नवानुराग, प्रभुके साथ उनका शुभ परिणय, स्वामीगृहमें संसार लीला, सासकी सेवा, प्रभुके विरहमें आत्म विसर्जन—इन्हीं कुछ विषयोंको लेकर मैंने अनुशीलन किया। किन्तु केवल इतनेसे ही उनका पुण्य-चरित लिखनेका साहस नहीं कर सका। इसके उपरान्त जब भी श्रीयुक्त वनमाली गोस्वामी महाशयके साथ मेरा साक्षात्कार हुआ तब-तब ही उन्होंने देवीका पुण्य-चरित लिखनेका मुझसे विशेष अनुरोध किया। मेरे दुर्भाग्यवश श्रीधाम वृन्दावन निवासकालमें इस शुभ कार्यमें हाथ लगानेका अवसर नहीं हुआ। अवसर नहीं हुआ क्यों कहूँ ? सौभाग्य नहीं हुआ। सौभाग्यका उदय हुये बिना इन सब शुभ कार्योंमें मति-रति नहीं होती। श्रीधाममें नौ महीने निवास करके पौषकी २०वीं तारीखको मैं पुनः अपने कर्मस्थान भूपालमें आया। भूपाल आकर श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका चरित लिखना होगा इस विचारसे बङ्गीय साहित्य-परिषदके यहाँसे ठाकुर जयानन्दकृत श्रीचैतन्यमङ्गल श्रीग्रन्थ मंगानेके लिये पत्र लिखा। माघकी १०वीं तारीखको यह श्रीग्रन्थ मेरे हस्तगत हुआ। इसमें देवीकी लीला-कथा कुछ-कुछ मिली देखकर १३वीं माघ श्रीभैमि एकादशी तिथिको श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित लिखना आरम्भ किया। फाल्गुनकी १९वीं तारीखको श्रीग्रन्थका शेष अध्याय लिखा गया। परदासत्व मेरी वृत्ति है। उसमें दिन-रात दस घण्टे मुझे लिप्त रहना पड़ता है। इसके सिवाय यह श्रीग्रन्थ लिखनेमें मुझे तीन-चार घण्टे और परिश्रम करना पड़ा है। नाना कार्योंके बीच दयामय प्रभुने मेरे जैसे जीवाधम ग्रन्थकारके केश पकड़कर यह काम करा लिया है। जो एक बार लेखनीसे लिखा गया उसको पुनः देखकर किसी प्रकारका परिवर्तन या संशोधन करनेका अवसर नहीं दिया। मुझे ऐसा प्रतीत होता मानो एक विद्युल्लता सदृश परम रूप लावण्य सम्पन्ना देवीने मेरे मस्तक पर पदार्पण करके, केश पकड़कर विषम ताड़ना करके मेरे द्वारा यह दुरूह कार्य करवाया है। रात्रिमें मुझे निद्रा नहीं थी। दिनमें सैकड़ों कार्योंके बीच भी श्रीमती लक्ष्मीप्रियाकी पुण्य-चरित-कथा व मधुर करुणा रसात्मक लीला-कथा सर्वदा ही मेरे स्मृति-पथमें उदय होती रहती। भोजन पर बैठकर क्या खा रहा हूँ इसका मुझे ज्ञान नहीं रहता। श्रीग्रन्थ लेखन शेष होने पर मेरा चित्त सुस्थिर हुआ। किस प्रकार कहाँसे इतने दिन कट गये यह मैं नहीं जान सका।

ये सब बातें लिखकर मैं आत्मगौरव कर रहा हूँ ऐसा कोई मनमें न सोचें। श्रीधाम वृन्दावनवासी पूज्यपाद श्रीवनमाली गोस्वामी एकनिष्ठ गौर-भक्त साधक हैं। वे श्रीश्रीलक्ष्मी-विष्णुप्रिया-गौराङ्ग युगल भजन-रसलोलुप रसिक भक्त हैं। उन्होंने मुझे जो बात कही थी, उस समय मैं उसका मर्म नहीं समझ सका। श्रीग्रन्थ लिखना

आरम्भ करने पर मैं उसका मर्म समझा। मैंने श्रीगौराङ्ग प्रभुकी द्वितीय गृहिणी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी लीला-कथा लिखी, किन्तु उनकी प्रथम गृहिणी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी लीला-कथा कुछ भी नहीं लिखी, इसीसे देवीकी मेरे ऊपर इतनी ताड़ना थी। इसको ताड़ना कहूँ या और कुछ कहूँ ? परन्तु इस ताड़नाको मैं देवीका अयाचित कृपा-कटाक्ष मानकर, उनकी लीला-कथा लिखते-लिखते समय-समय पर सर्व गोष्ठि सहित अझोर नयनोंसे रोया हूँ और मन-मनमें श्रीलक्ष्मीप्रियाके साथ श्रीगौराङ्ग प्रभुका मधुर युगल रूप ध्यान करके रोते-रोते उनकी लीला-कथा लिखी है। श्रीग्रन्थके प्रति पृष्ठ, प्रति अक्षर, अधम अकृति भजन-विमुख ग्रन्थकारके अश्रुजलसे लिखित हैं। इस श्रीग्रन्थको पढ़कर यदि कलि-क्लिष्ट किसी भी एक जीवका कठिन हृदय द्रव होकर वह श्रीगौराङ्ग-लीलामृतरसमें मग्न हो जाय तो अधम ग्रन्थ-कारका सब परिश्रम सफल हो जायगा।

इस श्रीग्रन्थकी रचनामें अधम ग्रन्थकारकी कृति कुछ भी नहीं है। प्रभुके रसिक भक्त श्री राय रामानन्दने प्रभुको कहा था—

मोर जिह्वा वीणामय तुमि वीणाधारी। **तोमार मने जेइ उठे ताहाइ उच्चारि॥** (चै० च०)	मेरी जिह्वा वीणा यन्त्र है और तुम वीणाधारी हो। तुम्हारे मनमें जो आता है वही उच्चारता हूँ।

प्रभुकी इच्छासे तथा उनकी अन्तरङ्गा शक्तिरूपिणी श्रीमती लक्ष्मीप्रियादेवीके कृपादेश एवं विषम ताड़नासे इस श्रीग्रन्थका लेखन रूपी महत्कार्य सत्ताइस दिनमें शेष हुआ। कृपामय पाठकवृन्द इसको सूत्ररूपमें समझें। श्रीश्रीगौराङ्ग प्रभुकी युगल-विलास लीला-वर्णन करके ग्रन्थ प्रणयन करना बड़े भाग्यकी बात है। बहुतसे भाग्यवान युगल-भजन-निष्ठ गौर-भक्तवृन्द यह सब मधुर लीला और भी विस्तार करके वर्णन करेंगे। श्रीगौराङ्ग लीलाके वेदव्यास श्रीवृन्दावन ठाकुर यथार्थ ही लिख गये हैं —

आर कत लीलारस हैल सेइ स्थाने। **नित्यानन्द स्वरूपे से सर्व्व तत्त्व जाने॥**	और कितना लीलारस उस स्थान पर प्रकट हुआ, नित्यानन्द स्वरूप उन सब तत्त्वोंको जानते हैं।
ताँहार आज्ञाय आमि कृपा-अनुरूपे। **किछु मात्र सूत्र करि लिखिल पुस्तके॥**	उनकी आज्ञासे उनकी कृपानुरूप मैंने कुछ सूत्र मात्र पुस्तकमें लिखे हैं।
सर्व्व वैष्णवेर पाये मोर नमस्कार। **इथे अपराध किछु नहुक आमार॥**	सब वैष्णवोंके चरणोंमें मेरा नमस्कार। है इसमें मेरा कोई अपराध नहीं है।

दैवे इहा कोटि कोटि मुनि वेदव्यासे ।
वर्णिवेन नानामते अशेष विशेषे ।।
(चै० भा०)

कोटि-कोटि मुनि वेदव्यास दैवात् नाना प्रकारसे विशेषरूपसे बहुत-सा वर्णन करेंगे ।

श्रीगौरकथाका अन्त नहीं है । वह बनाकर या लिखकर पूरी नहीं की जा सकती । इसीसे श्रीचैतन्य-भागवतकार लिख गये हैं—

पक्षी जेन आकाशेर अन्त नाहि पाय ।
जत शक्ति थाके तत दूर उड़ि जाय ।।

जिस प्रकार पक्षी आकाशका अन्त नहीं पाता, जितनी शक्ति होती है उतना उड़कर जाता है,

एइ मत चैतन्य कथार अन्त नाइ ।
जार जत दूर शक्ति सभे तत गाइ ।।

उसी प्रकार चैतन्य-कथाका कोई अन्त नहीं है जिसकी जितनी शक्ति होती है सभी उतना वर्णन करते हैं ।

भजन विहीन ग्रन्थकार अकृति एवं अल्पशक्ति सम्पन्न जीवाधम है, केवल मात्र आत्म शोधनके लिए इस दुःसाहसिक कार्यमें मैं प्रवृत्त हुआ हूँ । इस श्रीग्रन्थमें नाना प्रकारकी त्रुटि दीख पड़ेगी, कृपामय गौर-भक्त वृन्द अपने गुणसे उसकी मार्जना कर लें । श्रीगौराङ्गप्रभु व उनके भक्तवृन्दका जयगान करके इस समय विदा लेता हूँ ।

भक्ति गोष्ठि सहित गौराङ्ग जय जय ।
शुनिले गौराङ्ग-कथा भक्ति लभ्य हय ।।

भक्त गोष्ठि सहित श्रीगौराङ्गकी जय-जयकार हो । श्रीगौराङ्ग-कथा सुननेसे भक्ति प्राप्त होती है ।

श्रीगौराङ्ग प्रभुके शुभ जन्मदिवस सर्वमङ्गला श्रीगौरपूर्णिमा तिथिको यह श्रीग्रन्थ श्रीगौराङ्ग प्रेसमें मुद्रित करनेके लिये भेजा गया । अलमिति विस्तरेण ।

भूपाल
श्रीगौर पूर्णिमा
गौराब्द ४२६, बंगाब्द १३२२

—दीन ग्रन्थकार

* उत्सर्ग-पत्र *

परमाराध्या गोलोकगता श्रीश्रीमातृदेवीके प्रति—

माँ !

तुमने अनेकों कष्ट उठाकर मुझे मनुष्य बनाया था, लेकिन मैं तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर सका—यह बात मनमें आते ही मुझे बड़ा दुःख होता है। तुम्हारी चरण-सेवा करनेका सौभाग्य नहीं पा सका, यही मेरा विषम दुःख है। यही दुःख मेरे जीवनके सारे दुःखोंका मूल है। लोग कहते हैं कि मैंने तुमसे अनेक गुण पाये हैं, लेकिन मैं तो ऐसा कुछ नहीं समझता। माँ ! तुम भक्तिमती थीं, तुमको देखकर लोगोंके मनमें भक्तिका उदय हुआ करता। लोग तुम्हें साक्षात लक्ष्मीठाकुरानी कहा करते थे। मैं तुम्हारा कुपुत्र हूँ। मेरा हृदय भक्ति शून्य है। मुझे देखकर लोगोंके मनसे भक्तिभाव दूर ही होता है। मैं वंशका कुलाङ्गार हूँ। पितृ-पुण्यसे और मातृ-आशीर्वादसे आज मैं भक्ति-पथका पथिक बना हूँ। तुम लोगोंने अपने अधम अकृत कुसन्तानको केश पकड़कर भक्ति-पथमें खींच लिया है। उपयुक्त न होने पर भी तुम लोगोंने मुझे छोड़ा नहीं। मैं किसी प्रकार भी तुम लोगोंका ऋण परिशोध नहीं कर सकूंगा। सन्तान पिता-माताका ऋण परिशोध कर नहीं सकती। इसकी आशा और चेष्टा व्यर्थ है। भक्ति-पथका पथिक होकर मैं बहुत थोड़ी दूर पहुँच मात्र पाया हूँ। तुम लोगोंकी कृपा और आशीर्वादसे इसी बीच जो फल प्राप्त किया है उसको तुम लोगोंको न दूं तो और किसको दूंगा ? भक्ति-पथका प्रथम फल तो पितृ-चरणमें समर्पण कर कृतार्थ हुआ हूँ। यह फल तुम्हारे चरण-कमलमें समर्पण करके निश्चिन्त होता हूँ। भक्ति-कल्पतरुमें दो फल आए थे, एक तो "श्रीश्रीविष्णुप्रिया-चरित" और दूसरा "श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित"। श्रीविष्णुप्रिया देवीको पितृ-करमें समर्पण करके निश्चिन्त हूँ। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको तुम्हारे कर-कमलमें अर्पण करता हूँ। अब मुझे कोई चिन्ता नहीं। मातृ-आशीर्वादमें बड़ी शक्ति होती है। तुम आशीर्वाद करो जिसमें इसी प्रकार भक्ति-पथमें चलते-चलते फल एकत्रित कर तुमलोगोंके आस्वादनार्थ तुमलोगोंके निकट उपस्थित हो सकूं।

भूपाल, मध्यभारत
श्रीश्रीगौर पूर्णिमा
गौराब्द ४२९
बङ्गाब्द १३२२

तुम्हारा अधम व अकृत पुत्र
हतभाग्य
हरिदास

मङ्गलाचरण

विश्वम्भराय गौराय चैतन्याय महात्मने ।
शचीपुत्राय मित्राय लक्ष्मीशाय नमोनमः ।।

* * *

जीयाव् कैशोर चैतन्या मूर्त्तिमत्या गृहागमात् ।
लक्ष्म्यार्चिचतोऽथ वाग्देव्या दिशां जयि जयच्छलात् ।।

* * *

श्रीमन्नवद्वीपकिशोरचन्द्र श्रीनाथ विश्वम्भर नागरेन्द्र ।
हा श्रीशचीनन्दन चित्तचोर प्रसीद हे विष्णुप्रियेश गौर ।।

* * *

गौराङ्गं नदियानन्दं लक्ष्मीविष्णुप्रियेश्वरम् ।
नटन्त नागरवरं तं वन्दे कीर्तनप्रियम् ।।

* * *

भक्तवश्यं भावमयं गौरगोविन्दविग्रहम् ।
लोकेश्वरं लक्ष्मीकान्तं तं वन्दे सेवकप्रियम् ।।

श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित

प्रथम अध्याय

देवीका तत्व और गौराङ्ग-परिचय

"निज लक्ष्मी चिनिया हासिल गौरचन्द्र।
लक्ष्मीश्रो बन्दिला मने प्रभुपदद्वन्द्व।।"

(श्रीश्रीचैतन्य-भागवत)

देवीका तत्त्व

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरकी प्रथम गृहिणी थीं। नवद्वीप-वासी, भक्तिशास्त्रमें सुविज्ञ, मिश्र उपाधिकारी श्रीवल्लभाचार्य श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके पिता थे। पाश्चात्य वैदिक श्रेणीके विप्रकुलमें जन्म लेकर उन्होंने पितृ-मातृ दोनों कुलोंको पवित्र किया था। श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका ग्रन्थमें लिखा है—"जो पहले मिथिलाधिपति राजा जनक थे, श्रीगौराङ्ग अवतारमें उन्होंने ही श्रीपाद वल्लभाचार्यके रूपमें नवद्वीपमें विप्रकुलमें जन्म ग्रहण किया था और कोई कोई इस महापुरुषका भीष्मक राजाके नामसे भी परिचय देते हैं।"

पुरासीज्जनको राजा मिथिलाधिपतिर्महान्।
अधुना वल्लभाचार्यो भीष्मकोऽपि च सम्मतः।।

(श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका)

श्रीरामावतारकी श्रीजानकीजी, और श्रीकृष्णावतारकी श्रीरुक्मिणीजी दोनों एक साथ सम्मिलित होकर श्रीश्रीलक्ष्मीप्रियाके नामसे श्रीपाद वल्लभाचार्यकी दुहिताके रूपमें नवद्वीप धाममें अवतीर्ण हुई थीं—यह बात भी उक्त ग्रन्थमें लिखी है। जैसे—

श्रीजानकी रुक्मिणी च लक्ष्मीनाम्नी च तत्सुता।
चैतन्यचरिते व्यक्ता लक्ष्मीनाम्नी च सा यथा।।

(श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका)

श्रीगौरगणोद्देश-दीपिकाके रचयिता श्रीपाद कवि कर्णपूर गोस्वामी श्रीश्रीमहाप्रभुके एक प्रमुख दास तथा उनके विशेष कृपा पात्र थे ।

श्रीपाद वल्लभाचार्यकी परम सुन्दरी कन्या परम सौभाग्यवती श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी जिस प्रकार श्रीगौर भगवानका मन हरण करके उनकी अङ्ग लक्ष्मी बनी थीं उसका वर्णन श्रीपाद मुरारीगुप्तने अपने चैतन्य-चरित काव्यमें इस प्रकार किया है—

सा वल्लभाचार्य-सुता चलन्ती
स्नातुं सखीभिः सुरदीर्घिकायाम् ।
लक्ष्मीरनेनैव कृतावतारा
प्रभोर्ययौ लोचनवर्त्म तत्र ।।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको महाजन लोग साक्षात् वैकुण्ठकी लक्ष्मीदेवी कह गये हैं । यदि ऐसा न होता तो वे बैकुण्ठके अधीश्वर श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरकी अङ्ग-लक्ष्मी कैसे हो सकती थीं ? श्रीगौराङ्ग-वक्ष-विलासिनीका तत्त्व श्रीगौरभगवान ही जानें । इन तत्त्वकी बातोंकी आलोचना करना यहाँ विशेष प्रयोजनीय नहीं है । महाजन लोगोंने जिस प्रकारसे देवीकी वन्दना करके श्रीगौराङ्ग सुन्दरकी कृपा प्राप्त की, उनके द्वारा रचित उपर्युक्त श्लोकोंसे इसका प्रचुर परिचय मिला है । इतना ही कलिके अधम जीवोंके लिये पर्याप्त है ।

बाल्यलीला व गौराङ्ग-परिचय

श्रीगौराङ्ग-वक्ष-विलासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी रूप और गुणमें अनुपम थीं । श्रीवृन्दावनदास ठाकुरने साक्षात् लक्ष्मी कहकर उनका वर्णन किया है—

वल्लभ आचार्य्य नाम जनकेर सम ।।
तान् कन्या आछे जेन लक्ष्मी मूर्त्तिमती ।
निरवधि विप्र तांर चिन्त्ये योग्यपति ।।
(चै० भा०)

पिताका नाम वल्लभ आचार्य था जो जनकके समान थे । उनकी कन्या मानों मूर्तिमती लक्ष्मी थीं । विप्र उनके लिए योग्य पतिकी निरन्तर चिन्ता किया करते ।

शचीनन्दन किशोरावस्थामें गङ्गाके घाटपर जिन सौभाग्यवती बालिकाओंके साथ क्रीड़ा करते थे, उनमें बालिका लक्ष्मीप्रिया भी थीं । शचीमाताके पास जो उत्पीड़िता बालिकाएँ आकर उनके धृष्ट पुत्र निमाईचाँदकी गङ्गा-घाटकी कीर्ति कथाएँ सुनाती थीं, उनमें बालिका लक्ष्मीप्रिया भी देखनेमें आती थीं । इनमें विशेष उत्पीड़ित किसी सरला बालिकाने शचीमातासे अभिमान भरे स्वरमें कहा था :—

"तोमार पुत्र मोरे चाहे विभा* करिबारे।" तुम्हारा पुत्र मुझसे विवाह करना चाहता है।

अनुमानतः नवबाला लक्ष्मीप्रियाजीके मुखसे ही यह बात निकली थी। कारण शचीनन्दन जो बोलते थे, वही करते थे।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी बालिका अवस्थासे ही नित्य गङ्गा-स्नान करती थीं और गङ्गाके घाट पर बैठकर पुष्प बिल्वपत्र द्वारा शिवपूजा करती थीं। पूजाकी समाप्ति हो जाने पर हाथ जोड़ कर महादेवसे प्रार्थना करती थीं —

आमार मानससिद्ध कर त्रिलोचन।
नवद्वीपचन्द्र करून पाणिग्रहण ।। (ज० चै० मं०)

हे त्रिलोचन ! मेरी मनोकामना पूर्ण करो, —नवद्वीपचन्द्र मेरा पाणिग्रहण करें।

मन ही मन इस वरके लिये प्रार्थना करके बालिका लक्ष्मीप्रिया दोनों आँखें मूँदकर ध्यानस्थ हो जातीं। उसी समय उनके प्रार्थित वरको सफल करनेके लिए उनके हृदय-धन श्रीनवद्वीपचन्द्र शचीनन्दन बालिकाके सामने आकर खड़े हो जाते। श्रीमती लक्ष्मीप्रियादेवी आँखें खोलकर जो देखतीं, उससे उनके मनमें बड़ा आनन्द होता, परन्तु लज्जासे उनका सुन्दर मुख अवनत हो जाता। धृष्ट निमाईचाँद हँसते हुए अम्लानमुख बालिकाके सामने अपरूप रूपच्छटा विकीर्ण करके खड़े रहते। ये श्रीनवद्वीपचन्द्र शचीनन्दन निमाईचाँद हैं—बालिका लक्ष्मीप्रिया इसको भलीभाँति जानती थीं। यह ग्रन्थमें भी लिखा हुआ है। बालिका का शुभ समय जानकर उसके वामनेत्र फड़कने लगे, उसने अपने सामने अपने हृदय-धनको देखा —

हेन काले वाम चक्षु नाचिते लागिल।
नवद्वीपचन्द्र लक्ष्मी सम्मुखे देखिल ।। (ज० चै० मं०)

तब शचीनन्दनने बालिका लक्ष्मीप्रियाको सम्बोधित करके हँसते हुए जो कुछ कहा, वह सुनिये —

हासि वले गौरचन्द्र दयानिधि।
एतदिने तोमारे प्रसन्न हैल विधि ।।

दयानिधि गौरचन्द्र हँस कर कहने लगे—इतने दिनोंमें विधाता तुम पर प्रसन्न हुए हैं।

परम सौभाग्यवती इस बाल-शशि नवबाला लक्ष्मीप्रियाकी अपरूप रूपराशि तथा असीम गुण प्रभुके मनः प्राणको हरनेमें समर्थ हुए थे। इसी कारण रूप-मुग्ध श्रीगौरभगवान्‌ने उस समय अपनी पूर्व-लीलाको स्मरण करके अपनी प्रियाको दर्शन देकर कृतार्थ किया। नवबाला श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका रूप-वर्णन कवि जयानन्द ठाकुरने अपने श्रीचैतन्यमङ्गलमें इस प्रकार किया है —

* विवाह

एरूप लावण्य केश भ्रमर गुञ्जरे।
वदन शुद्ध हेम चाँद शोभा करे॥

केशोंका रूप लावण्य ऐसा है मानों (मुख-कमल पर) भ्रमर गूँज रहे हों, पवित्र वदन स्वर्णिम चन्द्रमाके समान शोभायमान हैं।

सुलक्ष नासिका श्रुति नयन पङ्कजे।
हेम सरोरुह कर मृणाल द्विभुजे॥

नासिका, श्रुति एवं कमल जैसे नयन सब सुलक्षणयुक्त हैं। स्वर्ण-कमल जैसे दोनों हाथ एवं कमल-नाल जैसी दोनों भुजायें हैं।

कटिते किङ्किणी कम्बुकण्ठे हेमहार।
जठर त्रिबली काम सोपान बाजार॥

कमरमें करधनी और शंख सदृश कण्ठमें स्वर्णहार है। जठरकी त्रिवली ऐसी है मानों कामकी हाट लगी हो।

क्षोमवास दिव्यधौत अङ्ग सौरभे।
पुञ्ज पुञ्ज मधुकर उड़े मधुलोभे॥

सौरभयुक्त अङ्ग पर दिव्य श्वेत क्षोभदास धारण है। सौरभके लोभसे झुण्डके झुण्ड मधुकर उड़ रहे हैं।

द्विरद - मन्थर - गति शुद्ध स्वर बाजे।
कलहंसवर कि वा चरण सरोजे॥

हस्ती सदृश मंथर गति है। नूपुरोंसे निकलनेवाले कलरव सदृश शुद्ध स्वरसे ऐसा भ्रम होता है कि ये कलहंस हैं या कि चरण-कमल।

गङ्गाके घाटपर स्नान और शिवपूजाको उपलक्ष्य करके श्रीगौराङ्ग-लक्ष्मीप्रिया-मधुर-मिलनके सम्बन्धमें श्रीकविराज गोस्वामीने अपने श्रीचैतन्य चरितामृत श्रीग्रन्थमें लिखा है —

'एक दिन बल्लभाचार्य्येर कन्या लक्ष्मी नाम।
देवता पूजिते आइल करि गङ्गा स्नान॥

एक दिन वल्लभ आचार्यकी लक्ष्मी नामकी कन्या गङ्गा स्नान करके देव पूजन करने आई।

ताँरे देखि प्रभु हैल अभिलाष मन।
लक्ष्मीचित्ते प्रीति पाइल प्रभुर दर्शन॥

उन्हें देखकर प्रभुके मनमें अभिलाषा उत्पन्न हुई। लक्ष्मीके चित्तमें भी प्रीति थी जिससे उन्हें प्रभुका दर्शन प्राप्त हुआ।

साहजिक प्रीति दुँहार करिल उदय।
बाल्य भावाच्छन्न तबू हइला निश्चय॥

तब दोनोंकी बाल्यभावसे आच्छन्न सहज स्वाभाविक प्रीति उदय हुई और दृढ़ हुई।

दुँहा देखि दुँहार चित्ते हइल उल्लास।
देव पूजा छले कैल दुँहे परकाश॥'

दोनोंको परस्पर देखकर दोनोंके मनमें उल्लास हुआ जिसे देव पूजाके बहाने दोनोंने उसे प्रकट किया।

माला-समर्पण

बालिका लक्ष्मीप्रिया शचीनन्दनको पतिरूपमें प्राप्त करनेकी आशासे शिव-पूजा करती थीं, तथा प्रतिदिन पूजा समाप्त हो जानेके बाद वर माँगती थीं। रंगीले प्रभु बालिका लक्ष्मीप्रियाके साथ गङ्गाके घाट पर प्राय: क्रीड़ा करते थे। एक दिन उनको कहा—

प्रभु कहे आमा पूज आमि महेश्वर।
आमाके पूजिले पावे अभीप्सित वर॥
(चै० भा०)

प्रभु बोले—मुझे पूजो, मैं ही महेश हूँ। मुझे पूजनेसे मन चाहा वर मिलेगा।

नवबाला लक्ष्मीप्रिया बड़ी ही लज्जाशीला थीं। पहले वर्णन आ चुका है कि अपने पूजाके स्थानमें प्रभुको सामने देखकर लज्जासे अपने सुन्दर मुखमण्डलको अवनत करके लक्ष्मीप्रिया गङ्गाके घाट पर खड़ी रहीं। यह देखकर धृष्ट गौर-किशोर अपनी हँसी न रोक सके। वे बालिकाके सामने खड़े होकर परिहास करने लगे। वे हमारे चिरपरिचित वही 'निर्लज्ज निमाई' जो हैं! गङ्गाके घाट पर बहुत लोग स्नान कर रहे थे। सभी शचीनन्दनकी उद्दण्डतासे व्यथित थे। बालिका लक्ष्मीप्रियाके साथ उनकी धृष्टता देखकर कोई कोई हँस रहा है, और किसी किसीको क्रोध हो रहा है। इससे बालिका लक्ष्मीप्रिया अधिक लज्जा बोध करती हैं। धृष्ट निमाई चाँदको वे कुछ भी नहीं कह पा रही हैं, उनके चन्द्रवदनको देखकर बालिकाके मनमें आनन्द अवश्य हो रहा है। मुखसे कुछ बोलना चाहती हैं, परन्तु लोकलज्जाके भयसे कुछ साहस नहीं होता। इसके दो कारण हैं। पहला यह है कि कहीं पीछे उनके हृदय-धन प्राण-वल्लभ रुष्ट न हो जाएँ, दूसरा यह है कि उनके मनमें डर है कि उनके कुछ बोलनेपर धृष्ट निमाईचाँद पीछे कहीं और भी उपद्रव न करें। इसी कारण वे लज्जासे गड़ी जा रही हैं, और अधोमुख शचीनन्दनके सामने गङ्गाके घाट पर स्थिर होकर खड़ी हैं, और दोनों हाथोंसे अँगुलीके नख खोंट रही हैं। बीच बीचमें एक एक बार नयन-कोरोंसे इधर-उधर देखती हैं। उद्देश्य यह है कि कोई परिचित आत्मीय उनके इस मधुरमिलनको देख तो नहीं रहा है। कुछ देरके बाद लक्ष्मीप्रिया देवीने जब देखा कि घाटके सब लोग अन्यमनस्क भावसे अपना कार्य कर रहे हैं, किसीका कोई विशेष लक्ष्य उनके प्रति नहीं है, तब उन्होंने अपने बहुत दिनोंकी मनकी साध पूरी कर ली! वह कौन-सी साध थी इसको श्रीकविराज गोस्वामीके शब्दोंमें सुनिये—

लक्ष्मी ताँर अङ्गे दिल पुष्प चन्दन।
मल्लिकार माला दिया करिल वन्दन॥
(चै० च०)

लक्ष्मीने उनके अङ्ग पर चन्दन पुष्प अर्पण किया और मल्लिकाकी माला निवेदन कर वन्दना की।

इस प्रकार गङ्गाके घाट पर सैकड़ों आदमियोंके बीच बालिका श्रीलक्ष्मी-प्रियाके साथ गौर-किशोरका शुभ गन्धर्व विवाह हो गया। माला-चन्दन प्राप्त करके शचीनन्दनके मुखमें हँसी नहीं रुक रही है। उनको उनकी लक्ष्मीने पहचानकर उनके गलेमें वरमाला प्रदान कर दी। कलिके प्रच्छन्न अवतार अपनी लक्ष्मीके सामने प्रच्छन्न नहीं रह सके। इसी कारण हमारे प्रभुको इतनी हँसी आ रही है। प्रभुने अपने मनके तत्कालीन भावको भागवतका एक श्लोक पढ़कर व्यक्त किया।

प्रभु ताँर पूजा पाइया हासिते लागिला।
श्लोक पढ़ि ताँर भाव अङ्गीकार कैला।।
(चै० च०)

उनकी पूजा प्राप्त कर प्रभु हँसने लगे और श्लोक पढ़कर उनका भाव अङ्गीकार किया।

वह श्लोक यह है :—

सङ्कल्पो विदितः साध्व्यो !
भवतीनां मदर्चनम्।
मयानुमोदितः सोऽसौ।
सत्यो भवितुमर्हति।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध १०, अध्याय २२, श्लोक २५)

"हे साध्वीगण ! मेरी अर्चना करना ही तुम्हारा संकल्प है। तुम लज्जावश कहती नहीं हो, तथापि मैं जानता हूँ और इसका अनुमोदन करता हूँ, यह सत्य होगा।"

नन्दनन्दन श्रीकृष्णने रासस्थलीमें व्रज गोपिकाओंको सम्बोधन करके जो कहा था, यहाँ शचीनन्दन गौर-किशोरने अपनी प्रियाको वही बात कही है।

इस प्रकार गङ्गाके घाटपर प्रभुके साथ लक्ष्मीप्रिया देवीका इस रूपमें बीच बीचमें शुभ परिचय और मधुर मिलन होता रहा। ठाकुर वृन्दावनदास भी श्रीचैतन्य भागवतमें इसका वर्णन कर गये हैं।

दैवे लक्ष्मी एक दिन गेला गङ्गास्नाने।
गौरचन्द्र हेनइ समये सेइ स्थाने।।

एक दिन भाग्यसे लक्ष्मी गङ्गास्नान करने गईं। उसी समय गौरचन्द्र वहाँ पहुँच गये।

निज लक्ष्मी चिनिया हासिया गौरचन्द्र।
लक्ष्मी ओ वन्दिला मने प्रभु-पद-द्वन्द्व।।

अपनी लक्ष्मीको पहचानकर गौरचन्द्र हँस पड़े, और लक्ष्मीने भी प्रभुके दोनों पाद-पद्मोंकी वन्दनाकी।

इस प्रकार श्रीगौर भगवान और उनकी अङ्कलक्ष्मी लक्ष्मीप्रिया परस्पर एक दूसरेका परिचय प्राप्तकर प्रेमानन्दमें अपने अपने घर गए। श्रीगौराङ्ग-लीलाका मर्म समझनेकी शक्ति किसमें है ? इसी कारण श्रीकविराज गोस्वामीने लिखा है—

एइ मते लीला दुँहे करि गेला घरे।
गम्भीर चैतन्य लीला के बूझिते पारे।।

इस प्रकार लीला करके दोनों घर गए। गम्भीर चैतन्य-लीलाको समझनेकी सामर्थ्य किसमें है ?

ठाकुर वृन्दावनदासने इसी बातकी पुनरुक्ति की है —

हेन मते दो'हे चिनि दोहे घरे गेला । के बूझिते पारे गौरसुन्दरेर लीला ।।	इस प्रकार दोनों एक दूसरेको पहचान कर घर गए। गौर सुन्दरकी लीलाको कौन समझ सकता है ?

पथमें लीला-रङ्ग

ठाकुर लोचनदासने श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाके शुभ मिलनकी घटनाको लेकर एक मधुर रसपूर्ण अति सुन्दर कहानी लिखी है। यह मधुर कहानी श्रीचैतन्यमङ्गलमें वर्णित है।

प्राणवल्लभको देखते ही श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मनमें पूर्वस्मृति जागृत हुई। उन्होंने मन ही मन सोचा कि इतने दिनोंके बाद विधाताने उनके ऊपर कृपा की है—

लक्ष्मी देवी देखि पूर्व्व स्मरण हइल।
एतदिने विधि मोरे सदय हइल ।।

अपने प्राणवल्लभके दोनों चरण-कमल किस प्रकार एकबार अपने वक्षस्थलमें धारणकर हृदयको शीतल करेंगी, वे यही सोचने लगीं। गङ्गास्नान करने जा रही हैं, सङ्गमें सखियाँ हैं। लोकलज्जाके भयसे कुछ कह नहीं पा रहीं हैं, कैसे मनकी अभिलाषा पूरी होगी, कैसे मनकी साध मिटेगी, कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रही हैं—

लोक-लज्जा भये किछु बलिते ना पारि।
कि रूपे पाइबे पद वक्षःस्थले धरि ।।

बहुत सोचने विचारनेपर देवीके मनमें नारी-जाति-सुलभ एक चातुर्य जाल फैलानेकी वासनाका उद्रेक हुआ। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके गलेमें एक गजमुक्ताकी माला थी। उन्होंने जानबूझकर वह माला गलेसे तोड़कर फेंक दी। रास्तेमें मोती बिखर गये, मालाका कुछ अंश देवीके गलेमें रह गया। अपना बायाँ हाथ गलेमें लटकी मुक्ता मालाके टूटे अंशके ऊपर वक्षःस्थल पर धारण करके वे भूतलपर झुककर दूसरे हाथसे बिखरे हुए मोतियोंको उठाने लगीं, तथा 'कहाँ मिलेगा, कहाँ मिलेगा'—ये शब्द मुखसे हर समय उच्चारण करने लगीं।

गजमति हार छिल गलाय ताँहार।
छिंड़िया फेलिल भूमे पड़िल अपार ।।
बामकर वक्षे राखि सेइ मुक्ता तोले।
कोथा पाब कोथा पाब एइ वाक्य बोले ।।

देवीकी सखियाँ भी मुँह नीचा करके मोती खोजने लगीं। वे सबकी सब अन्यमनस्क हैं। श्रीगौराङ्ग सुन्दर यह देखकर तमाशा देखनेके लिए वहाँ खड़े हो

गए। बालिका लक्ष्मीप्रियाके चातुर्य-जालमें चतुर-चूड़ामणि शचीनन्दन आबद्ध हो गए। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने अपने वक्षःस्थल पर हाथ रखकर कौशलपूर्वक प्रभुको इशारेसे बतला कर दिखाया कि उनके प्राणवल्लभके अरुण चरणोंका स्थान यही वक्षःस्थल है। "कहाँ मिलेगा" "कहाँ मिलेगा"—देवीकी यह प्रेमाकांक्षापूर्ण प्रणय-कातर-कण्ठकी मधुमयी वाणी, प्राणवल्लभके पादपद्मकी प्राप्तिकी आशामें मुँहसे निकल रही थी। हमारे रसिक शेखर प्रभु सर्वज्ञ हैं, सब समझते-बूझते हैं। वे उस रास्तेके किनारे खड़े होकर प्राणप्रियाके मुखचन्द्रकी ओर एकटक देख रहे हैं—

"गौरचन्द्र लक्ष्मी प्रति चाहे एक दिठे।"

वे अपनी प्रियतमाकी अनिन्दित रूप-सुधा पान करके मन-प्राणोंको तृप्त कर रहे थे। चारों ओर बिखरे मुक्ताफलने प्रभुकी चरण-धूलिको स्पर्श किया। प्रभु जहाँ खड़े थे, देवी मुक्ताफल ढूँढ़नेके बहाने वहाँ जानेसे न हिचकीं। गौरकिशोर उनको देखकर जरा पीछे हटे। उनका उद्देश्य कुछ और लीला देखनेका था। देवीकी परिहास-प्रिय सखियोंने प्रभुको और भी थोड़ा हट जानेके लिए कहा। शचीनन्दन प्रियतमाकी सखियोंके आदेशको अमान्य न कर सके। वे थोड़ा और पीछे हट कर खड़े हो गए। सुयोग पाकर बालिका लक्ष्मीप्रिया, उनके प्राणवल्लभ जहाँ खड़े थे उस परम पवित्र स्थानकी धूलि उठाकर अपने वक्षःस्थल और मस्तक पर धारण करके कृतार्थ हो गयीं। प्रभुकी पद-धूलिको वक्षःस्थल पर धारण करके देवी आनन्दसे द्रवित हो उठीं। उनके प्राण मानो शीतल हो गये। सारे कार्य इशारेसे पूर्ण हो गये। कोई कुछ न समझ सका।

लक्ष्मी ठाकुरानी ताहा इङ्गिते बूझिल।
प्रभु-पाद-पद्म-धूलि मस्तके वन्दिल॥

वर-वरेखी करानेवाले आचार्य वनमाली

गङ्गाके घाटके रास्तेमें जब शचीनन्दन अपनी प्राणप्रियतमा लक्ष्मीदेवीके साथ अव्यक्त रूपसे इस प्रकार लीलारङ्ग-रसमें मग्न थे, उस समय नवद्वीपके वनमाली आचार्य भी वहाँ उपस्थित थे। वे भक्तिशास्त्रके अच्छे पण्डित थे, उनकी उपाधि थी कविराज। उनका व्यवसाय था विवाह सम्बन्ध करानेमें अगुआयी करना। ये वनमाली आचार्य श्रीकृष्ण लीलामें श्रीराधिकाकी प्रिय सखी चित्रा थे। श्रीगौराङ्ग अवतारमें वे वनमाली आचार्यके रूपमें नदियामें जन्मे थे। वे श्रीगौराङ्ग प्रभुके बड़े ही प्रिय अन्तरङ्ग भक्त थे। जैसा श्रीगौरगणोद्देश दीपिकामें लिखा है—

वेशविन्यासमकरोद्राधायां चित्रा व्रजे पुरा।
सेदानीं कविराज श्रीवनमाली प्रभोः प्रियः॥

श्रीपाद वनमाली आचार्य ठाकुर बड़े ही चतुर थे । अपने पूर्व स्वभावके अनुसार उन्होंने श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाका रसरङ्ग देखकर उनके मनके आन्तरिक भावको समझा । वे शचीनन्दनके मुखचन्द्रकी ओर देखकर कुछ हँसे । प्रभुने भी मुस्कराकर मानो इस शुभ विवाहमें सम्मतिकी सूचना देते हुए उनको नमस्कार किया।

आचार्य से वनमाली बड़इ चतुर ।
बूझिल अन्तर दोंहार हृदय अंकुर ।।

वे वनमाली आचार्य बड़े चतुर थे, दोनोंके हृदयके भीतर जो अंकुर जमा है उसको समझ गए।

ये वनमाली आचार्य ही प्रभुके प्रथम विवाहके घटक 'अगुआ' बने । उनके द्वितीय विवाहके 'अगुआ' थे काशीनाथ पण्डित।

द्वितीय अध्याय

शुभ विवाहकी सूचना

घटक* हइया तुमि करह सम्बन्ध ।
एइ कथा कहिया चलिला गौरचन्द्र ॥

प्रभु वाक्य (ज० चै० मं०)

सम्बन्धकी योग्यता

श्रीपाद वल्लभाचार्यका निवास स्थान नवद्वीपके दक्षिणपाड़ामें था । श्रीपाद जगन्नाथ मिश्र पुरन्दरके घरसे उनका घर बहुत अधिक दूर न था । आचार्यकी गृहिणी और शचीदेवीमें परस्पर परिचय था । अपनी कन्या श्रीमती लक्ष्मीप्रियाको विवाह योग्य अवस्थामें देखकर श्रीपाद बल्लभाचार्य—पति-पत्नी दोनों विशेष चिन्तित थे । आचार्य महाशय कन्याके योग्य वर खोजनेमें व्यस्त थे । उसी समय नवद्वीपके वनमाली आचार्य प्रभुकी प्रेरणासे उनके शुभ विवाहके लिए घटक* (अगुआ) बने ।

शचीनन्दन अभी सोलहवें वर्षमें पदार्पण कर रहे हैं । उनमें यौवनके उद्गमके सारे लक्षण प्रायः दिखलायी देने लगे हैं । अङ्गकी कान्ति दिन-प्रतिदिन परिपूर्ण और परिवर्द्धित हो रही है । प्रत्येक अङ्गकी शोभा प्रतिदिन बढ़ रही है । गौरचन्द्र पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान परिपूर्णतम स्वाभाविक सौन्दर्य छटासे नवद्वीप गगनमें उदित हो रहे हैं । उनकी अपरूप रूपराशिसे नदियावासियोंका हृदय-गगन उद्भासित है । ऐसी रूपकी छटा तो कभी किसीने नहीं देखी । नदियावासी सभी स्त्री-पुरुषोंके नेत्र शचीनन्दनकी अनुपम अपरूप रूपराशिके ऊपर पड़ रहे हैं । आबाल-वृद्ध-युवा सभीका एक मात्र लक्ष्य शचीनन्दनकी अपूर्व रूपराशिके ऊपर है । ऐसा रूपवान भी मनुष्य हो सकता है, यह वे नहीं जानते थे ।

* विवाह सम्बन्ध जुटानेवालेको बङ्गालमें घटक कहते हैं ।

लक्ष्मीप्रिया दस वर्षकी बालिका हैं। वह अपने पिताकी एक मात्र कन्या हैं। आचार्यजीकी आर्थिक दशा उतनी अच्छी नहीं है । ब्राह्मण पण्डितकी अवस्था साधारणतः जैसी होती है श्रीपाद वल्लभाचार्यकी अवस्था भी वैसी ही है । उनके सिर पर कन्यादानका भार आ गया है । सुखमें पत्नी कन्या परम सुन्दरी है। रूप और गुणमें ऐसी दूसरी कन्या नदियामें खोजनेसे नहीं मिल सकती । सभी लक्ष्मीप्रियाको स्नेहकी दृष्टिसे देखते हैं। उनके रूप और गुण पर सारे नदियावासी मुग्ध हैं।

शचीनन्दन इस अल्पावस्थामें ही गणमान्य पण्डित हो गये हैं, परन्तु अब भी अध्ययन नहीं छोड़ा है। अभी नदियाके लोग उनको निमाई पण्डित कहकर सम्बोधन करते हैं । इस अल्प आयुमें ही निमाई पण्डित सारे नवद्वीपके लोगोंके सम्मानके भाजन हो गये हैं।

वनमाली आचार्य भी नवद्वीपके एक पण्डित हैं। निमाई पण्डितको वे विशेष रूपसे जानते हैं। वे प्रभुके पिताकी अपेक्षा आयुमें बहुत छोटे हैं । शचीमाताको माँ कहकर पुकारते हैं । निमाई पण्डित उनके लिए कनिष्ठ भाईके समान स्नेहकी वस्तु हैं।

वनमाली घटक और प्रभु

उस दिन गङ्गाके घाट पर हमारे रंगीले प्रभुने बालिका लक्ष्मीप्रियाके साथ मोतीके बहाने जो लीला की थी, वनमाली आचार्यने उसे अपनी आँखों देखकर प्रभुके मनको समझ लिया । निमाई पण्डितको विवाह करनेकी इच्छा हो गयी है, यह बात चतुर वनमाली आचार्यके समझनेसे बाकी न रही । प्रभुकी लीला देखकर दोनों जने जब दो ओर अपने-अपने घर जा रहे थे, तब वनमाली आचार्यने नवबाला लक्ष्मीप्रियाको उद्देश्य करके कहा था—

चलह मन्दिरे लक्ष्मी मनेर सन्तोषे।	हे लक्ष्मी ! मनको संतुष्ट कर घर
विधि अनुकूल तोरे विभा एइ मासे॥	चलो, विधि तुम्हारे अनुकूल है इसी
(ज० चै० मं०)	मास तुम्हारा विवाह होगा।

प्रभु जब यह लीला करके घर जा रहे थे तो दूसरे मार्गसे वनमाली आचार्य उनसे मिले। निमाई पण्डित बड़े उद्धत हैं—यह बात वे जानते थे । उनको देखकर तनिक हँसकर वनमाली आचार्य उनके पास आकर खड़े हो गये । प्रभु प्रियाके दर्शनसे प्रेमावेशमें आजानुलम्बित भुज-युगल प्रेमपूर्वक डुलाते हुए नदियाके मार्ग पर हँसते-हँसते चल रहे थे । अपने सामने वनमाली आचार्यको देखते ही प्रभुको

आत्म विस्मृति हो गयी। वे एक बारगी प्रेम-विह्वल होकर मनकी बात बोल उठे। वनमाली आचार्य उनके अन्तरङ्ग भक्त हैं, निज जन हैं। उनके सामने फिर लज्जा क्या? प्रभु प्रेम-विस्फारित नेत्रोंसे वनमाली आचार्यकी ओर देखकर गद्‌गद् बचन बोले—"अहो पण्डित! वल्लभाचार्यकी कन्या लक्ष्मीप्रिया शङ्करकी पूजा क्यों करती है?"

"गौराङ्ग जिज्ञासे लक्ष्मी शङ्कर पूजे?"

वनमाली आचार्य प्रभुकी अपेक्षा उम्रमें बहुत बड़े थे। वे इस बातका क्या उत्तर देते? उन्होंने मन ही मन सब कुछ समझ लिया। दोनोंने एक दूसरेके मनके भावको इशारेसे समझा—

"मनेर अनुभव सब इङ्गिते बूझे।"

दोनों एक दूसरेके मुँहकी ओर देखकर मुस्कराने लगे। उस मुस्कराहटका मर्म समझने वाला कोई आदमी वहाँ न था।

प्रभुने फिर वनमाली आचार्यसे कहा—"अहो पण्डित! तुम मेरे शुभविवाहके घटक (अगुआ) बनकर सम्बन्ध ठीक करो।" इतना कहकर वे घर चले गये।

घटक हइया तुमि करह सम्बन्ध।
एइ कथा कहिया चलिला गौरचन्द्र॥

(ज० चै० मं०)

वनमाली आचार्य प्रभुके इस प्रकारके सरल और निष्कपट गुप्त प्रेमादेशको प्राप्त कर मन ही मन बड़े ही सन्तुष्ट हुए। आनन्दित मनसे उस दिन वे वहाँसे घर गये। ये सब बातें उन्होंने किसीसे नहीं कहीं, क्योंकि यह प्रभुका गुप्त आदेश था।

वनमाली और शचीमाता

दूसरे दिन प्रातःकाल वनमाली आचार्य शचीदेवीके पास उनको प्रणाम करके दूसरी बातें करनेके बाद प्रसङ्गवश कहने लगे—"माँ! आपके निमाईकी अवस्था विवाह योग्य हो गयी है। इस नवद्वीपमें ही उसके उपयुक्त सर्व सुलक्षणसे युक्त परम रूपवती एक कन्या है। यह कन्या सर्वथा आपके निमाई चाँदके योग्य है। वल्लभाचार्यकी कन्या लक्ष्मीप्रियाको आपने देखा है। इसमें आपका क्या विचार है?"

आइरे बोलेन तबे बनमाली आचार्य्य।
पुत्र विवाहेर केन ना चिन्तह कार्य्य॥
वल्लभ आचार्य्य कुले शीले सदाचारे।
निर्दोषे वैसेन नवद्वीपेर भीतरे॥

तब वनमाली आचार्य मातासे बोले—"पुत्रके विवाह कार्यकी चिन्ता क्यों नहीं करतीं? वल्लभ आचार्यका कुल नवद्वीपमें शील और सदाचारमें निर्दोष है।

तान कन्या लक्ष्मीप्रिया रूपे शीले माने । से सम्बन्ध कर यदि इच्छा हय मने ॥ (चै० भा०)	उनकी कन्या लक्ष्मीप्रिया रूप, शील और मानवाली हैं, यदि आपकी इच्छा हो तो वह सम्बन्ध कर लेवें।"

निमाईचाँदके शुभ-विवाहके सम्बन्धकी बात सुनकर शचीमाता कुछ देर निस्तब्ध होकर कुछ सोचने लगीं। उनको परलोकगत अपने पतिकी बात याद आई। निमाईचाँदके शुभविवाहके सम्बन्धकी बात हो रही है, अहा ! आज मिश्र पुरन्दर ठाकुर जीवित होते तो कितना आनन्द होता ! शचीदेवी बड़ी बुद्धिमती हैं। उन्होंने अपने मनका भाव प्रकट नहीं किया। मनका दुःख मनमें ही दबा रखा। उन्होंने वनमाली आचार्यसे कहा—

पितृहीन बालक आमार । जीउक पड़ुक* आगे तबे कार्य्य आर ॥ (चै० भा०)	मेरा पितृहीन बालक अभी जीवे और पढ़े, तब पीछे देखा जायगा।

शचीमाताके मुँहसे यह बात सुनकर वनमाली आचार्यके मनमें बड़ा ही दुःख हुआ। वे और कुछ न कहकर विषण्ण मुख होकर वहाँसे घरकी ओर चले। राह चलते चलते वे मानसिक दुःखसे रो पड़े। 'हा गौराङ्ग !' कहकर वे दारुण मानसिक व्यथासे व्याकुल होकर रोने लगे—

शुनिया आचार्य्य तवे सन्तोष ना पाइल ।
विरस वदन हइया घरेते चलिल ॥
काँदिते काँदिते चले व्याकुल अन्तरे ।
हा हा गौरचाँद बलि डाके उच्चैः स्वरे ॥
(चै० मं०)

कृपालु पाठकवृन्द यहाँ पूछ सकते हैं कि निमाई पण्डितका विवाह-सम्बन्ध ठीक न होने पर अगुआके मनमें इतना दुःख क्यों हुआ ? वे इससे इतना क्यों रोये ?

यह बात बड़ी ही गूढ़ है। पहले कह चुका हूँ कि वनमाली आचार्य श्रीकृष्ण-लीलामें चित्रा सखी थे। युगल-सेवा-भिखारिणी चित्रा श्रीराधिकाजीकी प्रिय सखी थीं। श्रीगौराङ्ग-लीलामें उन्होंने बड़ी साध करके अगुआके रूपमें वनमाली आचार्यके वेषमें श्रीगौराङ्गकी युगल-सेवा करनेके लिए नदियामें जन्म ग्रहण किया था। उसी साधको पूर्ण करनेका समय उपस्थित हुआ था। शचीमाताकी सम्मति न मिलने पर उनकी इस साधमें बाधा पड़ी। यह दुःख अमिट था। वनमाली आचार्यके हृदयमें

* पढ़े

गहरी चोट लगी है। इसी कारण वे व्याकुल होकर रो रहे हैं। वे पुरुष होकर भी स्त्रीके समान रोने लगे और रोते-रोते प्रभुका स्तव करने लगे।

"मोर भाग्ये ना करिले पतित पावन।
बाञ्छा-कल्पतरु नाम धर कि कारण॥

हे पतित पावन! मेरे भाग्यमें यह सेवा नहीं बदी थी, तब बाञ्छा-कल्पतरु नाम क्यों धरा?

मोर बाञ्छा पूर्ण यदि ना कले आपने।
बाञ्छा-कल्पतरु नाम धरिले केमने॥

यदि आपसे मेरी बाञ्छा पूर्ण करना नहीं हो सका तो बाञ्छा कल्पतरु नाम कैसे धरा?

जय जय द्रौपदीर लज्जा-भय हारी।
जय गजराजके कुम्भीर मुखे तारी॥

हे द्रौपदीके लज्जाभयहारी! तुम्हारी जय हो, मकरके मुँहसे गजराजका उद्धार करने वाले आपकी जय हो।

जय अजामिल गणिकार त्राणदाता।
आमारे जे त्राणकर अखिलेर पिता॥"
(चै० मं०)

अजामिल और गणिकाके त्राणदाताकी जय हो, हे अखिल जगतके पिता! मेरा भी त्राण करो।

प्रभु और वनमाली

यह हमारे रंगीले प्रभुकी एक लीलामात्र है। उनको लीलारङ्ग बहुत प्रिय है। इसी कारण उन्होंने यह लीला की। हमारे सर्वज्ञ प्रभु सब कुछ जानते हैं। उनको जाननेको कुछ बाकी नहीं रहता। भक्त-वत्सल प्रभुके कानोंमें भक्तका रुदन पहुँचा। प्रभु उस समय गङ्गादास पण्डितके घर विद्यारसमें मग्न थे। झटपट पुस्तक बाँधकर अध्यापककी वन्दना करके शचीनन्दन भक्तकी खोजमें नदियाके रास्तों पर निकले।

एथा गुरु गृहे प्रभु जानिला अन्तरे।
आचार्य्य शोकेते जत हइयाछे कातरे॥
आस्ते व्यस्ते पुस्तक सम्वरि भगवान।
गुरु सम्भाषिया प्रभु करिल पयान॥
(चै० मं०)

इधर गुरुगृहमें प्रभुने अपने अन्तरमें सब जान लिया कि वनमाली आचार्य शोकसे कितने कातर हैं। गौर भगवानने झटपट अस्त-व्यस्त पुस्तकें बाँधी और गुरुसे आज्ञा लेकर प्रभु चल पड़े।

निमाई पण्डित नदियाके बहुत भीड़-भाड़वाले रास्तेसे निकले। सबकी दृष्टि उनकी अनिन्दित अपरूप रूपराशिके ऊपर है। मत्त हाथीके समान सब लोगोंके भीतरसे होकर, निखिल जगतको मोहनेवाली अपरूप-रूपच्छटासे नदियाके पथको आलोकित करके, कुटिल कुञ्चित केशदामसे सुशोभित प्रफुल्लित मुखकमलसे मधुर मन्द मुस्कराते हुए शचीनन्दन शीघ्रतापूर्वक चले जा रहे हैं। चन्दन-चर्चित-सुवलित श्रीअङ्गकी शोभासे मार्गमें लोग विमोहित होकर उनके मुखचन्द्रकी ओर एक दृष्टिसे

ताकते हैं। ठाकुर लोचनदासकी भाषामें प्रभुके तत्कालीन रूपका वर्णन श्रवण कीजिए।

मातिल कुञ्जर जेन गमन सुन्दर।
गौरतनु अलङ्कारे करे झलमल॥

मतवाले हाथीकी सी सुन्दर चाल है गौर शरीर पर अलङ्कार झलमल कर रहे हैं।

चाँचर केशेर वेश अखिल मोहन।
अधर बान्धुली कुन्द मुकुता दशन॥

कुञ्चित केशोंकी शोभा सबको मोहनेवाली है। बन्धूलि पुष्प सदृश ओष्ठ तथा कुन्द एवं मुक्ता जैसी दन्त पंक्ति है।

चन्दने चर्चित मनोहर अङ्ग शोभा।
तनु सुख-वसन-पिन्धन मनो लोभा॥

चन्दन चर्चित मनोहर अङ्ग-शोभा एवं शरीरके सुन्दर वस्त्र सबका मन लुभा रहे हैं।

कत कोटि कामेर नृपति गौर हरि।
कुलवती - कलङ्क - विथार - देहधारी॥
(चै० मं०)

गौरहरि कई करोड़ों कामदेवोंके नृपतिसे हैं। मानों कुलवतीके कलङ्कका विस्तार करनेको देह धारण किया है।

मार्गमें जहाँ वनमाली आचार्य विषण्ण-वदन खड़े हैं, प्रभु चुपकेसे वहीं जाकर खड़े हो गये। वनमाली आचार्य तल्लीन होकर प्रभुकी युगल-विलास-लीलाका स्मरण कर रहे थे तथा प्रमावेशमें अजस्र आँसू बहा रहे थे। प्रभुको सामने देखते ही वे विह्वल होकर चरणोंमें गिर पड़े। प्रभुने मधुर हँसी हँसकर हाथ पकड़कर उन्हें उठाया और आदर पूर्वक यथाविधि नमस्कार करके गाढ़ प्रेमालिङ्गन दानकर कृतार्थ किया। जब वनमाली आचार्य प्रकृतिस्थ हुए तो प्रभुने हँसकर पूछा—"पण्डित! तुम कहाँ गये थे?"

पड़िला आचार्य्य पाये दण्डवत् हयआ[1]।
तुलिलेन महाप्रभु हासिया हासिया॥
नमस्कार करि कैल गाढ आलिङ्गन।
कोथा गियाछिला बैल[2] मधुर वचन॥
(चै० मं०)

प्रभु मानो कुछ भी नहीं जानते। चतुर चूड़ामणि बड़ा खेल करते हैं। खेल करना ही उनका कार्य है। यही उनकी लीला है। इस लीला-रसके रसिक भक्तवृन्द ही उनकी इन लीलाओंका मर्म समझ पाते हैं। जो रसिक नहीं हैं वे इन मधुर लीलाओंका मर्म क्या समझेंगे?

१. होकर। २ बोले।

वनमाली आचार्यने इस बार सुयोग पाकर अपने मनकी वेदना प्रभुको कह सुनायी, पूर्ववत चुप न रहे । उन्होंने इस बार सारी बात प्रभुको खोलकर कहदी, और अपने दुःखको हल्का किया।

आचार्य्य कहिल तबे शुन विश्वम्भर ।
आमि गियाछिल एइ मन्दिरे तोमार ।।
तोमार जननी देवी अति सुचरिता ।
गोचर करिलूँ तारे अन्तरेर कथा ।।
तोमार विभार योग्य आछे एक कन्या ।
वल्लभ-आचार्य्य-कन्या सर्व्वगुणे धन्या ।।
ए कथा तोमार माता शुनि श्रद्धाहीन ।
घरेते चलिल आमि अन्तर मलिन ।।
(चै० मं०)

तब आचार्य बोले—"हे विश्म्भर सुनो, मैं तुम्हारे घर अभी गया था। अति सुन्दर चरित्र वाली तुम्हारी जननीके कानोंमें मैंने अपने मनकी यह बात कही कि तुम्हारे विवाह योग्य एक कन्या है जो वल्लभ आचार्यकी पुत्री सब गुणोंसे धन्य है। तुम्हारी माताने यह बात श्रद्धाहीन होकर सुनी। इससे मैं उदास मनसे घरकी ओर जा रहा हूँ।"

वनमाली आचार्यके मुँहसे अपने शुभ-विवाहकी बात सुनकर प्रभु मुस्कराये और कुछ न कहकर तत्काल घरकी ओर चल दिये । भक्त और भगवानका मिलन हुआ। भगवानने भक्तके दुःखको सुना और समझा; परन्तु कुछ उत्तर नहीं दिया । परन्तु भक्तने भगवानके तत्कालीन भावको देखकर समझा कि उनकी अभिलाषा पूर्ण होगी। भक्त जिस प्रकार भगवानको पहचानते हैं, भक्त जिस प्रकार भगवानके मनका भाव बूझते हैं, योगी-ऋषि लोग भी उसे नहीं समझ पाते । भक्त-वत्सल भगवान भक्ताधीन हैं। भक्त-वाञ्छा पूर्ण करनेमें वे किस प्रकार तत्पर रहते हैं, यह प्रभुके इस कार्यके विलक्षण रूपसे समझ सकते हैं । वनमाली आचार्यने समझा कि उनका कार्य सिद्ध हो गया है। वे प्रेमानन्दमें हँसते हँसते घर आये ।

किछू ना बलिल* प्रभु शुनिया वचन ।
मुचकि हाँसिया घरे करिला गमन ।।
(चै० मं०)

सुनकर प्रभु कुछ भी नहीं बोले और हँसकर अपने घरकी ओर चल पड़े ।

इस कार्यमें वनमाली आचार्य प्रभुका मन देखकर और कार्य-सिद्ध समझकर अपने घर गए। भगवानकी चतुराई भक्तके समझने-बूझनेके लिए बाकी न रही ।

से चातुरी लावण्य मधुर मन्द हासि ।
हेरिया आचार्य्य मने हैला अभिलाषि ।।
जानिलेन मोर कार्य्य अवश्य हइब ।
अन्तरे जानिल प्रभु विवाह करिब ।।
(चै० मं०)

उस चातुरी और लावण्यमय मधुर हँसीको देखकर आचार्य मनमें प्रसन्न हुये और समझ गये कि मेरा कार्य अवश्य होगा तथा मनमें जान गये कि प्रभु बिवाह करेंगे ।

* बोले।

प्रभु और माता

प्रभु घर आए और माताके पास जाकर बैठे। शचीमाता अपने हृदय-धनको पास देखकर गोदमें लेकर बैठ गयीं। स्नेहपूर्वक स्नेहमयी माता पुत्रके शरीर पर हाथ फेरने लगीं। प्रभुने अपने सुन्दर मुखचन्द्रको अवनत करके पूछा—"माँ! आज वनमाली आचार्य हमारे घर आये थे, तुमने उनको क्या कह दिया है? रास्तेमें उनको मैंने खिन्न देखा है, उनके साथ बातें करके प्रसन्नता नहीं हुई। उनके असन्तोषका कारण क्या है?"

घरे आसि जननीरे बंल* विश्वम्भर।
वनमाली आचार्य्येरे कि दिला उत्तर॥
विमना देखिलूँ आमि ताँरे पथ जाइते।
सम्भाषे ना हैल सुख ताँहार सहिते॥
ताँर असन्तोष केने करियाछ तुमि।
विमना देखिया चित्ते दुःख पाइ आमि॥
(चै० मं०)

घर आकर विश्वम्भर मातासे बोले—"माँ! वनमाली आचार्यको तुमने क्या कह दिया? मैंने उन्हें पथमें जाते हुए उदास देखा है और उनके साथ सम्भाषणमें मुझे सुख नहीं हुआ। तुमने उनको अप्रसन्न क्यों कर दिया? उनको उदास देखकर मेरे मनको दुःख हुआ।

शचीमाताको पुत्रकी बात सुनकर पुत्रके मनके भावोंका संकेत मिल गया। वे बुद्धिमती और सुचतुर थीं। निमाई चाँदकी इस विवाहमें सम्मति है, यह जानना उन्हें बाकी नहीं रहा। वे मन ही मन बहुत आनन्दित हुईं। उसी समय वनमाली आचार्यको बुलानेके लिए आदमी भेजा। यह देखकर शचीनन्दन माताकी गोदसे उछलकर घरसे बाहर आ गए और सोलह वर्षकी अवस्थाके नवयुवक बालकके समान दौड़ते-दौड़ते फिर नदियाके मार्गपर निकल पड़े।

वनमाली आचार्यके साथ प्रभुने जो रङ्ग किया था, उसी रङ्गका अभिनय अपने द्वितीय विवाहके अगुआ श्रीकाशीनाथ पण्डितके साथ भी किया था। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके साथ शुभ विवाहका सम्बन्ध हो जाने पर प्रभुने कहा था कि वे इस विवाहके बारेमें कुछ भी नहीं जानते। इधर उनकी माता काशीनाथ पण्डितके द्वारा यह सम्बन्ध ठीक करके सारा प्रबन्ध करने लगीं। कन्याके पिता श्रीपाद सनातन मिश्र और उनकी गोष्ठीके लोग प्रभुकी इस बातसे किस प्रकार दुःखित हुए थे तथा कितना रोए थे, यह श्रीचैतन्य भागवतमें वर्णित है। इस बार वनमाली आचार्यको रुलाकर हमारे रंगीले प्रभुने उसी प्रकारका रङ्ग किया। श्रीभगवान अपने अन्तरङ्ग भक्तोंकी भी परीक्षा किए विना नहीं छोड़ते। प्रभुके इन दोनों कार्योंसे यह सम्यक रूपसे सिद्ध हो जाता है।

---

* बोले।

इधर शचीमाताके आह्वानसे वनमाली आचार्य मिश्रजीके घर आकर उपस्थित हुए ।

त्वराय मानुष गेला आचार्य्य आनिवारे ।
संवाद सुनिया तेंहो आइला सत्वरे ।।
(चै० मं०)

आचार्यको बुलानेको शीघ्रतापूर्वक आदमी गया और वे भी समाचार पाकर जल्दी आ गए ।

आज उनका मन बड़ा आनन्दित है, मुँहमें हँसी नहीं समा रही है । आनन्दसे गद्‌गद् होकर शचीमाताको प्रणाम करके चरणोंकी धूलि ले ली । शचीमाताने उनको आशीर्वाद देकर बैठनेके लिए कहा । वनमाली आचार्यने शचीमातासे कहा—

"कि कारणे आज्ञा मोरे करिला ईश्वरी ।"

हे ईश्वरी ! मुझे किसलिए बुलाया है ।

तब शचीमाताने स्नेहपूर्वक उनसे कहा :—

पुरुबे जे बँले तार करह उद्योग ।
गोरा चाँदेर विभा दिव सभार सन्तोष ।।

पूर्वमें जो तुमने कहा था उसका प्रयत्न करो, गौरचाँदका विवाह करूँगी इससे सबको प्रसन्नता होगी ।

आमार अधिक स्नेह तोर विश्वम्भरे ।
आपने करिबे सर्व्व कि बलिब तोरे ।।

तुम्हारा विश्वम्भरके प्रति मुझसे भी अधिक स्नेह है, मैं तुमको क्या कहूँ, सब कुछ कार्य तुम्हें ही करना होगा ।

विश्वम्भर विवाह निमित्ते जे कहिले ।
आपने उद्योग कर कहिल तोमारे ।।
(चै० मं०)

तुमने विश्वम्भरके विवाहके निमित्त जो कहा था उसका तुम्हीं स्वयं सब उद्योग करो ।

वनमाली आचार्य तो यह बात पहले ही समझ चुके थे । अब शचीमाताके मुखसे यह शुभ संवाद सुनकर आनन्द-सागरमें हिलोर लेने लगे । वे शचीमाताकी आज्ञा शिरोधार्य करके श्रीपाद वल्लभाचार्यके घरकी ओर चले । शचीमातासे बोले—

'पालिब तोमार आज्ञा' कहिल वचन ।

'तुम्हारी आज्ञाका पालन करूँगा'— ऐसे वचन बोले ।

वल्लभाचार्यके घर वनमाली

दिक्-विदिक्-ज्ञानशून्य होकर मनमें हर्षित होकर वनमाली आचार्य नदियाके मार्ग पर चले जा रहे हैं । आनन्दके मारे उन्हें यह भी ध्यान नहीं कि वे किधर जा रहे हैं । उनके मनके आनन्दको दूसरा कौन समझेगा ? उनके इस जीवनकी मनकी साध पूरी होनेका समय आ गया है । वे श्रीगौराङ्गके युगल-विलासका दर्शन करके अपने नेत्रोंको सार्थक करेंगे । श्रीकृष्णावतारमें वे श्रीश्रीराधाकृष्णके युगल-विलास-रसमें दिन रात मग्न रहते थे । श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया-युगल-विलास रसास्वादनके लिए ही उनका नदियामें आगमन हुआ था । आज उनके इसी शुभ दिनका

उदय हुआ है। श्रीगौर भगवान उनकी मनोवाञ्छा पूरी करेंगे। इस आनन्दसे उन्मत्त होकर वे आज श्रीपाद वल्लभाचार्यके घरकी ओर चले जा रहे हैं। मनमें सोचते हैं कि मार्गमें यदि एक बार और निमाई पण्डितके साथ साक्षात्कार हो जाता तो बहुत अच्छा होता। परन्तु ऐसा हुआ नहीं। इसका एक कारण है। अल्पबुद्धि होने पर भी इतना तो हम समझते ही हैं कि महाप्रभु हमारे जैसे मनुष्यके रूपमें ही नदियामें अवतीर्ण हुए थे। मनुष्य जो सोचता है, जो करता है, वे भी वही सोचते और करते थे। वे कभी-कभी लोकातीत अलौकिक कार्य जरूर करते थे, परन्तु हमारी जैसी मानव-बुद्धिसे साधारण मानवकी तरह कार्य करना उनको बड़ा प्रिय था। इससे उनके मनमें बड़ा सुख होता था। इस सुखकी लालसासे ही श्रीगौरभगवानने नराकार धारण करके गृहस्थ-धर्मका अवलम्बन किया था।

निमाई पण्डित घरसे बाहर निकलकर गङ्गाके घाट पर जाकर अपने साथियोंके साथ विद्या-रसमें मग्न थे। वनमाली आचार्यको उन्होंने पहले कुछ नहीं कहा। माताके साथ परामर्श किये बिना कहते ही क्या ? इसी कारण उस समय अपने विवाहके सम्बन्धमें बात केवल सुनली, उत्तर कुछ नहीं दिया। हमारे प्रभु सर्वज्ञ हैं। माताके पास जाकर वनमाली आचार्यने क्या कहा, तथा माताने क्या उत्तर दिया, सर्वज्ञ प्रभु सब जानते हैं। वनमाली आचार्य दीर्घश्वास लेकर श्रीपाद वल्लभाचार्यके घरकी ओर चल पड़े हैं, यह भी वे जानते हैं। रास्तेमें जा रहे हैं और इधर-उधर प्रभुको खोज रहे हैं, यह भी प्रभुको अविदित नहीं। प्रभु दिखलायी दे सकते थे, परन्तु ऐसा नहीं किया। क्योंकि इस समय भक्त-भगवानके मिलनमें बहुत बातें होंगी, मूल कार्यमें बाधा पड़ेगी, शुभकार्यमें विलम्ब होगा। यह निमाई पण्डित होने देना नहीं चाहते। वे इस विवाहके लिए उन्मत्त हो गये हैं। जितना शीघ्र शुभकर्म सम्पन्न हो उतना ही अच्छा है। यही सोचकर उन्होंने वनमाली आचार्यको दर्शन नहीं दिया। यह साधारण मानव-बुद्धिका कार्य है। प्रभु हम लोगोंके समान मनुष्य होकर नदियामें अवतीर्ण हुए थे। उनमें साधारण मानव-बुद्धि होनेमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। महर्षि महाजनगण कह गये हैं, "सर्वोत्तम नरलीला"। नरलीलामें श्रीभगवानके ऐश्वर्यका लेश भी नहीं होता, सब माधुर्य-रसमय, सब मधुर होता है। श्रीभगवान मनुष्यके समान कार्य करते हैं, वे मानव-बुद्धिसे परिचालित होते हैं, इसकी अपेक्षा मधुर तत्त्व और क्या है ? इन सारे लीला रसोंको लेकर ही तो श्री भगवानके अवतारकी लीला कहानी रची जाती है। लीलाग्रन्थ इन्हीं सब कथाओंसे पूर्ण होते हैं। भगवत्तत्व नरतत्वमें मिश्रित होकर अवतार तत्वके नामसे शास्त्रमें कीर्तित हुआ है।

वनमाली आचार्य श्रीपाद वल्लभाचार्यके घर पहुँच गये। दोनों ही पण्डित हैं, दोनों ही बन्धु हैं। श्रीपाद वल्लभाचार्यने बहुत दिनोंके बाद बन्धुवरको अपने घर पाकर

बैठनेके लिए बहुत सम्मानपूर्वक आसन दिया, और कुशल-समाचार पूछा। अपने घर आगमनको सौभाग्य कह कर उन्होंने विनम्र बचनसे बन्धुवरको तुष्ट किया। वनमाली आचार्य बन्धुवरके सप्रेम वचन सुनकर हँसते हँसते बोले :—

सर्व्वकाले आमारे तुमि करह स्नेह ।
स्नेह बन्दी हआ आइलुं तुया गेह ॥

आप सब समय मुझ पर स्नेह रखते हैं। आपके स्नेहसे बँधकर मैं आपके घर चला आया।

मिश्र पुरन्दर पुत्र श्रील विश्वम्भर ।
कुले शीले गुणे तेंह सर्व्वांशे सुन्दर ॥

पुरन्दर मिश्रजीके पुत्र श्रीविश्वम्भर कुल, शील एवं गुण सब प्रकारसे सुन्दर हैं।

आमि कि बलिते पारि ताँर गुणकथा ।
एकत्र सकल गुणे गड़िल विधाता ॥

मैं उनके गुणकी कथा आपको क्या बताऊँ ? विधाताने उन्हें सब गुणोंसे युक्त बनाया है।

कि कहिब ताँर गुण गाय सर्व्वलोके ।
शुनियाछ ताँर गुण सर्व्वलोक मुखे ॥

क्या बताऊँ, उनके गुणोंकी सब लोग प्रशंसा करते हैं। मैंने सब लोगोंके मुखसे उनके गुणकी बातें सुनी हैं।

जेन रूप कन्या तोमार ततोधिक वर ।
कहिल सकल इबे जे देह उत्तर ॥
(चै० मं०)

आपकी कन्या जैसी (गुणवती) है उससे अधिक (गुणशाली) वर है। मैंने सब कुछ निवेदन कर दिया है, अब जो कुछ उचित समझें उत्तर दें।

तोमार कन्यार योग्य सेइ महाशय ।
कहिलाम एइ कर यदि चित्ते लय ॥
(चै० भा०)

वे महाशय आपकी कन्याके अनुरूप हैं। मैं तो कहता हूँ कि यदि आपका चित्त भी स्वीकार करता हो तो (इस सम्बन्धको) करलो।

श्रीपाद वल्लभाचार्य यह शुभ सम्बन्ध सुनकर आनन्दसे गद्गद् हो उठे। अपने अदृष्टको सुप्रसन्न जानकर इष्टदेवका स्मरण किया। आचार्य-गृहिणी पासके घरमें थीं। बन्धुवरकी अनुमति लेकर आचार्य महाशयने कुछ देरके लिए अन्तःपुरमें प्रवेश किया। गृहिणीसे सारी बातें खोलकर कह दीं। पति-पत्नीके आनन्दकी आज सीमा नहीं है। निमाई पण्डित उनके जामाता बनेंगे, उन्होंने कभी स्वप्नमें भी यह बात नहीं सोची थी। अपने प्रति नारायणकी कृपाका स्मरण करके प्रेममें गद्गद् होकर प्रेमाश्रुवर्षण करने लगे।

दशम् वर्षीया नवबाला लक्ष्मीप्रियाने सारी बातें सुनलीं। नवानुरागिणी नव अनुरागमें विभोर हो उठीं। उनके सुन्दर अनिन्दित मुखचन्द्रने नवानुरागकी रक्तिम आभामें अपूर्व शोभा धारण की। वे माताकी ओर मुँह उठाकर नहीं देख पा रही हैं। कहाँसे लज्जाने आकर उनको विषमरूपसे अभिभूत कर लिया। वे घरके

एक कोनेमें बैठकर माता-पिताकी ओर पीठ करके मुँह नीचा करके न जाने क्या करने लगीं, इसको वे ही जानें। बालिकाके मनमें उस समय श्रीगौराङ्गकी मदन-मोहन-रूप-राशि अकस्मात जाग उठी। वे नवानुरागमें प्रेमानन्दमें विभोर होकर बैठी हैं। नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीकी तात्कालिक अवस्थाके साथ रसिक भक्त कवि वासुघोषके निम्नलिखित सर्व-जन-विदित अति-सुन्दर पदका बहुत कुछ साहश्य देखा जाता है।

निरमल गोरा तनु, कषित काञ्चन जनु
हेरइते पड़ि गेलुँ भोर।
भाङ् भुजङ्गमे दंशल मझु मन
अन्तर काँपये मोर॥

निर्मल गौर शरीरकी आभा ऐसी प्रतीत हुई मानो कि उनका सम्पूर्ण शरीर स्वर्णखचित हो, उन्हें देखते ही मेरा मन भ्रममें पड़ गया और उसकी ऐसी दशा हुई मानो कि मुझे सर्पने डस लिया हो और मेरा हृदय काँपने लगा।

सजनि ! जब हम पेखलुँ गोरा।
आकुल दिग्विदिग् नाहि पाइये
मदन-लालसे मन भोरा॥

अरी सखी ! गौरचाँदको जबसे मैंने देखा मैं आकुल हो उठी। किसी दिशामें वे नहीं दीखे, तब मेरा मन कामकी लालसासे व्याकुल हो उठा।

अरुणित नयने तेरछ अवलोकने
वरिखे कुसुमशर साधे।
जीवइते जीवने थेह नाहिं पाइलूँ
डुबलूँ गङ्गा अगाधे॥

अरुणारे नयनोंकी तिरछी चितवन कामदेवके कुसुम बाणोंकी वर्षा सदृश थी। अगाध गङ्गामें डुबकी लगाने पर भी जीतेजी (मैं उनकी अथाह रूप-राशिकी) थाह नहीं पा सकी।

मन्त्र महौषधि तुहूँ जानसि यदि
मझू लागि करबि उपाय।
वासुदेव घोष कहे शुन शुन सुन्दरि
गोरा लागि प्राण मोर जाय॥

(अरी सखी !) यदि कोई मंत्र या महौषधि तू जानती हो तो मेरे लिए कोई उपाय कर। वासुदेव घोष कहते हैं कि हे सुन्दरी सुन, गौरचन्द्रके लिए तो मेरे प्राण निकले जा रहे हैं।

बालिका लक्ष्मीप्रिया घरके कोनेमें ही बैठी रहीं। उनके पिताने बाहर आकर घटक महाशय (अगुआ) के साथ फिर शुभ सम्बन्धकी बातें करनी आरम्भ करदीं। उनकी माता द्वार पर बगलमें खड़ी होकर सुनने लगीं।

श्रीपाद वल्लभाचार्यने घटक-चूड़ामणि बन्धुवर वनमाली आचार्यसे कहा,— "पण्डित ! मेरा बड़ा सौभाग्य है, हमारे पूर्व-पुरुषोंका बड़ा पुण्य-प्रताप है, तभी आपने मेरी कन्याके लिये यह शुभ सम्बन्ध स्थिर किया है। मेरा एक विशेष निवेदन है, वह आपसे कहूँगा। मैं दरिद्र ब्राह्मण हूँ, धनहीन। मेरी जो कुछ सम्पत्ति है, वह केवल

यह सुन्दरी कन्या है। आप यदि आज्ञा दें तो मैं अपनी परम दुलारी लक्ष्मीप्रियाको निमाई पण्डितके हाथमें समर्पण करके धन्य हो जाऊँ। आपकी अपेक्षा प्रियबन्धु मेरा दूसरा कोई नहीं है। जिससे यह शुभ कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हो, वह आप अवश्य अवश्य करें।"

आमि धनहीन किछु दिवारे ना पारि।
कन्या मात्र आछे मोर परमा सुन्दरी॥
इहा जानि आज्ञा यदि करेन आपने।
कन्या दिब विश्वम्भर जामता रतने॥
देव पितृगण मोरे हइबे आनन्दे।
जबे विभा दिब निज कन्या गौरचन्द्रे॥
अनेक तपेर फले हय हेन कार्य्य।
तोरेधिक बन्धु नाहिं कहिल आचार्य्य॥

(चै० मं०)

श्रीपाद वल्लभाचार्य दरिद्र ब्राह्मण थे। पञ्च हरीतकी देकर निमाई पण्डितके समान सर्वगुण सम्पन्न पात्रको कन्यादान करेंगे, यह बात बन्धुवर घटक महाशयसे बोलनेमें उनके मनमें लज्जा बोध होने लगी। क्या करें, बोले बिना भी नहीं रह सकते। धनरत्न कहाँ पावेंगे? अतएव शचीदेवीके पास यह बात विशेषरूपसे कहनेके लिए बन्धुवरसे अनुरोध किया। यथा श्रीचैतन्य भागवतमें:—

सबे एक वचन बलिते लज्जा पाइ।
आमि से निर्धन किछु दिते शक्ति नाइ॥
कन्यामात्र दिब पञ्च हरीतकी दिया।
एइ आज्ञा सभे तुमि आनिबे माँगिया॥

वनमाली आचार्यने हँसकर उत्तर दिया, "इसके लिए आप कोई चिन्ता न करें, मैं सब ठीक कर दूँगा।" इतना कहकर उन्होंने बन्धुवरसे विदा ली। विदा होते समय श्रीपाद वल्लभाचार्य और उनकी पुण्यवती गृहिणीको उपलक्ष्य करके घटक महाशयने हँसते-हँसते मृदुस्वरमें कहा:—

धन्य धन्य लक्ष्मी पिता धन्य लक्ष्मीर माता
धन्य धन्य जत बन्धु जने।
× × ×
अनेक जन्मेर तपे जन्म लभिल नवद्वीपे
लक्ष्मी तोमार वंश उद्धारिते॥

(ज० चै० मं०)

सम्बन्धकी निश्चिन्तता

घटक-चूड़ामणि वनमाली आचार्यने शचीके घर आकर शचीमाताको प्रणाम करके सारी बातें कह सुनायीं। शचीमाता जानती थीं कि उनके निमाई चाँदको कन्या पसन्द है, इस विवाह-सम्बन्धमें उनका पुत्र ही वास्तविक घटक है, तब अन्य बातोंकी क्या आवश्यकता है ? उन्होंने वनमाली आचार्यसे स्नेहपूर्वक कहा—"बाबा ! मैं धन-दौलत कुछ भी नहीं चाहती। मेरा सोनेका निमाई चिरजीवी हो ! आप लोगोंके आशीर्वादसे उसको किसी वस्तुका अभाव नहीं हैं। लड़की सुन्दरी और सदाचारिणी है, कुलीन वंशकी कन्या मेरे घर आयेगी, यही मेरा परम सौभाग्य है।"

घटक महाशय पुनः श्रीपाद वल्लभाचार्य के घर चले। वहाँ जाकर शचीमाताने जो कुछ कहा था, उसे दुहरा दिया। बन्धुवरसे बोले—

"सफल हइल कार्य्य कर शुभक्षणे।"

सफलता हुई, शुभक्षणमें कार्य सम्पादन कीजिये।

"शुभ-विवाह इसी महीनेमें सम्पन्न होगा। इधर कुल-ललनाओंमें इस शुभ-विवाहकी बात चुपचाप चलने लगी। श्रीपाद वल्लभाचार्यकी पत्नीका शचीमातासे परिचय था, यह बात पहले कही जा चुकी है। वे इस बीच एक दिन रातको शचीके घर गयीं। साथमें आचार्य महाशय भी थे, परन्तु वे बाहर बैठकमें रह गए। आचार्य गृहिणी शचीमाताके पास बैठकर उनसे बहुत विनतीपूर्वक कहने लगीं कि मेरी कन्याको तुम्हें ग्रहण करना पड़ेगा।"

"सवंशे चलिला यथा शची ठकुरानी।
जोड़ हाथे स्तुति करे लक्ष्मीर जननी॥
तोमार नन्दने आमि दिब कन्याखानि।
आज्ञा लइते आइलाम तोमार गुण शुनि॥"
(ज० चै० मं०)

जहाँ शची ठकुरानी थी वहाँ लक्ष्मीकी माँ परिवार सहित आईं और हाथ जोड़कर उनसे निवेदन किया कि तुम्हारे पुत्रको मैं अपनी कन्यामात्र देवूँगी। तुम्हारे गुणोंकी प्रशंसा सुनकर आज्ञा लेने आयी हूँ।

दोनों समधिनोंकी भेंट

शचीमाताने परम आदरपूर्वक अपनी भावी वैवाहिका (समधिन) को आसन पर बैठाकर उन्हें मधुर भाषणसे सन्तुष्ट किया। आचार्य-गृहिणीके मनमें आज बड़ा आनन्द है। हृदयके आवेगमें वे शची मातासे सारी बातें कह गयीं। बालिका लक्ष्मीप्रियाके बाल्यकालकी बातें आज उनकी माताके स्मृति-पथ पर एक एक करके आने लगीं। उन्होंने निष्कपट भावसे वे सारी बातें शचीमातासे कह डालीं। वे बातें

अति सुन्दर थीं। रसिक भक्तकवि जयानन्द ठाकुरकी भाषामें कृपालु पाठक उसे श्रवण करके कृतार्थ होवें।

आमार कन्यार कथा शुन एक चित्ते। मृत्तिका शङ्कर पूजे शिशुकाल हइते॥	एकाग्र चित्त होकर मेरी कन्याकी बात सुनिये। वह बचपनसे ही पार्थिव शङ्करका पूजन करती है।
उपहास करिते तारे बापे जिज्ञासे। केमन बरे बिभा दिब इहा शुनि हासे॥	उसका बाप उपहास करते हुए पूछता है,—"तुम्हारा कैसे वरके साथ विवाह किया जाय?" यह सुनकर वह हँसती है,
बले भाल घरे सुन्दर वरे कुलेर पण्डिते। अरोगी वयेस युवा जगत्-पूजिते॥	और कहती है,—"अच्छा घर हो, सुन्दर वर हो, कुलीन पण्डित हो, रोग रहित, युवा-अवस्था तथा जगत् पूज्य हो,
मा बाप सुन्दर जार सकल गुण धरे। ओगो बापू मोरे बिभा दिइ सेइ वरे॥	जिसके माँ बाप सुन्दर और सर्वगुण-युक्त हों, मेरे बाबा! मेरा विवाह वैसे ही वरसे करना।"
बकुल फूलेर माला चाँचर चूले बाँधे। कुंकुमे माजिया सरु पैता बाम काँधे॥	"जो बकुल फूलकी माला घुंघराले बालोंमें बाँधता हो, कुंकुमसे रंगा पतला यज्ञोपवीत बाँये कन्धे पर धारण करता हो,
सेइ वरे ओगो मा मोरे बिभा दिबि। से लागिया आमि से शङ्कर सेवि॥	मेरी माँ! वैसे ही वरसे मेरा विवाह रचाना। उसके ही निमित्तमें शङ्करकी पूजा करती हूँ।"
ठाकुर पण्डित सङ्गे रङ्गे निरन्तर। चन्दने चर्चित जार दीर्घ कलेवर॥	"जो ठाकुर पण्डितके साथ निरन्तर हँसता खेलता है, जिसका चन्दन-चर्चित दीर्घ-कलेवर है,
दिव्य धौत कृष्ण केलि वस्त्र जे परे। अनुपाम मदन मोहन वेश धरे॥	जो दिव्य कृष्ण केलि धोती पहनता है, जो अनुपम मदन-मोहन वेष धारण करता है,
दीर्घ लोचन जार दीर्घ भूरु जोड़ा। सेइ वर रमणी-विनोद प्राण-पोड़ा॥	जिसकी बड़ी बड़ी आंखें हैं, दोनों लम्बी भोंयें हैं, ऐसा वर जो रमणीजनके हृदयको विनोदके द्वारा सन्तप्त करता है,

सेइ जे कीर्त्तने नाचे प्रेम जले भासे । तारे विभा दिय मोरे इहा बलि हासे ॥	जो कीर्त्तनमें नृत्य करते हुये, प्रेमाश्रुमें डूब जाता है, उसीसे मेरा विवाह करना,"—इतना कहकर हँसने लगती है,

श्रीपाद वल्लभाचार्यकी गृहिणीने एक एक करके बालिका लक्ष्मीप्रियाकी बाल्यकालकी सारी बातें शचीमातासे कह डालीं । अन्तमें हँसकर कहा कि, इस समय यदि लक्ष्मीप्रियासे ये सारी बातें पूछूँ, तो वह लज्जासे सिर नीचा करके दूर भाग जाती है ।

पूर्व्वे कहियाछिल ए सकल कथा ।
एखन जिज्ञासिले लाजे करे हेट माथा ॥

शचीमाता ये सारी बातें सुनकर आनन्दसे हँसने लगीं । भावी वैवाहिका (समधिन) का यथोचित आदर करके वह कहने लगीं—"समधिन ! तुम्हारी कन्या बड़ी लक्ष्मी है, मेरे पुत्रके लिए उपयुक्त पात्री है । पहले मिश्रजीने यह बात मुझसे कही थी । अहा ! आज वह रहते तो कितना सुखी होते ?" इतना कहते कहते नेत्रोंकी जलधारासे शचीमाताका वक्षःस्थल प्लावित हो उठा । पतिका शोक नये ढंगसे उनके हृदयमें जाग उठा ।

ए कथा शुनिया बोले शची ठाकुरानी । तोमार नन्दिनी लक्ष्मी आमार जननी ॥ आमार नन्दन तोमार कन्या योग वर । पूर्व्वे कहियाछिल मिश्र पुरन्दर ॥ (ज० चै० मं०)	यह बात सुनकर शची ठकुरानी बोलीं कि तुम्हारी सुपुत्री लक्ष्मी मेरी बहू माँ है। मेरा पुत्र गौरचाँद तुम्हारी कन्याके लायक वर है । यह बात पुरन्दर मिश्रजीने पहले ही कही थी ।

आचार्य-गृहिणी शचीमाताके दुःखसे बहुत व्यथित हुईं । उनको सान्त्वना देकर सानन्द अपने घर गयीं । श्रीपाद वल्लभाचार्य अबतक बाहर बैठक-खानेमें बैठे थे । गृहिणीको साथ लेकर घर गये । मार्गमें पति-पत्नीमें शुभ-विवाहके उद्योगके सम्बन्धमें बहुत बातें हुईं ।

नवानुरागकी प्रभुकी उन्मत्तता

अपने इस विवाहके प्रकृत घटक प्रभु स्वयं ही थे, वनमाली आचार्य उपलक्षण मात्र थे—यह कृपालु रसिक पाठक वृन्दके लिए समझना बाकी नहीं है । शचीनन्दनने स्वयं अपने शुभ विवाहकी अगुआई क्यों की, यह अब रसिक पाठकोंकी समझमें आ जाना चाहिए । व्रजराजनन्दन श्रीकृष्ण आज नदियामें शचीनन्दन रूपमें नव-वृन्दावन-विहार करनेकी अभिलाषासे श्रीपाद वल्लभाचार्यकी अपरूप-रूपवती कन्या नवानुरागिणी नवबाला श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके प्रेम-फाँसमें पड़ गये हैं । नवानुरागमें उन्मत्त होकर

प्रभु स्वयं घटक-चूड़ामणि बने हैं और अपने विवाहकी अगुवाई स्वयं कर रहे हैं। क्योंकि वे नवबाला लक्ष्मीप्रियाकी रूपमाधुरीसे मुग्ध हो गये हैं। उनको भलीभाँति देखनेका अवसर नहीं पाते। कभी एक बार गङ्गाघाट पर, कभी एक बार नदियाके मार्गमें क्षणमात्र अपनी प्रियतमाका दर्शन करनेसे उनकी प्रेमतृष्णा नहीं मिटती। उनकी अदम्य हृदयकी आशा पूर्ण करनेके लिए उनकी ही प्रेरणासे वनमाली आचार्यने यह शुभ विवाह ठीक किया है। श्रीगौर सुन्दरके नवानुरागका एक सुन्दर पद यहाँ रसिकवृन्दको सुनाये बिना मैं नहीं रह सकता।

सजनि ! अपरूप पेखलुँ बाला।
हिमकर मदन मिलित मुखमण्डल,
तापर जलधर माला ॥

हे सजनी ! आज मैंने बहुत ही सुन्दर एक बालिका देखी है। चन्द्रमा और कामदेवकी सम्मिलित आभायुक्त उसका मुख-मण्डल एवं उसके ऊपर मेघमाला अर्थात् श्यामवर्ण केश सुशोभित थे।

चञ्चल नयाने हेरि मुझे सुन्दरि,
मुचकायइ फिरि गेल।
तैखने मरमे मदन ज्वर-उपजल,
जीवइते संशय भेल ॥

वह सुन्दरी चञ्चल नयनोंसे मुझे देखती हुई मुस्कराकर चली गयी। उसी समय मेरे शरीरमें ऐसी कामव्यथा उत्पन्न हो गयी और मेरा जीना संशय युक्त हो गया।

अहनिशि शयने स्वपने आन ना हेरिये,
अनुखन सोइ धेयान।
ताकर पिरीति कि रीति नाहि समुझिये,
आकुल अथिर पराण ॥

दिन-रात सोते जागते उसके सिवाय और कुछ दिखाई नहीं पड़ता है और निरन्तर उसीका ध्यान लगा रहता है। उससे प्रीतिकी क्या रीति है यह समझमें न आनेके कारण मन व्याकुल और प्राण अस्थिर हैं।

मरमक वेदन तोहे परकाशल,
तुहुँ अति चतुरि सुजान।
सो पुनि मधुर मूरति दरशायबि,
राधा बल्लभ गान ॥

मैंने अपने मर्मकी वेदना तुझे बता दी है। तू भी बड़ी चतुर और सयानी है मुझे वह मधुर मूर्ति एक बार तो फिरसे दिखला दे ऐसा राधा वल्लभ गान करते हैं।

ठीक यही अवस्था शचीनन्दनकी हो गयी है। वे व्रज-रसके रसिक हैं। इसी कारण गङ्गातट पर बैठकर एकाकी नवानुरागकी तान अलापते हैं :—

ए सखि ! विहि कि पुरायब साधा ।
हेरव पुनि किये रूपनिधि राधा ॥

यदि मोरे ना मिलब सो वर रामा ।
तव जिउ छार धरब कोन कामा ॥

अरी सखी ! मेरे मनकी साध क्या कभी पूरी होगी ? क्या मैं रूप सम्राज्ञी राधाको एक बार पुन: देख सकूँगा ? यदि वह श्रेष्ठ (रमणि मुझे न मिली तो मेरा जीवन क्षार है (धिक्कार है), फिर जीना किस कामका ?

तृतीय अध्याय

शुभ-विवाह

•

जे शुनये प्रभुर विवाह पुण्यकथा ।
ताहार संसार बन्ध ना हय सर्व्वथा ॥

—श्रीचैतन्य भागवत्

विवाहकी तैयारियाँ

प्रभुके विवाहके अगुआ वनमाली आचार्य बहुत व्यस्त हैं। निमाई पण्डितके शुभ-विवाहका दिन स्थिर करना होगा। शचीमाता उनके ऊपर सारा भार देकर निश्चिन्त हैं। उन्होंने नदिया भरके लोगोंको यह समाचार सुनाया। शचीमाताने भी अपने परिजन-प्रियजन और पड़ोसियोंको अपने निमाई चाँदके शुभ विवाहका समाचार सुनाया। सुनकर सब आनन्द करने लगे। सबने एक वाक्यसे स्वीकार किया कि यह शुभ सम्बन्ध अति उत्तम हुआ है। घटक-चूड़ामणि वनमाली आचार्यकी सब प्रशंसा करने लगे। यह शुभ कर्म शीघ्र सम्पन्न हो, इसके उद्योगमें सब लोग व्यस्त हो उठे।

कुटुम्ब सोदर जत सभे आज्ञा दिल ।
विचार करिया सभे भाल भाल बैल ॥
(चै० मं०)

कुटुम्ब सहोदर जितने थे सभीने इस विवाहकी अनुमति दे दी और विचार करके सभीने इसे बहुत अच्छा बतलाया।

निमाई चाँदके घर आनेपर शचीमाताने उनको आदरपूर्वक पास बुलाया। सोनेके निमाईके सोनेके बदन पर हाथ फेरकर शचीमाताने हँसते-हँसते पुत्रसे स्नेहपूर्वक कहा,—"बेटा !, निमाई ! वल्लभाचार्यकी कन्याके साथ तुम्हारे शुभ-विवाहका सम्बन्ध ठीक हो गया है, मेरे इस दग्ध कपालमें पुत्र-वधूके दर्शनका लाभ घटित होगा, यह मैंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था। नारायणकी कृपासे वह शुभ दिन उपस्थित है ।

तुम सब सामग्रीका जोगाड़ करो, तथा पण्डितोंके द्वारा शुभ दिन निश्चय करो। तुम अब योग्य हो गये हो। यह सब कार्य बेटा ! इस समय तुमको ही करना पड़ेगा।"

तबे शची निज सुत वदन चाहिया ।
मधुर वचने किछु बोलेन हासिया ॥
शुन शुन ओहे बाप मोर सोनार पूत ।
वल्लभ मिश्रेर कन्या अति अदभुत ॥
तोमार विभार योग्य मोर मने लय ।
तेन पुत्रवधू मोर कत भाग्ये हय ॥
विचार करिया कर विचित्र समय ।
द्रव्य आहरण कर जे उचित हय ॥
(ज० चै० मं०)

जननीकी बातें निमाई चाँदने सिर नीचा करके सुनलीं। कोई उत्तर न दिया। शचीमाताने समझा कि विवाहकी बात सुनकर मेरे निमाईको लज्जा आ गयी है। उन्होंने और कुछ न कहा, पुत्रके सुन्दर मुखचन्द्रको हाथसे दबाकर प्रेमपूर्वक केवल स्नेह चुम्बन ले लिया। निमाई पण्डित माताके मुखकी ओर देखकर हँस पड़े। पुत्रके मुँह पर आनन्दकी हँसी देखकर शचीमाताके आह्लादकी सीमा न रही। वे सारे दुःख भूलकर निमाई चाँदको गोदमें पकड़ना चाहती थीं, कि शचीनन्दन भागकर घरसे बाहर चले गये। नदियाके बहुजनाकीर्ण पथपर निमाई पण्डित आनन्दित चित्तसे झूमते चले जा रहे हैं। सङ्गमें पढ़ने वाले सहपाठी लोग हैं। वे नदियाके बाजारमें जाकर एक दुकान पर बैठ गये। प्रभुका शुभ विवाह होने जा रहा है, नदिया भरके आदमी जानते हैं, उनके साथी भी जानते हैं। बाजार जाकर प्रभुने स्वयं अपने शुभ-विवाहकी सामग्री खरीदी, तथा साथियोंके द्वारा घर भिजवा दी। शचीमाताने समझा कि अपने पुत्रको जो आदेश दिया था, पुत्रने उसे पूरा कर दिया।

शुनिया मायेर बोल विश्वम्भर राय ।
करिल सकल द्रव्य जतेक जुयाय ॥

माँके वचन सुनकर विश्वम्भर पण्डितने यथा उपाय करके समस्त सामग्री एकत्र की।

इसके बाद निमाई पण्डितने ज्योतिषी और पण्डितोंको बुलाकर अपने शुभ-विवाहका दिन निश्चित किया।

दैवज्ञ आनिल आर उत्तम पण्डित ।
करिल त शुभदिन समय अङ्कित ॥
(चै० मं०)

देवज्ञ (ज्योतिषी) और उत्तम पण्डित बुलाकर उनसे विवाहका शुभ दिन निश्चित करवाया।

प्रभुका शुभ अधिवास

शुभ विवाहका शुभ दिन आ गया। आज प्रभुके शुभविवाहका शुभ अधिवास है। नदियाके घर-घरमें मङ्गलध्वनि ध्वनित हो रही है। सारा नदिया आनन्द और कोलाहलसे परिपूर्ण है। घर-घर रास्तेके किनारे ध्वजा-पताका सुशोभित हो रही हैं। चित्र-विचित्र मङ्गल आलेपनसे सबके गृह-द्वार चित्रित हैं। सबने प्रभुके शुभ विवाहोत्सवके उपलक्ष्यमें अपने अपने गृह-द्वार पर कदलीके वृक्ष रोप रखे हैं और मङ्गल कलशकी स्थापना की है। नृत्य-गीत-वाद्यसे नदिया नगरी परिपूर्ण है। चारों ओर आनन्दध्वनि हो रही है। सबने प्रभुके शुभ विवाहमें योग दिया है। किसीको कुछ कहना नहीं पड़ रहा है। ठाकुर जयानन्दने अपने चैतन्य मङ्गलमें ये सारी बातें लिखी हैं :—

रजनी बञ्चिल नृत्य-गीत-वाद्य-रसे ।
ध्वज पताका उड़े विचित्र कलसे ॥
नाछे बाटे छड़ा झारि विचित्रालिपना ।
स्वस्तिक सिन्दूरपूर्ण कलस स्थापना ॥
कदली रोपन कैल प्रति द्वारे द्वारे ।
आनन्दित नवद्वीप प्रति घरे घरे ॥

प्रभुका आज शुभ अधिवास है। मिश्र भवन आनन्द-ध्वनिसे मुखरित है। विप्रगण वेदपाठ कर रहे हैं। कुलनारियाँ शुभ हुलुध्वनि दे रही हैं। वे दिव्य वस्त्र पहनकर दिव्य वेश-बूषा करके प्रभुके शुभ अधिवास कर्मको देखने आयी हैं। वनमाली आचार्य उपस्थित लोगोंको अपने हाथसे गन्ध, चन्दन और माला आदि दे रहे हैं। शचीमाता मीठे वचनोंसे सबको सन्तुष्ट कर रही हैं। नदिया नागरियोंके साथ गुप्त रूपसे गन्धर्व कन्यायें और देवीगण मनुष्योंका रूप धरकर श्रीगौरभगवानके अधिवासका दर्शन कर रही हैं। देवगण मनुष्योंमें आकर मिल गए हैं। देव-नरके अवाध मिलनसे शची-आँगनकी शोभा बढ़ गई है। श्रीपाद वल्लभाचार्य शुभ अधिवासकी द्रव्य-सामग्री लेकर विधिपूर्वक जामाताके शुभ अधिवास कर्मको सम्पन्न कर गए।

वल्लभ आचार्य आसि यथाविधि रूपे ।
अधिवास कराइया गेलेन कौतुके ॥

प्रभुके शुभ अधिवासके उपलक्ष्यमें ठाकुर नरहरिने दो सुन्दर पदोंकी रचना की है। वे दोनों पद कृपालु पाठकवृन्दके आस्वादनके लिए यहाँ उद्धृत किये जाते हैं।

* प्रथम पद *

श्रीशची आलय, अति शोभामय,	श्रीशचीका घर परम शोभायुक्त है
उथलिबे ताहे आनन्द सिन्धु ।	और आनन्द समुद्र वहाँ उमड़ रहा है।

अधिवास आजि, विलसिब साजि, सुखमय गोरा गोकुल-इन्दु ।।	आज अधिवासका दिन है। गोकुलके चन्द्र सुखमय गौर आज विलास करेंगे ।
एत कहि चिते, नारे स्थिर हैते, चाहि चारिभिते कुलेर बाला ।	इस प्रकार कहते हुए कुल बालाएँ अपने चित्तको स्थिर नहीं कर पा रही हैं और चारों ओर देख रही हैं ।
उपमा कि मेन, घर हैते जेन, बाहिर हलो चारुचाँदेर माला ।।	इसकी उपमा क्या दी जाय ? ऐसा प्रतीत हो रहा है मानों सुन्दर चन्द्रमाओंकी मालायें घरसे बाहर निकल रही हैं ।
विचित्र वसन, शोहे आभरण, प्रति अङ्गे वेशविन्यास भाल ।	नानाप्रकारके वस्त्र-अलंकार उनपर शोभायमान हैं और प्रत्येक अङ्गका वेश-विन्यास अतीव सुन्दर है ।
नाना भङ्गी करि, चले सारि सारि, नदीयार पथ करि आलो ।।	अनेक भावभङ्गिमा पूर्वक पंक्तिकी पंक्ति कुल बालाएँ नदियाके पथको आलोकित करती चली जा रही हैं।
कत अभिलाषे, गिया आइ पाशे, प्रणमिते कत आदरे आइ ।	कितनी अभिलाषा पूर्वक आई (शचीमाँ) के पास जाकर परम आदरपूर्वक प्रणाम कर रही हैं।
नरहरि नाथे, पाञा आङ्गिनाते, जुड़ाइल हिया से मुख चाइ ।।	अपने नाथको आँगनमें पाकर, उनका मुख देखकर नरहरिका हृदय शीतल हो गया ।

* द्वितीय पद *

शोभामय शचीर अङ्गने । चतुर्दिके देवध्वनि करे विप्रगणे ।।	शोभामय शचीमाँके आँगनमें चारों ओर ब्राह्मणगण वेदध्वनि कर रहे हैं ।
आजु कि आनन्द परकाश । शुभक्षणे निमाइचाँदेर अधिवास ।।	आज कैसा आनन्द प्रकाशित हो रहा है । शुभक्षणमें निमाईचाँदका अधिवास है ।
गन्धमाला देइ आत्मगणे । दिशा आलो करे गोरा अङ्गेर किरणे ।।	आत्मीयजनोंको चन्दन एवं मालार्पण की जा रही है । गौरचन्द्रकी अङ्गच्छटा सम्पूर्ण दिशायें अलोकित कर रही हैं ।
सभामध्ये गोरा द्विजमणि । विलासये कत ना अर्व्बुद काम जिनि ।।	सभाके मध्यमें द्विजमणि श्रीगौरचाँद कितने अर्बुद कामदेवोंको पराजित करते हुए विलास कर रहे हैं।

वारेक जे चाय गोरा पाने । ना धरे धैरज से आपना नाहि जाने ॥	गौरचाँदकी ओर एक बार देख लेने मात्रसे धैर्य धारण नहीं होता और वह अपनी सुध-बुध भूल जाता है ।
जे जन आइल अधिवासे । गन्ध चन्दनादि दिया सबे परितोषे ॥	अधिवासमें जो लोग आये हुए हैं उन सभीको सुगन्ध चन्दनादि देकर परितुष्ट किया गया है ।
विधिमते करि अधिवास । वल्लभ आचार्य्य गेला आपन आवास ॥	विधिपूर्वक अधिवासका कार्य सम्पन्न करके वल्लभ आचार्य अपने घर चले गए ।
कहिते सुखेर अन्त नाइ । आइ शुह लञा शुभकर्म्म करे आइ ॥	इस सुखका वर्णन नहीं किया जा सकता, आई (शचीमाँ) सामग्री लाकर शुभ कर्म सम्पन्न कर रही हैं ।
नारीगणे देइ जयकार । भाटगणे करये मङ्गल रायवार ॥	नारीगण जय जयकार कर रही हैं । भाटगण मङ्गल गान कर रहे हैं ।
नृत्य-गीत-वाद्य नाना भाँति । उपमा दिवार नाइ काहार शकति ॥	नानाप्रकारके नृत्य, गीत और वाद्य बज रहे हैं । इस शोभाकी उपमा देनेकी शक्ति किसीमें नहीं है ।
के वा ना बलये भाल भाल । जगभरि जय जय शब्द रसाल ॥	सर्वत्र वाह वाह सुनाई दे रहा है और जय जय रसाल शब्द चतुर्दिक व्याप्त हैं ।
मानुषे मिशाये देवगणे । देखि अधिवास रङ्ग नरहरि भने ॥	मनुष्योंमें देवगण मिल गये हैं । अधिवासका रङ्ग देखकर नरहरि उसका वर्णन कर रहे हैं ।

प्रभुके रसिक भक्त ठाकुर नरहरिने शचीनन्दनके शुभ अधिवासको अपनी आँखों देखकर लिखा है, यह बात उनके रचे पदोंकी भणितासे ही स्पष्ट होती है । प्रभुके शुभ अधिवासमें आये हुए नर-नारियोंके सौभाग्यकी बात स्मरण करनेसे मनमें बड़ा दुःख होता है, और मनके दुःखसे भक्त कविके सुरमें सुर मिलाकर आकुल प्राणसे रोनेकी इच्छा होती है ।

हइल पापिष्ट जन्म नहिल तखने । हइलाङ वञ्चित से सुख-दरशने ॥	यह पापी जन्म उस समय नहीं हुआ, इसीसे उस सुखके दर्शनसे वञ्चित हो गया ।

अधिवासके बाद नान्दीमुख श्राद्ध हुआ । प्रभु गङ्गास्नान करके रेशमी वस्त्र पहनकर पितृकार्य करनेके लिये बैठे । चारों ओर विप्रगण बैठकर वेदपाठ करने लगे । बीचमें गौर शशि पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान शोभा पा रहे हैं ।

चतुर्द्दिके विप्रगण करे वेदध्वनि ।
मध्ये चन्द्रसम बसिलेन द्विजमणि ॥
(चै० भा०)

प्रभुने विधिपूर्वक सङ्कल्प करके पञ्चोपचारसे देवताओंका पूजन किया। कार्य समाप्त होने पर दान-दक्षिणा देकर नाना प्रकारके मिष्ठान्नके द्वारा ब्राह्मण-भोजन कराया। जो जो लौकिक रीति हैं, प्रभुने वे सब पूरी कीं।

रजनी प्रभाते गौरचन्द्र भगवान ।
वारकोणा घाटे करेन गङ्गा स्नान ॥

ब्राह्ममुहूर्तमें गौरचन्द्र भगवानने वारकोणा घाट पर जाकर गङ्गास्नान किया।

मन्दिरे आसिया दिव्य धौत वस्त्र धरि ।
गणेश घट आरोपिया सङ्कल्प करि ॥

दिव्य श्वेत वस्त्र धारण करके मन्दिरमें आ वहाँ श्रीगणेश और घट (कलश) की स्थापना करके संकल्प लिया।

पञ्च उपचारे सकल देवता पूजिल ।
गौर्य्यादि मातृका पूजि वसुधारा दिल ॥

पंचोपचार करके सब देवताओंकी पूजा की तथा गौरी आदि मातृका पूजकर वसुधारा दिया।

नान्दीमुख श्राद्ध करिल विधिमते ।
ब्राह्मणे दक्षिणा दिल काञ्चन रजते ॥

विधिपूर्वक नान्दीमुख श्राद्ध और ब्राह्मणोंको दक्षिणामें सोना चाँदी दिया।

मिष्ठान्न पान दिया कराला भोजन ।
कर्पूर ताम्बूल दिल सुगन्धि चन्दन ॥
(चै० मं०)

मिष्ठान्न और पेय सहित भोजन करवाया (जिसके बाद) कर्पूरयुक्त ताम्बूल अर्पित करके सुगन्धि चन्दन अर्पण किया।

श्रीगौराङ्ग प्रभुका यह प्रथम विवाह है। उनके मनमें बड़ा आनन्द है। ब्राह्मण और इष्टमित्रादिको भोजन कराकर निमाई पण्डितने स्वयं वरकर्त्ताका कार्य किया। वास्तवमें वर ही स्वयं इस शुभ विवाहके कर्त्ता हैं, वही घटक हैं, और वही परिदर्शक हैं। उपस्थित आत्मीय जन और मित्रोंसे निमाई पण्डितने हँस कर कहा—"आप सब लोग मेरे विवाहमें बराती बनकर चलेंगे।" इस समय यह बात कहते उनको लज्जा न लगी।

ईषत् हासिया प्रभु बले सभाकारे ।
सर्व्वलोक जाबे आमार विभा देखिबारे ॥
(ज० चै० मं०)

मनमें आनन्दका आधिक्य होने पर लोगोंको लज्जा शर्म नहीं रहती। श्रीभगवानने नर-शरीर धारण करके नदियाके विप्रकुलमें जन्म ग्रहण किया था। वे

मनुष्यके समान ही सब कुछ कर गये हैं। उनकी मानवी लीला-माधुर्यको लेकर ही सब लोगोंने उनके लीलाग्रन्थ लिखे हैं। श्रीभगवानकी यह लौकिक मानुषी लीला ही बड़ी मधुर है। इसके ही स्मरण—मननका नाम साधना है, यह स्मरण—मनन करते रहनेसे सारी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। भक्तियोगमें श्रीभगवानकी लीलाके स्मरण—मननके कार्यको परम-पदकी प्राप्तिके एकमात्र उपायके रूपमें वर्णन किया गया है। भक्ति शास्त्रकारोंने एक स्वरसे इसको पञ्चम पुरुषार्थ प्रेमधनकी प्राप्तिका एकमात्र उपाय निर्धारित किया है।

शचीमाताने पुर-नारिवृन्दको तैल, हरिद्रा, लाजा, केला, सिन्दूर, ताम्बूल आदि माङ्गलिक द्रव्य यथेष्ट परिमाणमें प्रदान किये। पतिव्रता कुल ललनाओंके आनन्दकी सीमा न रही। उनकी संख्या अगणित थी। जैसी पुरुषोंकी संख्या थी, वैसी कुलनारीगणकी संख्या थी। देवगण, देववधूगण नदियाके नर-नारीवृन्दके साथ मिलकर छद्मवेषमें श्रीगौरभगवानका शुभ विवाह देखने आये हैं। इसी कारण शचीमाता बहुतोंको पहचान नहीं पा रही हैं। वे ग्रामकी कन्या और ग्रामकी ही वधू होनेके कारण नवद्वीपमें सबको पहचानती थीं, पर अपने पुत्रके शुभ-विवाहमें समागत अपूर्व वेशधारी परम स्वरूपवान और रूपवती नर-नारियोंमें बहुतोंको नहीं पहचान पायीं। चारों ओर केवल 'दो और लो' के सिवा और कोई बात नहीं सुन पड़ती। शचीमाताके अक्षय भाण्डारमें किसी वस्तुका अभाव नहीं है। कहाँसे कौन आदमी यह सारी सामग्री लाकर घर भर रहा है, वे इस विषयमें कुछ नहीं जानतीं। न वे कोई खबर रखती हैं? चतुर्दिक नृत्य-गीत-कोलाहलसे मिश्र-गृह परिपूर्ण है।

नृत्य-गीत-वाद्ये महा उठिल मङ्गल।
चतुर्दिके "लेह देह" शुनि कोलाहल।।

नृत्य और गीत-वाद्य द्वारा महा-मङ्गल-ध्वनि होने लगी चारों ओर 'देवो' 'लेवो' का कोलाहल सुन पड़ता था।

कत वा मिलिल आसि पतिव्रता गण।
कतेक वा इष्ट मित्र ब्राह्मण सज्जन।।

कितनी ही पतिव्रतागण आकर सम्मिलित हुई और कितने ही इष्ट मित्र, ब्राह्मण, सज्जनवृन्द आ मिले।

खई, कला, सिन्दूर, ताम्बूल तैल दिया।
स्त्रीगणेरे आइ तुषिलेन हर्ष हैया।।

खोई (धानका लावा), केला, सिन्दूर, ताम्बूल, तैल देकर शचीमाताने रमणी-गणको प्रसन्न किया।

देवगण देववधूगण नररूपे।
प्रभुर विवाहे आसि आछेन कौतुके।।
(चैं० भा०)

देवगण और देववधूगण नररूप धारण कर प्रभुके विवाहमें आये और आश्चर्यान्वित हो रहे।

श्रीलक्ष्मीप्रियादेवीका शुभ अधिवास

उधर श्रीपाद वल्लभाचार्यके घर भी बड़ी धूम मची है। नवद्वीपवासिनी कुल-कामिनियाँ लक्ष्मीप्रियाके शुभ अधिवासमें सम्मिलित होकर आचार्य गृहमें आनन्द कर रही हैं। नदियाके निवासियोंके लिए आज बड़ा ही आनन्दका दिन है। दक्खिनी मुहल्लेके मिश्रगृहमें और हाटियापाड़ाके आचार्य गृहमें सारी नदियाके नर-नारी एकत्रित हो गये हैं। श्रीपाद वल्लभाचार्य अपनेको दरिद्र ब्राह्मण कहकर परिचय देते हैं, परन्तु वस्तुत: वे दरिद्र नहीं हैं। सदा दैन्य भावमें रहना ब्राह्मणका लक्षण है, इसी कारण दैन्य प्रदर्शित करके उन्होंने वनमाली आचार्यसे कहा था कि पञ्च हरीतकी देकर मैं कन्यादान करूँगा। वह बात कार्यमें आने वाली न थी। एकलौती कन्या लक्ष्मीप्रियाके शुभविवाहमें श्रीपाद वल्लभाचार्यने सब प्रबन्ध किये हैं। नदियाके धनी और निर्धन सबने ब्राह्मणको कन्यादानसे उद्धार करनेके लिए विशेष रूपसे सहायता प्रदानकी है। उनके घरमें भी किसी वस्तुका अभाव नहीं है। साक्षात लक्ष्मी जिनकी कन्या हैं, उनको फिर अभाव कैसे होगा? उनका गृह-भण्डार भी अक्षय है। वहाँ भी 'दो' 'लो' कार्य समान रूपसे चल रहा है। लक्ष्मीप्रियादेवीके शुभ अधिवास कर्मका उल्लेख करके रसिक भक्त कवि नरहरि ठाकुरने एक और सुन्दर मधुर पद लिखा है, वह भी कृपालु पाठक-वृन्दके मनो-विनोदके लिए नीचे उद्धृत किया जाता है।

आजु स्नेहे ते विह्वोल हैया। वल्लभ आचार्य, अधिवास कार्य्य, करे आत्मविप्रवर्गेरे लैया ।। टेक ।।	आज स्नेह विह्वल होकर वल्लभ आचार्य अपने साथ परिवार वर्ग और ब्राह्मणगणको लेकर अधिवास-कार्य कर रहे हैं।
कत साधे माय, लखिमी कन्याय, पराइया वास भूषण भालि।	कितनी साधसे माने लक्ष्मी कन्याको सुन्दर वस्त्र और भूषण पहिनाए।
सुचारु अङ्गने, दिव्य सिंहासने, बसाइया सुखे भासे आली ।।	सजे हुये सुन्दर अङ्गोंसे दिव्य सिंहासन पर उन्हें बिठाकर सखियाँ आनन्दमें डूबी जा रही हैं।
शुभक्षणे दिते गन्धमाला, चिते उलसित वाढे अङ्गेर छटा।	शुभ समय पर सुगन्धित मालाएँ देनेसे सबके चित्तको बड़ा ही उल्लास है जिससे अङ्गकी छटा और भी बढ़ रही है।
थिर नहे चित, देखे अलखित, चारिभिते देवरमणी घटा ।।	चित्त स्थिर नहीं है, चारों ओर देव-वधूटियोंकी घटा अलक्षित भावसे देख रही हैं।

शङ्ख घण्टा आदि, वाद्य नाना विधि,
नृत्य-गीत शुभ भाटेते भणे ।

शंख, घण्टा आदि नानाप्रकारके बाजे बज रहे हैं। भाटगण शुभ नृत्य एवं गीत प्रेरित कर रहे हैं।

नारी भजकारे, धृति धरिवारे,
नारे नरहरि तिछनि मेने ॥

स्त्रियोंका स्वागत-सत्कार हो रहा है। नरहरि धैर्य नहीं रख पा रहे हैं और मन ही मन न्यौछावर हो रहे हैं।

रात बीतते-बीतते शुभ अधिवास कर्म सुसम्पन्न हो गया।

जलसहा

इसबार प्रभुके विवाहमें नदिया नागरीवृन्दके जलसहा* की बारी आयी। बड़े साधसे नदियावासी कुलकामिनियाँ निमाई पण्डितके शुभविवाहमें दिव्य वेषभूषासे अलंकृत होकर रेशमी वस्त्र पहनकर झुण्डकी झुण्ड जलसहाके निमित्त आई हैं। सब शचीके आँगनमें एकत्रित होकर आनन्दरसमें उन्मत्त होकर मङ्गल सूचक शुभ हुलूध्वनि कर रही हैं। शचीका आँगन आनन्द-ध्वनिसे मुखरित हो उठा। नाना प्रकारकी वाद्य-ध्वनिसे नदिया-नगरी परिपूर्ण हो गयी। नदिया-नागरीगण किस भावसे श्रीगौराङ्ग-विवाह-रस-समुद्र-तरङ्गमें डूब रही हैं, कृपालु रसिक भक्त पाठक-वृन्दको ठाकुर लोचनदासकी मधुर भाषामें उसका एक आभास देनेकी बड़ी साध हो रही है। सुरुचि-सम्पन्न शिक्षित नव्य सम्प्रदायके प्रिय पाठकवृन्द ग्रन्थके इस अंशको चाहें तो नहीं भी पढ़ सकते हैं। ठाकुर लोचनदास रसिक भक्त थे। श्रीगौराङ्गप्रभुकी माधुर्यलीलाके लेखक साधक कवि थे। नदियानागरी भावमें विभोर होकर उन्होंने लिखा था :—

अधिवास समाधान रजनीर शेषे।
पानी सहिब बलि हइल उल्लासे ॥

रात्रिके शेष भागमें अधिवासका समाधान हुआ। उसके उपरान्त जल-सहाके लिए सबको उल्लास हुआ।

नाना वाद्य एकि काले हइल तरङ्ग।
कुलवधू सभाकार व्रत हैल भङ्ग ॥

नाना वाद्योंके एक साथ बजनेसे बड़ी भारी तरंग उत्पन्न हुई जिससे सभी कुलवधुओंका व्रत भङ्ग हुआ।

युवती उमति हइला नदिया नगरे।
गौराङ्ग-विवाह-रस-समुद्र-हिल्लोले ॥

नदिया नगरमें युवतियाँ श्रीगौराङ्गके विवाहके रस-समुद्रकी तरंगोंसे उल्लसित हो उठीं।

---

* "बङ्गालमें विवाहके माङ्गलिक अवसर पर परिवारकी तथा पड़ौसिन समवयस्का युवा सुहागिन स्त्रियां मिलकर जलाशयसे कलशमें जलसंग्रह करकर, लाकर विवाहित होने वाले व्यक्तिको स्नान करवाती हैं, उस माङ्गलिक कार्यको जलसहा कहते हैं।

यूथे यूथे नागरी चलिला विप्र वधू ।
अवनी मण्डलेरे मण्डली जेन विधु ।।

विप्र-वधुओंका समूहका समूह चलने लगा मानो पृथ्वी मण्डल पर चन्द्रमाकी ही मण्डलियाँ दिखलाई दे रही हैं।

कुरङ्ग नयनी चारु खञ्जनगामिनी ।
झलमल अङ्ग तेज मदन दापुनी ।।

उन कुरङ्गनयनियों एवं सुन्दर खंजन-गामिनियोंकी झलमलाती हुई अंगच्छटा कामदेवको भी लजा रही थी।

केश वेश वसन भूषण अनुपाम ।
हेरिले हरिते पारे मुनिर पराण ।।

उनके केश, वेष एवं वस्त्राभूषण सभी अनुपम थे। उनको देख-देखकर मुनियोंके प्राण भी हरण हो सकते हैं।

हासिते दामिनी काँपे वचने अमिया ।
हास परिहासे चले ढूलिया ढूलिया ।।

उनकी हँसीमें विद्युत कम्पायमान होती थी, बचनमें अमृत था, वे हास-परिहास करती हुई झूमती चली जा रही थीं।

गाइछे गौराङ्ग गुण मधुर आलापे ।
स्वर सञ्च ध्वनिते अनङ्ग-अङ्ग काँपे ।।

वे गौर सुन्दरके गुणोंको मधुर आलापमें गा रही हैं। उनके स्वरसे सञ्चरित ध्वनिसे कामदेवके अङ्ग भी कम्पायमान हो रहे हैं।

नासार वेसर दोले मुकुता हिल्लोले ।
नक्षत्र पड़िछे जेन अरुण मण्डले ।।

उनकी नाककी वेसर डोलायमान होनेसे उसका मोती भी झूम रहा है। मानों अरुण-मण्डल पर नक्षत्र (तारा गण) पड़े हैं।

शचीर मन्दिरे आइला कुलवधू गण ।
सभाकारे दिला गन्ध गुवाक् चन्दन ।।

वे सब वधुएँ शचीमाँके घर आयीं, जहाँ सबको गन्ध, सुपारी, चन्दन दिया गया।

चलिला नागरी सभे पानी साहिबारे ।
मङ्गल आनन्दरस प्रति घरे घरे ।।

तब वे सब नागरी जलसहाके लिए चल दीं। इस मङ्गल और आनन्द रससे प्रत्येक घर परिपूर्ण है।

प्रभुके रसिक भक्त ठाकुर लोचनदासने चित्तके आनन्दमें गाया है :—

सचन्द्रिम रजनी चन्द्रिमुखी बाला ।
सुस्वर सङ्गीत रे गाइब गौर लीला ।।

चाँदनी रात है, चन्द्रमुखी बाला, सुस्वरका सङ्गीत है गायेंगी गौर-लीला।

के के आगे जाइबे गो,
गोरा गुण गाइबे गो,
चल जाँइ पानी साहिबारे।
हिया उथले
चित के वा पारे धरिवारे॥

कौन आगे जायगी गौर गुण गायगी चलो चलें जलसहाके लिये। हृदय उछल उछल रहा है, चित्तको कौन स्थिर रख सकता है ?

चाँदनी रात है, चाँदके प्रकाशमें नदियाके राह-घाट आलोकित हो रहे हैं। बाजे-गाजेके साथ नदियाकी कुलनारियाँ शचीके आँगनसे शचीमाताको साथ लेकर शची-दुलाल निमाई चाँदके शुभविवाहमें दिव्य वस्त्रालङ्कारमें सज-धजकर सूप, डाला, जलकी गगरी आदि जलसहानेकी सामग्री लेकर नदियाके पथ पर बाहर निकलीं। नदियाके पथ पर मानो चाँदका हाट लग गया। सभी आनन्दमयी हैं, प्रफुल्ल वदन हैं। वे हिलती-डुलती नाना प्रकारके रसरङ्गमें नाना प्रकारके कौतुक करती हुई पथ पर जा रही हैं।

केहो पट्ट विलासिनी केहो पीतवासे।
डूलिते डूलिते जाय अङ्गेर बातासे॥
(चै० मं०)

कोई रेशमी वस्त्र वाली कोई पीतवस्त्र वाली अपने अङ्गसे वायुको डुलाती झूमती चली जा रही है।

किसीके हाथमें सुगन्धित चन्दन चर्चित कुसुम-गुच्छ है, किसीके गलेमें सुन्दर गूंथी हुई पुष्पमाला झूल रही है, किसीके सुन्दर हाथोंमें कर्पूरसे सुगन्धित ताम्बूल-बाटिका (पान बट्टा) है। मनकी साधसे श्रीगौराङ्गका गुण गान करते-करते प्रेमानन्दसे नदिया-नागरीवृन्द धीरे-धीरे कोमल चरणोंसे नदियाके पथ पर चली जा रही हैं। शचीमाता सबके आगे हैं। प्रत्येक इष्ट कुटुम्ब आत्मीय स्वजनके घर जाकर इस शुभकर्मके उपलक्ष्यमें आनन्द उठा रही हैं। नदियामें घर-घर आनन्द ध्वनि उठ रही है। कुलकामिनीवृन्दमें कोई शुभ शङ्ख बजा रही है, कोई छोटा करताल बजाकर मङ्गल गीत ध्वनिके साथ-साथ ताल दे रही है, कोई मधुर मुरलीके संयोगसे श्रीगौराङ्गका गुणगान कर रही है। सभी मानो आनन्द सागरमें निमज्जित हो रही हैं। कवि जयानन्द ठाकुर लिखते हैं:—

नगरे चत्वरे, प्रति घरे घरे
नाछे बाटे हाटे घाटे।
आनन्द कोलाहले, पानि साहि बुले,
रसिका रमणी ठाटे॥

नगरके चारों ओर प्रत्येक घर, मार्ग, बाजार और घाट नृत्य, आनन्द और कालोहलसे परिपूर्ण हैं। रसिक रमणियाँ ठाठके साथ जलसहाके गीत गाती जा रही हैं।

स्वस्तिक सिन्दूर, तोरण जातंकुर
प्रति द्वारे द्वारे देखे।

प्रत्येक द्वार पर सिन्दूरयुक्त स्वस्तिक, बन्दनवार, दूर्वा दिखाई दे रहे हैं।

शङ्ख करताल, रवाव पाखाज,
वाजाये कत चन्द्रमुखे ।।

अनेक चन्द्रमुखियाँ शंख, करताल, ढोल रवाब, आदि वाद्य बजा रही हैं।

हरिद्रा आलिपना, दधि गोरोचना
दूर्वा धान्य चन्द्रातपे ।
धूप दीप मधु, लइया कुलवधू
खेलि खेले नवद्वीपे ।।

जगह-जगह हरिद्रारचित अल्पनायें एवं दूर्वाधान्ययुक्त दधिगोरोचनायें चंदोवे सुशोभित हैं। कुलवधुएँ धूप, दीप एवं मधु लेकर सम्पूर्ण नवद्वीपमें आनन्द उल्लासमें निमग्न हैं।

नदिया गगनमें देवलोकका आविर्भाव हुआ है। वे श्रीश्रीनवद्वीपचन्द्रके शुभविवाहके दर्शनकी लालसासे स्वर्ग छोड़कर मृत्युलोकमें आये हैं। अलक्षित रूपमें नदियाकी सम्पत्ति देखकर विस्मयसे विह्वलचित्त होकर चित्र लिखेसे खड़े हो गये हैं। नदियावासी उनको नहीं देख पा रहे हैं, परन्तु वे नदियावासियोंका सौभाग्य देखकर पुलकित हो रहे हैं। भक्त कविने लिखा है:—

गौरचन्द्रेर विभा देखिवारे देवलोके ।
गगन मण्डले सभे रहे एके एके ।।

चतुर्दिक कोकिल रव और भ्रमरकी मधुर झङ्कारसे मुखरित हैं, शुभ्र ज्योत्स्नाके आलोकमें दिग्दिगन्त उद्भासित हैं। मृदु-मन्द मलय-समीरसे जगतके निवासी नरनारियोंके प्राण और मन स्निग्ध तथा पुलकित हो रहे हैं। देव-देवीगण आकाशसे पुष्पवृष्टि कर रहे हैं। नदियाके मार्गमें पुष्प बिखरे देखकर सब विस्मित होकर पूछ रहे हैं, "इतनी पुष्पराशि कहाँसे आई ?"

कोकिल भ्रमर डाके जय हुलाहुलि ।
पुष्प फेलाय केह अञ्जलि अञ्जलि ।।

यह 'केह' अन्तरिक्षके देव-देवीगण हैं। यह कोई समझ नहीं पा रहा है।

वरका शुभ गात्र-हरिद्रा

नदियावासिनी कुलनारियाँ शुभ हुलूध्वनि देते हुए जलसहाकर कर जब शचीके आँगनमें लौटीं, तब आनन्दकी सीमा न रही। क्योंकि, अब उनका शुभ समय आ गया। आज गात्र-हरिद्रा विधि होगी। वरको स्नान कराया जायगा, वरके शरीरमें हल्दी लगायी जायगी। यह कार्य आगत स्त्रियाँ ही करती हैं। उनको इस माङ्गलिक कार्यमें बड़ा आनन्द मिलता है। उसमें फिर शचीनन्दन निमाई चाँद जैसे वर हैं। ऐसा सुन्दर वर कभी किसीने आँखों नहीं देखा। इस प्रकारका अपरूप रूपसम्पन्न, अलौकिक अङ्ग-ज्योतिपूर्ण, अभिनव अङ्ग-सौष्ठव-समन्वित सर्वाङ्ग सुन्दर वर कभी मनुष्यके देखनेमें नहीं आया। मनुष्यका इतना सौन्दर्य, मानव अङ्गका इतना माधुर्य

कभी सम्भव नहीं। यह सोचकर ही कुलकामिनियोंके मनमें आनन्द हो रहा है। सुन्दरका सब कुछ सुन्दर होता है। शचीनन्दन विशुद्ध चिरसुन्दर परम पुरुष हैं। उनका सबकुछ सुन्दर है। वे सर्वचित्ताकर्षक, सर्वमन-चोर हैं। उनकी नवद्वीप लीलाका रस-सौन्दर्य भी माधुर्य-मिश्रित अति अपूर्व हृत्कर्ण-रसायन है। श्रीभगवानके सौन्दर्य पर मुग्ध नवद्वीपवासिनी कुल-ललनाओंके सौभाग्यका वर्णन नहीं किया जा सकता। व्रज-गोपियोंके समान नदिया-नागरीगण स्वयं भगवान श्रीगौराङ्ग-सुन्दरकी विशेष कृपापात्री हैं। श्रीगौराङ्ग अवतारमें श्रीभगवान यद्यपि किसी विशेष कारणवश उनकी ओर एक बार भी मुँह ऊपर उठाकर नहीं ताकते, उनके साथ कभी मुँहसे बातें नहीं करते, तथापि इन परम सौभाग्यवती नदिया-नागरीवृन्दके मनमें किसी प्रकारका दुःख नहीं होता। श्रीगौराङ्ग सुन्दरको देखकर ही उनको सुख मिलता है, उनके संसार-सुखको देखकर ही वे आनन्दित होती हैं। उनके पार्श्वमें लक्ष्मी-विष्णुप्रियाको देखकर वे अपना मनुष्य-जीवन सार्थक समझती हैं। युगल-सेवा कर पाने पर वह अपनी सारी साध पूर्ण समझती हैं। उनमें निज सुखकी वासना तनिक भी नहीं है, श्रीगौराङ्गके सुखमें ही वे सुखी हैं, उनकी माता, गृहिणी और आत्मीयजनको लेकर आनन्द प्राप्त करनेमें उनकी बड़ी प्रीति है। उनको एकमात्र यही दुःख है कि श्रीगौराङ्ग भली भाँति संसार (गार्हस्थ्य) न कर सके। श्रीगौरभगवान संसाराश्रम त्यागकर भिखारी बने, वृद्धा जननी और नवीना गृहिणीको रास्तेमें बैठाकर उनके हृदयमें विषम शूल मारा। यही उनके हृदयका बड़ा दुख है। श्रीगौराङ्ग सुन्दरको वे पति रूपमें भजन करेंगी, पतिरूपमें चाहेंगी, यह आशा उनको इस अवतारमें क्षणमात्रके लिए भी नहीं होती। आशा करने पर भी वे सफल मनोरथ नहीं होतीं। नदिया-नागरी भाव अति शुद्ध भाव है। गौरपद तरङ्गिणीमें इस अति सुन्दर विशुद्ध भावकी एक सुन्दर व्याख्याकी गयी है। वह नव सम्प्रदाय-भुक्त प्रिय पाठकवृन्दकी जानकारीके लिए यहाँ दी जाती है—

"नदियाके श्रीनिमाईचाँद भुवनमोहन सुन्दर हैं। उनके रूपके आलोकसे दशों दिशाएँ प्रदीप्त रहती हैं। निमाँई पण्डितकी अतुलनीय रूप माधुरीसे नदिया-वासी मुग्ध हैं, रूपका आकर्षण अति सहज और अति विषम होता है। विशेषतः रमणीगण स्वतः रूपमुग्धा होती हैं। सुरूपमें रमणीका मन केवल लुब्ध ही नहीं होता, लुब्ध होकर निमज्जित होता है, और निमज्जित होकर रूपवानको भजनेके लिए व्यग्र हो उठता है—यह प्रामाणिक विशुद्ध सत्य है। ऐसी अवस्थामें रूपाभिलाषिणी सौन्दर्यप्रिया नदिया-नागरीगण श्रीगौराङ्ग रूपमें आकृष्ट हुए विना कभी नहीं रह सकतीं। नदियाके आबाल-वृद्ध-वनिता सब लोग पतित-पावनी गङ्गामें स्नानावगाहन करते हैं। वे गङ्गाजलको छोड़कर कूप या पोखरेके जलको व्यवहारमें नहीं लाते। अतएव नागरीवृन्द समय समय पर गङ्गा घाट पर आतीं, बैठतीं, परस्पर वार्त्तालाप

करतीं, तथा झुण्डकी झुण्ड घर लौट जातीं। निमाईचाँद गङ्गा किनारे जाते। इसके सिवा वे प्रतिदिन गङ्गा घाट पर घूमने जाते अतएव नागरीवृन्द अपनी साध भर उनको देख पातीं। पहले ही कहा जा चुका है कि रूपका आकर्षण बहुत विषम होता है। रूपमाधुरी अज्ञात रूपसे आंखोंको आकर्षित करके मनको हर लेती है। नागरी-चकोरी गौर-चन्द्र-सुधा-पानमें रत गौर-गत-प्राणा हैं। घाट पर आने जानेके बहाने गौर-दर्शन सुलभ होने पर भी, वह इस समय उनका नित्य कार्य हो गया है। श्रीगौराङ्गको देखे बिना नागरीगणके प्राण छटपटाते हैं, व्याकुल रहते हैं; इतना ही नहीं, उनको चैन नहीं मिलता। परन्तु गौरहरि नारीगणकी ओर तिरछी आँखोंसे भी नहीं देखते। नागरी समूह श्रीगौराङ्गको देखकर ही सुखी होती हैं। श्रीगौराङ्ग उनकी ओर ताकें, इस वासनाकी छाया भी उनके मनमें नहीं पड़ती, यही नागरी भावका गूढ़ रहस्य है।"

प्रकृत विषयको छोड़कर नागरी तत्वकी आलोचना करके मैं प्रियतम पाठक वृन्दके सामने अपराधी हो गया। वे अपने गुणसे क्षमा करेंगे। प्रभुके शुभ गात्र-हरिद्राकी बात चल रही थी। शचीके आँगनको घेरकर आज चाँदका हाट लगा हुआ है। शचीमाताने निमाईचाँदकी शुभ गात्र-हरिद्रा विधिके अनुष्ठानका सारा प्रबन्ध कर लिया है। रत्नालङ्कारसे भूषित विचित्र रेशमी वस्त्रसे सुशोभित पुरनारियाँ निमाईचाँदको घेरकर बैठी हैं। निमाई पण्डित आँगनके मध्यभागमें एक विचित्र आलेपनसे चित्रित पीढ़ाके ऊपर सुन्दर मुखचन्द्रको थोड़ा नत करके बैठे हैं, उनकी दृष्टि नीचेकी ओर अपने चरणकमलके ऊपर है। पुरनारीवृन्दकी दृष्टि शचीनन्दनके अङ्ग-प्रत्यङ्गके ऊपर पड़ रही है। सामने तैल-हरिद्राकी बाटी रक्खी हुई है। सौभाग्यवती एक रमणी धीरे धीरे प्रभुके दक्षिण हस्तको अपने कोमल वाम करमें धारण करके दक्षिण हस्तसे तैल हरिद्राकी बाटीसे तैल-हरिद्रा लेकर उनकी सुललित भुजाओं पर मर्दन करने लगी। अधिक सौभाग्यवती दूसरी एक कुल ललना सुन्दरी रमणी प्रभुके श्रीचरणको अपने अङ्कमें धारण करके उसमें सुन्दर रीतिसे तैल-हरिद्रा मर्दन करने लगी। शिव-विरञ्चि-वन्दित श्रीचरणोंकी सेवा प्राप्त करके रमणीने नारी-जन्मको सफल कर लिया। प्रभुके पद-रजके स्पर्शसे उसका चित्त निर्मल हो गया। उसकी बड़ी साध हुई कि एक बार प्रभुके श्रीचरणोंको हृदयमें धारण करके प्राणको शीतल करले। उसने अपने हृदयकी साध मिटा ही ली। भक्तवत्सल प्रभुने भक्तकी मनोकामना पूरी की। ठाकुर लोचनदास लिखते हैं—

"केहो बुके पदयुग धरिला आनन्दे।"

कोई सौभाग्यवती रमणी प्रभुके श्रीअङ्गमें तैल-हरिद्रा लेपन कर रही है, और मन ही मन शचीनन्दनके अपरूप मनमोहन रूपराशिकी बात सोच रही है।

केहो रहे उद्वर्त्तन श्रीअङ्गे लेपिया।
केहो देखे रूपराशि अथिर हइया॥

कोई सुन्दरी प्रभुके श्रीअङ्गमें गङ्गाजल ढाल रही है, कोई चित्र-लिखित सी निर्निमेष दृष्टिसे श्रीगौराङ्गके मुखचन्द्रकी रूपसुधा पान कर रही है।

केह चित्तार्पित हञा नेहारे गौराङ्गे।
केहो जल देइ शिरे आनन्द तरङ्गे॥

इन सब नयनानन्द-कर मधुर दृश्योंको देखकर कोई कोई रमणी घने हास्य तरङ्गकी लहरी उठाकर प्रेमानन्दमें गद्‌गद भावसे निकटस्थ अन्य किसी सुन्दरीके शरीर पर लुढ़क पड़ती है।

"उन्मत्त हइया केहो हासे घने घने।"

जो परम सौभाग्यवती सुन्दरी रमणीवृन्द श्रीगौराङ्गके श्रीअङ्गके स्पर्शका सुखानुभव करती हैं, उनका मन निर्मल हो जाता है, उनका चित्त शुद्ध हो जाता है। उनका सुख पूर्णतः कामगन्ध रहित है। श्रीगौर भगवानके श्रीअङ्गके स्पर्शसे यदि मनुष्यके चित्तकी मलिनता दूर नहीं होती, यदि मन निर्मल नहीं होता, यदि चित्त शुद्ध नहीं होता तो और कैसे होगा? श्रीभगवानकी अलौकिक और महान् शक्तिका यही काम है। यह न हो तो श्रीभगवानकी महान् शक्तिका परिचय मनुष्यको कैसे मिलेगा? श्रीभगवानके श्रीअङ्गके स्पर्शकी महिमासे यदि यह सामान्य कार्य सिद्ध नहीं होता तो श्रीभगवानकी महान् शक्तिका महत्त्व ही क्या रह जायगा?

श्रीगौरभगवानके श्रीअङ्गके स्पर्शके सुखसे कुलकामिनियाँ पुलकित शरीर होकर प्रेमानन्दसे प्रेमाश्रु विसर्जन करने लगीं। रसिक भक्तकवि ठाकुर लोचनदास लिखते हैं—

परशे अवश अङ्ग हैल सवाकार।
गदगद वचन नयाने जलधार॥

उनके मनमें उस समय नित्यशुद्ध चिरपवित्र भगवद्‌भावका उदय हुआ। श्रीगौराङ्ग सुन्दरके अपरूप मुखचन्द्रके दर्शनसे वे भावमें विह्वल होकर हँसती हुई उनके साथ आनन्द करने लगीं। शचीमाता वहाँ उपस्थित थीं। उन्होंने पुरनारियोंके आनन्दसे आनन्दित होकर पुत्रके शुभ गात्रमें हरिद्रा कर्म सुसम्पन्न किया।

शचीमाँका पति शोक

इस समयकी एक कहानी ठाकुर लोचनदासने अपने श्रीचैतन्य-मङ्गल श्रीग्रन्थमें वर्णित की है। शचीमाताके हृदयमें इस शुभ समयमें पतिशोक जाग उठा। वे अपने हृदयके अदम्य शोकावेगको सम्हाल न सकीं। उपस्थित पुरनारी और आत्मीय पड़ौस के लोगोंको सम्बोधन करके वे अति दीन भावसे कातर स्वरमें कहने लगीं—

पतिहीन मुजि छार पुत्र पिताहीन। तो सभार सेवा कि करिब मुञि दीन॥ (चै० मं०)	मैं पतिविहीन तुच्छ और पिताहीन मेरा पुत्र—हम दीन तुम सबकी क्या सेवा करने योग्य हैं।

यह बात कहते-कहते वृद्धाकी दोनों आँखोंसे झर-झर अश्रुधारा बहकर उनका वक्षःस्थल निमज्जित हो गया। निमाईचाँदने इसे देखा, देखकर विशेष कातर होकर सिर झुका लिया। सिर तो उनका झुका था ही, उनका चन्द्रवदन और भी अवनत हो गया। पुरनारीवृन्द उनके मुखचन्द्रके निरीक्षणके सुखसे बिल्कुल ही वञ्चित हो गयीं। क्योंकि प्रभुने अपना चन्द्रवदन विशाल वक्षःस्थलमें छिपा लिया। उपस्थित पुरनारीवृन्द उनके भ्रमरके समान कृष्णवर्णके कुञ्चित केश पासको ही देख पा रही हैं। प्रभु पीढ़ा पर बैठे हैं। उनके कनक-केसरी सदृश नयनद्वयमें अश्रुविन्दु लक्षित हुए। मुक्ताफलके समान दो एक उष्ण अश्रुविन्दु प्रभुकी जंघा पर गिर पड़े। प्रभुका पितृ-शोक-सिन्धु उथल उठा है। शचीमाता यह देखकर बहुत व्यथित और व्याकुल हो उठीं, कुछ किंकर्त्तव्य विमूढ़ भी हो उठीं। कुलकामिनियाँ शचीनन्दनका ऐसा कातरभाव देखकर व्याकुलता पूर्वक रो पड़ीं। श्री चैतन्य मङ्गलमें लिखा है—

ए बोल वलिते शची गद्‌गद्‌ भाष। भिजिल आँखिर नीरे हृदयेर वास॥	इतना कहते-कहते शची माँकी वाणी गद्‌गद्‌ हो गई एवं आँखोंके अश्रुओंसे छाती भीग गई।
ऐछन कातर वाणी शची देवी बैल। शुनि गौरचन्द्र पँहु हेट माथा कैल॥	शचीदेवीने जब ऐसी कातरवाणी कही तो उसको सुनकर गौरचन्द्रने मस्तक नीचे नवा लिया,
चिन्तिते लागिला मोर पिता गेल कोथा। पूड़िते लागिल हिया पाइल बड़ व्यथा॥	और सोचने लगे कि मेरे पिता कहाँ चले गए; उनका हृदय जलने लगा और उन्हें बड़ा दुःख हुआ।
मुकुता गाँथिल जेन चक्षे पड़े पानी। देखिया तटस्थ हैला शची ठाकुरानी॥	उनकी आँखोंसे मोतीकी लड़ीके समान जलधार बहने लगी। यह देखकर शची ठकुरानी चुप हो गयीं।

आर जत नारीगण तार पाशे छिल ।
प्रभुर कान्दना देखि कान्दिते लागिल ।।

उनके आसपास और भी जितनी नारी-गण थीं वे गौरचन्द्रका रुदन देखकर रोने लगीं ।

ऐसे शुभ समयमें इस प्रकार शचीमाताकी एक दुःखकी बातसे सबको हर्षमें विषाद हुआ । तब शचीमाता आदरपूर्वक पुत्रको गोदमें लेकर बैठ गयीं । निज दुःख भूलकर प्रभुका दुःख दूर करनेके लिए जगज्जननी शचीमाता सर्वभुवनवन्द्य, निखिल जगत-पालक पुत्रको गोदमें लेकर स्नेहपूर्वक चिबुक पकड़कर प्रेमपूर्वक बोलीं —

सकल संसारे मात्र तुमि मोर धन ।
तुमि विमरिष प्राण छाड़िब एखन ।।
(चै० मं०)

इस सम्पूर्ण संसारमें वेटा ! एक मात्र तुम्हीं मेरे धन हो । तुम दुःखी होवोगे तो मैं अभी प्राण दे दूंगी ।

इतना कहकर अपने वस्त्रके अञ्चलसे निमाईचाँदके दोनों नेत्र पोंछ दिये, उनके चन्द्रवदन पर शत शत वार स्नेह चुम्बन दिये ।

प्रभुका माँको दुःख भरा आदेश

प्रभु कुछ शान्त तो हुए, पर मुँहसे बात नहीं निकल रही है । उनका कण्ठ स्वर गद्गद् हो गया है । प्रातःकालीन चन्द्रमाके समान उनका चन्द्रवदन मलिन जान पड़ता है । वे कुछ प्रकृतिस्थ होकर नवीन मेघगर्जनके स्वरमें जननीको सम्बोधन करके बोले —

मायेरे कहिल प्रभु शोन मोर कथा ।
कि लागिया एतदूर तोर मने व्यथा ।।

प्रभुने मातासे कहा,—"मेरी बात सुनो, तुम्हारे मनमें इतनी बड़ी व्यथा क्यों है ?

किवा धन नाहि मोर किवा पाइले दुःख ।
दीन एकाकिनी हेन कह अति रूख ।।

हमारे पास क्या नहीं है ? हमको क्या दुःख है ? जो दीन हीनके समान ऐसे रूखे वचन कहती हो ।

पिता-अदर्शन मोर स्मोङराइले तुमि ।
जेमन करिछे हिया कि बलिब आमि ।।
(चै० मं०)

तुमने मुझे पिताजीका अदर्शन होना स्मरण करा दिया, इससे मेरा हृदय कैसा हो रहा है ?—मैं क्या बताऊं ?"

शचीमाता पड़ौसी कुलकामिनीगणको दैन्यपूर्वक कह रही थीं-—"मैं पतिहीन, दरिद्र हूँ, तुम्हें क्या देकर सन्तुष्ट कर सकती हूँ"—यह बात प्रभुको बिल्कुल ही अच्छी नहीं लगी । उनके हृदयकमलमें जननीकी यह बात मानो शूलके समान बिंध गई ।

हमारे प्रभु त्रिलोकी नाथ हैं। क्या उनके घरमें किसी वस्तुका अभाव हो सकता है ? अतः उन्होंने यह बात याद दिलाते हुए मातासे कहा —

एक जने दुबार देह गुबाक् चन्दन।
यथेष्ट करिया देह जत लय मन॥

एक एक जनको दो दो बार सुपारी चन्दन दो और यथेष्ठ मात्रामें जितना तुम्हारा मन हो उतना दो।

सर्वाङ्ग लेपह सभार सुगन्धि चन्दने।
यथेष्ट करिया देह चिन्ता नाहि मने॥
(चै० मं०)

सबके सर्वाङ्गमें सुगन्धि और चन्दनका लेप करो और मनमें कोई चिन्ता न रखकर यथेष्ठ मात्रामें दो।

माताको इतनी बात कहने पर भी प्रभुको मनस्तुष्टि न हुई। वे पीढ़ासे उठ खड़े हो गये। अब वह नतसिर न थे, प्रफुल्ल कमलके समान दोनों नेत्र रोषभरे कुछ-रक्त वर्णसे लग रहे थे। दुःख और क्रोध-मिश्रित वज्रगम्भीर स्वरमें निमाईचाँदने मातासे कहा —

पृथिवी ते केहो जाहा नाहि करे लोके।
इङ्गिते करिब ताहा कहिल तोमाके॥
(चै० मं०)

"इस पृथ्वी पर जो काम कोई नहीं कर सकता, वह मैं केवल इशारे मात्रसे करूँगा, यह तुमसे कहता हूँ।

इस जगह गौर भगवानने बातों ही बातोंमें अपने ऐश्वर्यका कुछ परिचय दिया है। कार्यरूपमें इसका परिचय बादमें देंगे। स्वयं लक्ष्मीदेवीको व्याह करके वे घरमें लावेंगे, पहले ही उनके घरमें लक्ष्मीका भण्डार हो गया। किसी वस्तुका अभाव नहीं है। कहींसे आकर किसीने मानो शचीमाताके अक्षय भण्डारको परिपूर्ण कर दिया। शचीमाता इस विषयमें कुछ भी नहीं जानतीं, उन्होंने पुत्रके मुखसे यह बात सुनकर कुछ देर चुपचाप सोचा। मन ही मन विचार उठा कि, "मेरे निमाईके लिए असाध्य कुछ भी नहीं है। वह जब जो कुछ कहता है, उस समय वही करता है। बाल्यकालसे ही वह नाना प्रकारकी अपरूप बातें करता है। जो हो, इस समय बच्चेको बड़ा दुःख हुआ है, इसे शान्त करूँ।" इतना सोचकर शचीमाताने पुत्रका हाथ पकड़कर फिर पीढ़ा पर बैठाया, और मधुर वचनसे बहुत लाड़-प्यारके साथ बोलीं—"बेटा निमाई ! तू जो करनेके लिए कहेगा, मैं वही करूँगी। इस समय दुःख करनेकी आवश्यकता नहीं, शान्त हो जाओ।"

शचीनन्दन माताकी आज्ञासे शान्तशिष्ट बालकके समान पुनः मुँह नीचा करके पीढ़ापर बैठ गये। अब उनका वह भाव नहीं रहा। इस सुयोगमें समागता नदियावासिनी कुल ललनाओंने निमाई पण्डितकी अपूर्व रूपराशिका भली-भाँति अवलोकन कर लिया। ईषत् कोपाभिमान मिश्रित प्रभुके रोषभरे सुन्दर मुखमण्डल

की अपूर्व शोभा देखकर वे आनन्दसे द्रवित हो उठीं। वे शचीनन्दनके मुखचन्द्रसे अपनी आँखें फेर नहीं पा रही हैं। परन्तु शचीनन्दनके नयन जननीके मुखमण्डलसे अन्य दिशामें नहीं देख रहे हैं। यह बात नागरीगणकी दृष्टिमें भली-भाँति आ गयी। यह देखकर किसी रसिका नागरीने दूसरी रमणीके शरीरमें हाथ लगाकर इशारेसे कुछ कहा। जिससे नागरी वृन्दमें हँसीकी एक धूम मच गयी। शचीनन्दनका उस ओर ध्यान न था। वह सिर झुकाये धीरे-धीरे अपने पैरके अंगूठे को घिस रहे थे, और मन ही मन सोच रहे थे, "कितनी देरमें इस विधिसे उद्धार मिलेगा ?"

शुभ गात्र-हरिद्रा उत्सव समाप्त हुआ। शचीमाताने पुत्रके कथनानुसार सबको प्रचुर परिमाणमें तैल-हरिद्रा, गुवाक् चन्दन और मिष्ठान्न देकर परम परितुष्ट किया।

जेन मते आदेश करिला विश्वभर।
तेन मते तुषिल से ब्राह्मण सकल ॥
(चै० मं०)

जिस प्रकार विश्वम्भरने आदेश किया उसी प्रकार उनने सब ब्राह्मणोंको परितुष्ट किया।

श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीका शुभ गात्र-हरिद्रा

तत्पश्चात शचीमाताने वरकी प्रसादी तैल-हरिद्राको कन्याके घर भेज दिया। श्रीपाद वल्लभाचार्यने अपने घर विधि-पूर्वक अपनी कन्या लक्ष्मीप्रिया देवीका शुभ गात्र-हरिद्रा कर्म सम्पन्न किया। वहाँ भी नदियावासिनी कुलकामिनीगणका समागम हुआ। वहाँ भी आनन्द लहरी उठी। आनन्दधाम नदियानगरीमें आज लगता है कि पूर्णानन्द विराजमान हैं। निमाई पण्डितके विवाहकी बात सर्वत्र प्रचारित हो गयी है।

आज कि आनन्द नदिया नगरे।
निमाइर विवाह कथा प्रति घरे घरे ॥

इस शुभ गात्र-हरिद्रा-विधिके उपलक्ष्यमें आचार्यभवनमें और मिश्र पुरन्दरके गृहमें समस्त नदियावासी नर-नारी चर्व्य-चोष्य-लेह्य-पेय रूपमें परितोष पूर्वक मध्यान्ह भोजनसे परितृप्त हुए। दीयतां भोज्यतां शब्द दोनों ही ओर सुन पड़ते थे। श्रीपाद वल्लभाचार्य दरिद्र ब्राह्मण हैं, तथापि उनकी इकलौती कन्याके शुभविवाहमें उनके घरमें किसी द्रव्यका अभाव नहीं है। लक्ष्मीदेवीकी कृपासे उनका भी अक्षय भण्डार है। लक्ष्मीप्रिया देवी साक्षात् लक्ष्मीदेवीका अवतार हैं, यह बात नदियावासी प्रत्येक नर-नारीकी समझमें आ गई। श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाकी शुभ गात्र-हरिद्रा विधि सुचारु रूपसे सम्पन्न हुई।

वर-सज्जा

आज प्रभुके शुभविवाहका दिन है। नदियावासियोंके लिए आज बड़े आनन्दका दिन है। वर सजानेके लिए आज सभी मिश्रपुरन्दरके घर आये हैं। प्रभुके सङ्गी साथी प्रभुके दिव्य अङ्गकी वेशभूषा कर रहे हैं। निमाई पण्डित वर वेशमें अति सुन्दर लग रहे हैं। ठाकुर लोचनदासने अपने श्रीचैतन्यमङ्गल ग्रन्थमें प्रभुकी वर सज्जाके वेषका अति सुन्दर वर्णन इस प्रकार किया है :—

गन्ध चन्दने अङ्ग करिल लेपन। ललाटे तिलक जेन चांदेर किरन॥	प्रभुके अङ्गपर गन्ध-चन्दनादिका लेपन किया गया। माथे पर सुशोभित तिलक चन्द्रकिरणके समान प्रतीत हो रहा है।
मकर कुण्डल कर्णे करे झलमल। मुकुतार हार शोभे हृदय ऊपर॥	कानोंमें मकराकृत कुण्डल झलमल कर रहे हैं। मुक्ताकी माला हृदयके ऊपर शोभायमान है।
काजरे उजोर राता कमल नयान। भूरु युग जेन दुइ कामेर कामान॥	अरुणारे कमल-नयनोंमें काजल सुशोभित है। दोनों भौंहें कामदेवके धनुषके समान हैं।
अङ्गद कङ्कण दिव्य रतन अङ्गूरी। झलमल अङ्ग तेज चाहिते ना पारी॥	हाथमें अङ्गद कङ्कण और रत्नजटित दिव्य अंगूठी शोभायमान हैं। अङ्गका तेज ऐसे झलमल कर रहा है कि उसकी ओर देखते नहीं बनता।
दिव्य माला गले शोभे रक्त-प्रान्त-वास। गन्धे मह मह करे अङ्गेर बातास॥	गलेमें दिव्य माला तथा रक्तप्रान्तवास शोभायमान हैं। शरीरके स्पर्शकी हुई हवा सुगन्धिसे महक रही है।
सुवर्ण दर्पण करे जेन पूर्णचन्द्र। हेरि लोक निज हिया ना हय स्वतन्त्र॥	पूर्णचन्द्रके हाथमें स्वर्ण दर्पण देख कर मानों लोगोंका मन अपने वशमें नहीं है।

प्रभु वरसज्जामें सज्जित होकर दर्पणमें अपना मुख और सर्वाङ्गका सौन्दर्य देखकर हँस पड़े। कहाँ किस आभूषणकी कमी है, यह स्वयं ही अपने सखावृन्दको बतला दिया। उन लोगोंने भी उन उन स्थानोंको अलंकृत करके शचीनन्दनके मनके अनुसार वर-सज्जाकी।

सर्वाङ्ग दर्पणे मुख करि निरीक्षण।
नाना अलङ्कार परे शचीर नन्दन॥
(ज० चै० मं०)

प्रभुकी वर-सज्जा समाप्त होने पर लोग उनको घरके भीतर ले गये। सखावृन्दसे परिवेष्ठित होकर, दर्पण हाथमें लेकर, वर-साजमें सजधजकर प्रभु आँगनमें जाकर पीढ़ाके ऊपर खड़े हुए। शत शत प्रफुल्ल कमलके सदृश कुलकामिनियाँ उनको घेरकर खड़ी हो गयीं। उज्जवल तारका वेष्ठित पूर्णचन्द्रके समान शचीनन्दन आँगनमें सुशोभित होने लगे। उनकी अपरूप रूपसुधा नदियावासी प्राण भर कर पान कर रहे हैं। आकाशमें देव-देवीगणने अलक्ष्यरूपसे श्रीगौराङ्गका रूप दर्शन करनेकी अभिलाषासे दिव्ययानसे चढ़कर देवलोकसे मृत्युलोकमें आगमन किया है।

अन्तरीक्षे देवगण दिव्ययाने चाहे।
गोरा अङ्ग देखिवारे अनुरागे धाये॥
(चै० मं०)

प्रभुके सामने मङ्गल घट है। द्वारपर सुसज्जित डोली प्रस्तुत है। नाना प्रकारके वाद्य-निनादसे मिश्र-भवन परिपूर्ण हो रहा है। कुलनारीवृन्दकी शुभ हुलूध्वनि गगनमें व्याप्त हो रही है। शत-शत शुभ शङ्ख एक साथ ध्वनित हो रहे हैं। तत्कालीन वाद्ययन्त्रोंके नाम सुनिये।

नाना वाद्य बाजे, शत शंख गाजे,
मृदङ्ग पटाह काहाल।
आनन्दे दुन्दुभि, वाजये डिण्डिमि,
दण्डिम सूहरि रसाल॥
बीणा कविनास, वेणु मन्दभाष,
रवाब उपाङ्ग पाखोयाजु।
नदिया नगरे, आनन्द घरे घरे,
मङ्गल बधाइ वाजु॥
(चै० मं०)

नाना प्रकारके वाद्य बज रहे हैं। सैकड़ों शङ्ख गरज उठे; मृदङ्ग, नक्कारे, भेरी, आनन्द-दुन्दुभी, डुगडुगी, दण्डिम, रसाल-वंशी, वीणा, कविनाश, मन्द-मन्द वेणु, रवाव, उपङ्ग, पखावज बज उठे; नदिया नगरमें घर-घरमें आनन्द मङ्गल वधाई बज उठीं।

कुलनारीवृन्द प्रभुके शुभविवाहका मङ्गलगीत गाने लगीं :—

जय जय जय, चौदिके सुखमय,
गौराङ्ग चादरे विवाह।
कुलबधू मेलि, जय हुलाहुली,
आनन्दे मङ्गल गाह॥ ध्रु॥

गौरचन्द्रके विवाहकी चारों ओर जय-जयकार होने लगी। कुल-वधुगण जय-ध्वनि, हुलु ध्वनि और मङ्गल-गान करने लगीं।

वे क्या गा रही हैं, सुनिये —

न्यास वेष कर, पाट शाड़ी पर काजेर देह ना नयाने ।	केश-विन्यास करो, पाटकी साड़ी पहनो, नयनोंमें काजल लगाओ ।
छिरि विश्वम्भर, साजि सब दल विवाहे करल पयाने ।।	श्रीविश्वम्भर सब दल-बलके सहित विवाहके लिये प्रस्थान कर रहे हैं ।
हार केयूर, कङ्कण किङ्किणी नूपुर परह ना झाट् ।	हार केयूर, कङ्कण, किङ्किणी, नूपुर झटसे पहनलो ।
अलका सुनिकटे, सिन्दूर ललाटे चन्दन विन्दु तार हेठ् ।।	उनकी (श्रीविश्वम्भरकी) अलकावलीके निकट ललाट पर सिन्दूर और चन्दन विन्दु लगाओ ।
ताम्बूल अधरे, ताम्बूल वाम करे लीला ढूलि ढूलि जाह ।	उनके अधरों पर ताम्बूल है, तथा बायें हाथमें ताम्बूल है और वे लीलासे अर्थात् आनन्दसे झूम रहे हैं ।
देखि विश्वम्भर, जिनि पाँचशर जानि मन कला खाइ ।।	पञ्चशर कामदेवको भी परास्त करने वाले विश्वम्भरको देखकर मन लोट-पोट होता है।
ताम्बूल चर्व्वणे, हासिया बयाने कुन्द दशन विकसि ।	ताम्बूल चबानेमें और हँसकर बोलनेमें कुन्द सदृश दन्तावली विकसित होती है ।
बान्धुली अधरे, दशन-मधुकरे पाशे मधु लोभे वसि ।।	दशनरूपी मधुकर अधर रूपी बान्धुली पुष्पके पास मधुके लोभसे बैठे हैं ।
नागरी सारि सारि, चलिला कुतुहली मराल गमन सुठाम ।	पंक्ति बद्ध नागरी, मराल (हंस) की सुन्दर चालसे कुतूहल पूर्वक चल रही हैं ।
अङ्गेर माधुरी, बइछे विजुरी वसन शोभे अनुपाम ।। (चै०मं०)	अङ्गकी माधुरी विजली जैसी चमक रही है और अनुपम वस्त्र सुशोभित हैं ।

वरयात्रा

प्रभुने माताके चरणोंमें प्रणाम करके, गुरुजनको नमस्कार करके दिव्य यानमें आरोहण किया । चारों ओरसे मङ्गल सूचक हरिध्वनि उठकर नदियाके आकाशमें व्याप्त हो गयी ।

मायेे नमस्करि प्रभु चले शुभ क्षणे ।
उठिल मङ्गलध्वनि जय हरिनामे ।।

(चै० मं०)

साथमें वरयात्री श्रीअद्वैत, प्रभुके मौसाजी श्रीचन्द्रशेखर आचार्य, श्रीवास पण्डित, वनमाली आचार्य आदि मान्य पण्डित गण हैं। शचीनन्दनके सभी सङ्गी सखा साथमें हैं। नदियाके सड़कके दोनों ओर अट्टालिकाओंके ऊपर लोग ठसाठस भरे हैं। रास्तेमें भी बड़ी भीड़भाड़ है। अनेक पुरनारीगण शुभ हुलूध्वनि देती हुई साथ चल रही हैं, रसिक भक्त ठाकुर नरहरिके द्वारा विरचित एक सुन्दर पद यहाँ उद्धृत किया जाता है। वह समस्त नदिया-माधुरी और नवद्वीप-वैभव अपनी आँखों देखकर लिपिवद्ध कर गये हैं।

वेश वनाइया सहचरे ।
शशी सम सुवर्ण दर्पण देइ करे ।।ध्रु०।।

सहचरगण (गौरचन्द्रका) वेश सँवारकर चन्द्रके समान (उज्ज्वल) सोनेका दर्पण हाथमें देते हैं।

निमाइ चाँदेर वेश देखि ।
आनेर कि? देवे ओ फिराइते नारे आँखि ।।

निमाईचाँदका वेश देखकर, औरोंकी तो बात ही क्या देवगण भी अपनी आँखें नहीं हटा पाते हैं।

निज सखि सह आइ ।
करये मङ्गल कत पुत्र-मुख चाइ ।।

शचीमाता अपनी सखियों सहित पुत्रका मुख देखकर कितनी मङ्गल कामनाएँ कर रही हैं।

नव वधूगण दूरे रहिया ।
ना धरे धैरज गोराचाँद पाने चाइया ।।

नव-वधूगण दूरसे गौरचन्द्रकी ओर निहारकर धैर्य नहीं धर पा रही हैं।

उलु लुलु देय नारी गणे ।
विवाह-विनोद-कथा भरिल भुवने ।।

नारीगण हुलू-ध्वनि दे रही हैं। विवाहके विनोदकी कथा समस्त भुवनमें भर गई।

प्रणमिया जननीर पाय ।
विवाह करिते यात्रा करे गोरराय ।।

जननीकी चरण वन्दना करके, गौराराय विवाहके लिये यात्रा कर रहे हैं।

वेदध्वनि करे विप्रगणे ।
बाजे नाना वाद्यशब्द भेदये गगने ।।

विप्रगण वेदध्वनि कर रहे हैं। नाना वाद्योंके बजनेकी ध्वनि गगनको भेद रही है।

कौतुक कहिते केबा पारे ।
नरहरि साँतारये से सुख पाथारे ।।

इस कौतुकको कौन कह सकता है। नरहरि उस सुख-सागरमें तैर रहे हैं।

शचीमाताकी सखियाँ श्रीअद्वैतगृहिणी सीतादेवी, श्रीवास पण्डितकी गृहिणी मालिनी देवी, उनकी बहिन श्रीपादचन्दशेखर आचार्यकी पत्नी सर्वजया देवी, श्रीगदाधर पण्डितकी माता तिलोत्तमा देवी, श्रीपाद मुरारी गुप्तकी परम वैष्णवी वृद्धा जननी आदि सभी शचीनन्दनके शुभविवाहमें आयी हैं। सीता देवीने भाण्डारका भार अपने ऊपर लिया है। मालिनी देवीने रन्धनकार्य परिदर्शनका भार लिया है। शचीमाताकी बहिन पुरवासिनी कामिनीवृन्दके आदर-सत्कारके कार्यमें रत हैं। सभी आनन्द सागरमें निमज्जित हो रही हैं।

प्रभुने अपने घरसे शुभ गोधूलिके लग्नमें सुसज्जित पालकी पर बैठकर सङ्गी साथियोंको लेकर शुभयात्रा की।

तबे प्रभु शुभक्षणे गोधूलि समये।
यात्रा करि आइलेन मिश्रेर आलये॥
(चै० भा०)

सन्ध्या होते-होते सारी नदिया नगरी दीपमालिकासे सुशोभित हो उठी।

शत शत सहस्त्र सहस्त्र कोटि कोटि।
नवद्वीपमय हइल प्रदीप देउटि॥
(ज० चै० मं०)

नदिया नगर परिभ्रमण करके गङ्गातट पर गङ्गादेवीको नमस्कार और वन्दना करके नववर नवद्वीपचन्द्र यथासमय कन्यागृहमें आकर उपस्थित हुए। वैसे ही गगनभेदी जय जय ध्वनिसे दिगन्त प्रकम्पित हो उठा। शुभ शंखनादसे और कुलकामिनीगणके मङ्गलसूचक हुलूध्वनिसे श्रीपादवल्लभाचार्यका भवन परिपूर्ण हो उठा।

हेनमते वल्लभ आचार्य्य वाटि गिया।
जय जय शब्द हैल आकाश भरिया॥
(चै० मं०)

कन्या द्वारपर स्वागत

श्रीपाद वल्लभाचार्य अपने स्वजन वर्गको साथ लेकर द्वारपर आये और समादर पूर्वक पाद्य-अर्घ्य द्वारा नववरको वरण करके विवाह-सभामें ले गये। श्रीपाद वल्लभाचार्यके प्राङ्गणमें चन्द्रातपके नीचे विवाह-सभामें नानाप्रकारकी दानसामग्री सुशोभित हो रही है। सुन्दर सुसज्जित आलोक-मालासे विभूषित, पत्र-पुष्पसे शोभित दिव्य आसन पर नवद्वीपचन्द्र आसीन हो गये। विवाह-सभाकी उस समयकी शोभा वर्णनातीत थी। जो जन्म-जन्मार्जित सुकृतिके बलसे उस अपूर्व शोभाका दर्शन करके धन्य हुए थे, वे ही उस अपरूप शोभाका मर्म जानते हैं; भक्त महाजन कविगण कह गये हैं—

"से शोभा कहिते केवा पारे ।"

उसके वर्णन करने की चेष्टा व्यर्थ समझकर मैं दुःखी चित्त हो विरत होता हूँ। प्रभुका वह—

पूर्णिमार पूर्णचन्द्र जिनिञा वदन ।
ताहाते ईषत् हासि अमिया मिलन ।।

पूर्णिमाके पूर्णचन्द्रको परास्त करने वाला मुख मण्डल, उसपर मधुर हास्य अमृत मिलन सदृश है ।

तपत काञ्चन जिन अङ्गेर किरन ।
सुमेरु पर्व्वत जिनि देहेर गठन ।।

तप्त काञ्चन जैसी अङ्गकी कान्ति है और सुमेरु पर्वत जैसी देहकी गठन है ।

अङ्गद कङ्कण भुजे कनक अङ्गुरी ।
अरुण किरण करतल झलमलि ।।

भुजामें अङ्गद और कङ्कण है, सोनेकी अँगूठी है, हाथकी तलिया अरुण आभासे झलमल कर रही है ।

दिव्य मालतीर माला दोले गोरा अङ्गे ।
सुमेरु ऊपरे जेन गङ्गार तरङ्गे ।।

दिव्य मालतीकी माला गौरचन्द्रके अङ्गपर झूलती ऐसी प्रतीत हो रही है मानों गङ्गाकी तरङ्गें सुमेरु पर्वतसे अठखेलियाँ कर रही हों ।

मुकुट निकट ललाट तट साजे ।
काम कोटि कातर हेरिया रहे लाजे ।।

मुकुटके नीचे सुशोभित ललाटको देखकर कोटि काम कातर होकर लजाते हैं ।

श्रवणे कुण्डल दोले कि दिब तुलना ।
दूर कैल मानिनीर मानेर गरिमा ।।

श्रवणोंमें कुण्डलके डोलनकी तुलना किससे दी जाय । जिसने माननीके मानका गर्व दूर कर दिया ।

प्रभुके इस निखिल-भुवन-मोहन रूपसे विश्व विमोहित है । भाषाके द्वारा वर्णन करके उस अपरूप रूपराशिकी तुलना करनेकी चेष्टा करना व्यर्थ परिश्रम मात्र है । श्रीभगवानको जो अरूप कहते हैं, वे एकबार मेरे भुवन-पावनकारी, परम मङ्गलमय नदियाके चाँद श्रीशचीनन्दनका रूप देख जाँय । वासुघोष प्रभुकी भुवन-मोहन अपूर्व रूप राशि अपनी आँखों दर्शन करके वर्णन कर गये हैं, श्रीगौराङ्गके रूपकी तुलना नहीं है । उनका रचित पद नीचे उद्धृत किया जाता है ।

आहा मरि गोरारूपेर कि दिब तुलना ।
उपमा नहिल जे कषित वाण सोना ।।

अहा बलिहारी ! गौरसुन्दरके रूपकी क्या तुलना दी जाय ? जो कषित स्वर्ण है वह भी उपमा योग्य नहीं ।

मेघेर विजुरी नहे रूपेर उपाम ।
तुलना नहिल रूपे चम्पकेर दाम ।।

मेघकी बिजली भी उपमा योग्य नहीं । इस रूपकी तुलना चम्पकके गुच्छेसे भी नहीं होती ।

तुलना नहिल स्वर्ण केतकीर दल ।
तुलना नहिल गोरोचना निरमल ।।

स्वर्ण केतकीके दलसे भी उपमा नहीं बैठती । निर्मल गोरोचनसे भी तुलना नहीं होती ।

कुंकुम जिनिया अङ्ग-गन्ध मनोहरा ।
वासु कहे कि दिया गड़िल विधि गोरा ।।

कुंकुमको पराजित करने वाली मनोहर अङ्ग गन्ध है । वासु कवि कहते है कि विधाताने किस वस्तुसे गौरचन्द्रको बनाया ?

इस प्रकार अलौकिक अतुलनीय अपरूप रूपराशि लेकर हमारे प्रभु विवाह सभामें प्रिय सखावृन्दसे परिवेष्टित होकर नदियावासी नरनारीवृन्दके हृदयमें अनिर्वचनीय आनन्द रसका स्रोत खोलकर कौतुक देख रहे हैं। शचीनन्दनके मनमें आज बड़ा आनन्द है । आनन्द-धाम नदियामें सदानन्द गौरचन्द्र, आनन्दमयी लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ मिलेंगे, नवानुरागिणी नवबाला अभीप्सित वरप्राप्त करेगी, प्रेमानुरागी प्रेमिक नववर स्वाभिलषित प्रेममयी प्रेमिका प्रियतमाको प्राप्त करेंगे। वर कन्या दोनों ही प्रेमानन्दमें पुलकित हो रहे हैं, श्रीपाद वल्लभाचार्यके भवनमें आज श्रीश्रीगौर लक्ष्मीप्रिया युगल-मिलन होगा । नदियावासी नरनारी आनन्दमें मतवाले हो रहे हैं । सर्व जगत आनन्दमय जान पड़ता है, सब जीवोंके प्राणमें न जाने कैसा अभूतपूर्व, अश्रुतपूर्व आनन्द रसका स्रोत प्रवाहित हो रहा है। पशु-पक्षी, कीट-पतङ्ग, वृक्ष-लता, स्थावर-जङ्गम उस आनन्द-स्रोतमें बेसुध होकर निमज्जित हो रहे हैं; सारे जगतमें आनन्दकी तरङ्ग उठ रही है ।

नववरको आगत स्त्रीगण प्रीतिपूर्वक आवाहन करके अन्तःपुरमें ले गयीं । श्रीपाद वल्लभाचार्यकी गृहिणीने विधि पूर्वक वरण करके वरको धान्य-दूर्वाके द्वारा शुभ आशीर्वाद दिया । पुरकी ललनाएँ नववरको घेरकर खड़ी खड़ी उनकी रूप सुधाका पान कर रही हैं । शचीनन्दन मुँह नीचा किये खड़े हैं । उनके मुख पर हँसी और मनमें लज्जा है, ये भाव उनके बदनसे प्रकाशित हो रहे हैं। कन्याकी माताने सप्त-दीप-मालिका हाथमें लेकर सात बार नववरकी प्रदक्षिणा करके वरके चरणोंमें दधि ढाल दिया । यह शुभ लक्षण था । यह प्राचीन रीति थी । अब यह रीति देखनेमें नहीं आती ।

आइहगण आगे पाछे कन्यार जननी ।
वर उरथिते धनि चलिला आपनि ।।

सात प्रदक्षिण कैल सात दीप हाथे ।
चरणे ढालिल दधि हरषित चिते ॥
(चै० मं०)

कन्याका आनयन और शुभ क्रियाएँ

अब स्त्री-आचार, शुभदृष्टि और लौकिक आचारका शुभ समय उपस्थित हुआ। प्रभुके गण और कन्याके गण दोनों पक्ष उपस्थित हैं । श्रीपाद वल्लभाचार्यने कन्याको लानेकी आज्ञा दी। सुगठित सुन्दर सिंहासन पर बैठाकर कन्याके आत्मीय वर्ग नवबाला श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीको विवाह-मण्डपके नीचे लाये। नवबालाके अङ्गकी छटासे चतुर्दिक झलमल करने लगा। रत्नालङ्कार भूषिता, दिव्य वस्त्र-परिधाना, अवगुण्ठनवती नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीकी अङ्ग-ज्योतिसे विवाहका प्राङ्गण उद्भासित हो उठा।

तबे सेइ बल्लभ आचार्य्य द्विजवर ।
कन्या अनिवारे आज्ञा दिलेन सत्वर ॥

तब उन वल्लभाचार्य द्विजवरने शीघ्र कन्या लानेकी आज्ञा दी।

सुगठित सिंहासन माझे रूपवती ।
अङ्गेर छटाय झलमल करे क्षिति ॥

सुगठित सिंहासनके बीच रूपवतीके अङ्गकी छटासे पृथ्वी झलमल कर रही है।

रतन प्रदीप जले तार चारि पाशे ।
वदन जितल पूर्णचन्द्र परकाशे ॥

उसके चारों ओर रत्न प्रदीप जल रहे हैं, मुखमण्डलने पूर्ण चन्द्रमाके प्रकाशको भी जीत लिया।

सर्व्व अङ्गे अलङ्कार रतन काञ्चने ।
अन्धकार दूरे गेल ताहार किरणे ॥
(चै० मं०)

सब अङ्गोंके स्वर्ण और रत्न खचित अलङ्कारोंकी किरणसे सब अन्धकार दूर हो गया।

कन्यावर्ग लोगोंने वस्त्रालङ्कार भूषिता लक्ष्मीप्रिया देवीको आसन सहित पहले शचीनन्दनके सम्मुख लाकर उपस्थित किया। नवबाला लक्ष्मीप्रिया घूँघट काढ़े हैं। उनके हृदयमें आनन्दकी तरङ्ग उठ रही है। उनके चिरजीवनकी आशा आज पूर्ण हो गयी है। अपने प्राण वल्लभको सामने देखकर अञ्चलके भीतरसे ही उन्होंने हाथ जोड़कर उनको भक्तिभावसे प्रणाम किया। प्रभुको सातवार प्रदक्षिणा कराकर कन्यापक्षके लोगोंने लक्ष्मीप्रिया देवीको वरके सामने ऊँचा करके पकड़ा।

प्रभु प्रदक्षिण करि फिरे सात वार ।
कर जोड़ करि शिरे करे नमस्कार ॥

(चै० मं०)

इस बार दोनोंकी शुभदृष्टि शुभकर्मका आयोजन सम्पन्न हुआ। चारों ओर आनन्द ध्वनि उठी, कुलकामिनियोंकी शुभ हुलूध्वनिसे विवाह प्राङ्गण परिपूर्ण हो

उठा। दोनों पक्षके बाजे बजने लगे। दिव्य पट्ट-आच्छादन वस्त्रमें वरकन्याके सिर ढक दिये गये। तब नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीने अपने हाथसे अपना घूँघट उठाकर अपने प्राण वल्लभके प्रफुल्ल कमल सदृश मुखचन्द्रका दर्शन किया। चार आँखोंका शुभ मिलन हुआ। शुभक्षणमें, शुभलग्नमें श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाका शुभ मिलन हुआ। दोनोंने एक दूसरेको देखकर प्राण जुड़ाये।

अन्तःपट घुचाइल दोंहे दोंहा देखि।
दोंहे दोंहा देखि हिया जुड़ाइल आँखि॥

(चै० मं०)

अन्तरिक्षसे देव-देवियाँ पुष्प-वर्षा करने लगीं। चारों ओर जय जय ध्वनिसे आनन्दमय कोलाहल होने लगा। कुल ललनाओंने शत शत शङ्ख नादसे नदिया-गगनको शब्दायमान कर दिया। श्रीचैतन्य भागवतकार श्रीवृन्दावन दास ठाकुर लिखते हैं—

हरिध्वनि सर्व्वलोके लागिला करिते।	सब लोग हरि-ध्वनि करने लगे,
तुलिलेन सबे प्रभुरे पृथ्वी हइते॥	सबने प्रभुको पृथ्वीपरसे ऊपर उठाया।
तबे लक्ष्मी प्रदक्षिण करि सप्तवार।	नवलक्ष्मीने सात बार प्रदक्षिणा करके
जोड़ हस्ते रहिलेन करि नमस्कार॥	हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

प्रभु वरके आसन पर आसीन थे। वहाँसे उनको उठाकर विवाह-मण्डपके नीचे सुचित्रित आलेपन युक्त पीढ़ा पर बैठाया गया। लक्ष्मीप्रिया देवीको उनकी सखियाँ लाईं, तब वर पक्षके लोगोंने प्रभुको उठाया। इन लोगोंमें गदाधर पण्डित हैं, मुकुन्द हैं। उन्होंने प्रभुका हाथ पकड़ कर पीढ़े परसे उठाया, और इसके बाद शुभदृष्टिका आयोजन हुआ।

शुभक्षणमें शुभदृष्टि शुभकर्म सुसम्पन्न होने पर वरकन्या दोनोंमें एक दूसरे पर पुष्प फेंक कर आनन्द क्रीड़ा हुई। चारों ओर पुष्पवृष्टि होने लगी। सभी पुष्प-गुच्छ फेंक कर वर-कन्याको सप्रेम आवाहन कर रहे हैं। प्रभुके चरण-कमलमें नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीने हँसते-हँसते दिव्य सुगन्धित पुष्प-मालिका समर्पण की। उसके साथ-साथ भक्तिपूर्वक प्राणवल्लभको प्रणाम करके उनके श्रीचरण कमलमें आत्म-समर्पण कर दिया।

तबे शेषे हइल पुष्पमाला फेलाफेली।
लक्ष्मी नारायण दोंहे महाकुतूहली॥
दिव्य माल्य दिया लक्ष्मी प्रभुर चरणे।
नमस्करि करिलेन आत्म समर्पणे॥

(चै० भा०)

वर कन्यामें बड़ा कौन ?

इसी समय लक्ष्मीके गण और प्रभुके गणमें आनन्दका कोहाहल मचा। "वर बड़ा कि कन्या बड़ी ?"—इस प्रश्नकी मीमांसा नवद्वीपके बड़े-बड़े पण्डित भी न कर सके। प्रभुके गणमें पण्डितोंकी संख्या अधिक थी। निमाई पण्डितके शुभविवाहमें नवद्वीपके जितने अध्यापक पण्डित थे, सब निमन्त्रित होकर बारातमें आये थे। वृद्धसमाज, नव्य समाज, दोनों ही दलके विशिष्ट पण्डितोंकी मीमांसासे "वर बड़ा कि कन्या बड़ी ?" इस जटिल प्रश्नका समाधान न हो सका। जब पण्डितोंके द्वारा इस कूटतर्ककी मीमांसा निर्णीत नहीं हुई, तब अन्त:पुरकी स्त्रियोंके ऊपर इसपर विचार करनेका भार सौंपा गया। कन्या गणके नये समाजकी नवीना सुन्दरी कामिनियोंके सूक्ष्म विचारसे कन्या ही बड़ी सिद्ध हुई।

प्रभुके गण इस रमणी-हाईकोर्टके विचार-विभ्राटको देखकर अवाक् रह गये। कुछ भी बोलनेका साहस न कर सके। प्रभुके सखावर्गमें कोई कोई इस अद्भुत निर्णयसे सन्तुष्ट न होकर लेडीज़् पार्लमेन्टमें अपील करने चले। दो वृद्धा स्त्रियाँ कुछ दूरसे ही खड़ी होकर यह तमाशा देख रही थीं। एकने उनके पास जाकर अति नम्र वचनोंसे समादर पूर्वक पूछा, "यह कैसा निर्णय हुआ ? हमारे प्रिय सखा शरीरके आकारसे सारी नदियाके लोगोंमें बड़े हैं, विद्या-बुद्धिमें भी सबसे बड़े हैं, फिर वे कैसे कन्याकी अपेक्षा छोटे होंगे ?"

इनमें एक अत्यन्त रसिका वृद्धा नारी हैं, उन्होंने हँसकर उत्तर दिया—'बाबा ! तुम लोग लड़के हो, बालक हो, इस बातके रहस्यको क्या जानो ? परन्तु जब तुम लोग पूछ ही रहे हो तो कुछ सङ्केत रूपमें कहती हूँ, सुनो। देखो स्त्री-पुरुषमें कौन बड़ा और कौन छोटा है, इसका सिद्धान्त और प्रमाण देवता लोग ठीक कर चुके हैं। मनुष्य उसको अन्यथा नहीं कर सकते। देखो बाबू ! नारायणकी अपेक्षा लक्ष्मी देवी बड़ी हैं, इसी कारण लोग पहले लक्ष्मी देवीका नाम लेकर पश्चात् नारायणका नाम लेते हैं, जैसे लक्ष्मीनारायण, तथा राधाकृष्ण, सीताराम, दुर्गा-शिव इत्यादि। यहाँ तुम लोगोंके सखा आकारमें बड़े होने पर भी पाण्डित्यमें श्रेष्ठ होने पर भी हमारी लक्ष्मीके सामने वे प्रेमभिखारी हैं। क्या भिखारी कभी बड़ा हो सकता है ? यह साधारण बुद्धि भी तुम लोगोंमें नहीं है ? तुम लोग पाठशालामें पढ़ते हो, पण्डितके रूपमें प्रसिद्ध हो ! और इस साधारण प्रश्नकी मीमांसाके लिए हमारे शरणापन्न हो रहे हो ? धिक्कार है तुम्हारी बुद्धिको, धिक्कार है तुम्हारे पाण्डित्यको ! जाओ बोलो—"लक्ष्मीप्रिया श्रीगौराङ्गकी जय !"

प्रभुके सखा गदाधर पण्डितके सिवा और कोई नहीं हो सकते। इतनी सरल बुद्धिका आदमी, इतना अच्छा पढ़ा लिखा आदमी दूसरा कोई प्रभुके वयस्योंमें न था।

गदाधर पण्डित पहले न्यायशास्त्र पढ़ते थे, बहुत कम उम्रमें उन्होंने न्यायशास्त्रकी आलोचना छोड़कर भक्तिशास्त्रकी आलोचना आरम्भ कर दी। लेडीज़ पार्लमेण्टमें उनकी अपील डिसमिस होते देखकर वे प्रवीणा विचारक रमणीको सम्मानपूर्वक प्रणाम करके बिना कुछ कहे वहाँसे हटकर प्रभुके पास आकर खड़े हो गये। उस समय भी प्रभु पीढ़ाके ऊपर खड़े थे। उन्होंने अपने सखा गदाधरके मुखकी ओर एक बार प्रेम भरी दृष्टिसे देखा, और तिरस्कार हँसीसे स्वागत किया। उस हँसीका मर्म यह था कि "तुम स्वयं राधाशक्ति होकर नारीके मर्मको नहीं समझते, रमणीका मान, नारीकी महिमा नहीं समझते ?" प्रभुके इस समयके मनके भाव एक प्राचीन पदमें अति सुन्दर रूपमें वर्णित हैं। वह प्राचीन पद्यांश यहाँ उद्धृत किया जाता है।

"जे मोर भकत हबे,	जो मेरे भक्त होंगे वे पहिले राधा
आगे राधार नाम लबे,	नाम लेंगे फिर शेषमें वे मेरा (नाम) लें
शेषे मोर लय वा ना लय हे !"	चाहे न लें।

यह श्रीभगवानकी उक्ति है। राधाशक्ति गदाधर पण्डितने प्रभुके मनोभावको समझ कर सिर अवनत कर लिया। प्रभु यह समझकर फिर एक मधुर हँसी हँसे। प्रभु और गदाधरके सांकेतिक कथोपकथनको कोई समझ न सका।

कन्यादान

अब कन्यादानका शुभ समय आया। श्रीगौर लक्ष्मीप्रिया आस-पास विचित्र आलेपन युक्त पीढ़ापर बैठ गये।

तबे से कमलापति विश्वम्भर पहूँ।
एकत्रे वसिला वाम पाशे करि बहू ॥
(चै० मं०)

नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवी लज्जावनत मुखसे घूँघट काढ़कर बैठी हैं।

"लज्जानम्रमुखी से वसिला पहूँ पाशे।"

इस समय विवाह-सभाकी अपूर्व शोभा हुई। सभा-स्थित सब लोग श्रीगौराङ्ग और श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको युगलरूपमें देखकर आनन्दसागरमें गोते खाने लगे। उनके उस सुखका वर्णन वाणी द्वारा नहीं किया जा सकता। इसलिए श्रीचैतन्य-भागवतकारने लिखा है—

प्रथम वयस प्रभु जिनिया मदन।
वाम पाशे लक्ष्मी वसिलेन सेइ क्षण ॥
कि शोभा कि सुख जे हइल मिश्रघरे।
कोन जन ताहा वर्णिवारे शक्ति धरे ॥

श्रीपाद वल्लभाचार्य शुभलग्नमें सभा उपस्थित सब लोगोंकी अनुमति लेकर कन्यादान करनेके लिए बैठे। यथारीति पाद्य, अर्घ्य, वस्त्र, अलङ्कार, आसन आदि देकर उन्होंने जामाताकी पूजा की। उनके मनमें आज बड़ा आनन्द है। उनके सौभाग्यको देखकर बहुतोंके मनमें ईर्ष्या उत्पन्न हुई। ब्रह्मादि देवगण जिसके पाद पद्ममें पाद्य-अर्घ्य दे सकनेमें अपनेको कृतार्थ समझते हैं, देवराज इन्द्र जिनको दिव्यासन पर बैठाकर पूजाकर सकनेमें अपने इन्द्रत्वको सफल समझते हैं, ब्रज-सुन्दरियाँ जिनको पीताम्बर पहनाकर अपनेको धन्य मानती हैं, उन्हीं साक्षात श्रीकृष्ण स्वरूप श्रीगौर भगवानकी पादपूजा करके श्रीपाद वल्लभाचार्यने आज जो सुकृति अर्जनकी है वह देवदुर्लभ है। कोटि कोटि यज्ञोंके फलस्वरूप भी वह दूसरेके भाग्य घटित होने वाली नहीं है।

जाँर पादपद्मे ब्रह्मा पाद्य निवेदिया।
सृष्टर करता हैला प्रसाद पाइया॥
हेन से पादारविन्दे पाद्य देइ मिश्र।
जाँर आराधने घुचे संसार तमिश्र॥

जिनके चरणकमलोंमें पाद्य निवेदन करके कृपा प्राप्त कर ब्रह्मा सृष्टिके कर्त्ता बने, उन पादारविन्दोंमें मिश्रजी पाद्य दे रहे हैं, जिनकी अराधनासे संसारका अन्धकार दूर हो जाता है।

महेन्द्र जाँहारे दिला नृप-सिंहासन।
हेन जने देइ मिश्र विष्टर आसन॥

महेन्द्रने जिनको (अपना) नृपासन दिया उनको मिश्रजी विष्टर (कुशा) आसन दे रहे हैं।

जे प्रभु वसन धरे दिव्य पीतवास।
ताँहारे वसन देइ शुनिते तरास॥
(चैं० मं०)

जो प्रभु दिव्य पीताम्बर धारण करते हैं उनको वस्त्र देनेकी बात सुनकर भय-सा होता है।

श्रीपाद वल्लभाचार्यके समान सौभाग्यवान पुरुष त्रिलोकीमें कोई नहीं है। वे वैकुण्ठ-पतिको कन्या समर्पण करके कृतार्थ हो गये।

वल्लभ आचार्य सम नाहिं भाग्यवान्।
आपने वैकुण्ठ नाथे कैल कन्यादान॥

शुभकन्यादान कार्य सुसम्पन्न हो गया। नववर श्रीगौर सुन्दरके कर-कमलोंमें नवबाला श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका कोमल श्रीकर-कमल संस्थापित हुआ। दोनों परस्पर श्रीअङ्ग-स्पर्शसे प्रेमानन्दमें पुलकित हो उठे। गौर भगवान शचीनन्दनने अपने करकमलमें प्रियतमाका कोमल करकमलपल्लव लेकर सङ्केतसे मन ही मन नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीको बतलाया, "लक्ष्मी! तुमको मैंने अङ्गीकार तो किया, परन्तु मेरा यह अवतार ऐश्वर्यका अवतार नहीं है, यह तुम नहीं जानती हो। तुम ऐश्वर्यमयी हो, तुम्हारा स्थान वैकुण्ठमें है। नवद्वीप गोलोकधाम है, माधुर्य प्रेमका

विकास करनेके लिए ही मेरा यह अवतार है। ऐश्वर्य प्रकाशका यह स्थान नहीं है। कुछ दिनके बाद तुम इसको समझोगी, तथा अपनी सर्व ऐश्वर्यमयी मूर्ति संवरण करके परम माधुर्यमयी प्रेमभक्तिके साथ मिलित होकर मेरे अवतारके उद्देश्यको सिद्ध करोगी।"

श्रीगौर-भगवानके मनकी बात मनमें ही रही। नवबाला लक्ष्मीप्रिया प्रेमिक नववर गौर-भगवानके इस तत्वपूर्ण गुप्त मनोभावको क्या समझतीं ? वे प्रेमानन्दमें विभोर होकर प्राण वल्लभके अङ्ग स्पर्शके सुखका अनुभव करके कृतार्थ हो गयीं।



चतुर्थ अध्याय

वासर-गृहमें प्रभु

•

गोरा गुणमणि, प्राणप्रिया सह,
विलसये सेजे वासर घरे।
कुलवधूगणे, घन घन करु,
गतागति कत कौतुक भरे॥

गुणमणि गौरचन्द्र वासरगृहमें अपनी प्राणप्रियाके साथ विलास कर रहे हैं। कुल वधुएँ कितने कौतुकसे भरी बार बार आवागमन करती हैं।

केह नाना छल, करि परिहास,
करे हासि हासि मनेर सुखे।
केह गोरा करकमले,
ताम्बूल दिया कहे देह लक्ष्मीर मुखे॥

कोई अनेक छलसे परिहास करके मनमें प्रफुल्लित हो मुस्करा रही है। कोई गौरचन्द्रके करकमलमें पान देकर उनसे उस पानको लक्ष्मीदेवीके मुखमें देनेके लिए कहती है।

केह गोरा विधुवदने,
ताम्बूल दिते दिते बाड़ये प्रीति।
केह परशेर साधे बाँधे केश,
आउलाइते नारे धरिते धुति॥

गौरचन्द्रके मुखमें ताम्बूल देते-देते किसीके प्रीति बढ़ने लगती है। कोई स्पर्शकी इच्छासे (प्रभुके) केश विन्यास सँवारती है और वस्त्र नहीं सम्हाल पा रही है।

केह विश्वम्भर कोले लक्ष्मीरे,
बसाइया चारु भङ्गीते चाहे।
भणे नरहरि वासरे जे रस,
उथलये नाहि उपमा ताहे॥

कोई विश्वम्भरकी गोदीमें लक्ष्मीको बैठाकर सुन्दर चितवनसे निहार रही है। नरहरि कहते हैं कि वासरगृहमें जो रस उमड़ रहा है उसकी उपमा नहीं दी जा सकती।

यह पद रसिक भक्त श्रीनरहरि ठाकुर द्वारा रचित है। ये ब्रजकी मधुमती थे। ब्रजरसके रसिकने नवद्वीप रसमें मत्त होकर इस सुन्दर पदकी रचना की थी। ब्रजरस और नवद्वीप रस एक ही वस्तु है। श्रीगौराङ्गका युगल विलासानन्द नवद्वीप रसानन्दी रसिक भक्तके लिए ब्रजके श्रीश्रीराधागोविन्दके युगलविलासानन्दके

तुल्य है। नवद्वीप तत्त्व, नवद्वीप रस-तत्त्व, श्रीगौराङ्ग प्रभुके नवद्वीप-लीला-तत्त्वका अनुशीलन और आस्वादन जिन भाग्यवान गौरभक्तोंने किया है, वे इसमें व्रजरसका ही अनुभव करते हैं। इसी रसके रसिक थे श्रीनरहरि ठाकुर। इस रसके अन्तिम भक्त थे रसिक भक्त, नवद्वीपके सिद्ध चैतन्यदास बाबाजी[1]। सभी गौरभक्त उनको जानते हैं।

वासर-गृहमें वरकन्या

विवाहके बाद अब वर कन्याको वासर-गृह[2]में ले जानेका उद्योग होने लगा। श्रीपाद वल्लभाचार्यकी गृहिणी आकर श्रीनवद्वीपचन्द्रको स्नेह भरी गोदमें लेकर घर ले गयीं। नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीको वनमाली आचार्यकी भाग्यवती गृहिणी गोदमें लेकर सुसज्जित वासर-गृहमें ले गयीं। उनके पति जैसे वरके गृहकर्त्ता थे, वे भी उसी प्रकार कन्याके घरकी कर्त्री बन गयी थीं। इस शुभ समयमें फिर चारों ओर बाजे बज उठे। कुल ललनाओंकी शुभ शंख और हुलूध्वनिसे आचार्य भवन भर गया। शत शत कुलवधुओंने वरकन्याके साथ वासर गृहमें प्रवेश किया।

"शत शत कुलवधू वासरे मिलिल।"

लक्ष्मीप्रिया-श्रीगौराङ्ग युगल रूपमें वासर-गृहको आलोकित करते हुए आसीन हुए। चारों ओरसे नदिया-नागरीगण वर-कन्याको घेर कर बैठ गयीं। आचार्य-भवनमें मानो आज चाँदकी हाट लगी है। लक्ष्मीप्रिया देवीकी सखियाँ शचीनन्दनको लेकर नाना प्रकारसे कौतुक कर रही हैं। प्रभुके सखागण छिपकर सब देख रहे हैं। प्रभु सिर झुकाये उस चाँदकी हाटके बीच बैठे हैं। सबकी दृष्टि प्रभुके सुधामधुर सुन्दर मुखचन्द्रकी ओर है।

सबे अनिमिखे स्थिर नयने निरखे।	सब अनिमेष स्थिर नयनसे देख
चकोर चाँदेर लागि जेन रहे सुखे॥	रही हैं जैसे चकोर चन्द्रमाकी ओर
(चै० मं०)	देखकर सुख पूर्वक रहता है।

प्रभु सबके बीचमें बैठे हैं। बाँयें घूँघट काढ़े लक्ष्मीप्रिया देवी हैं। झुण्डकी झुण्ड नदियावासिनी सुन्दरी नवीना रमणीवृन्द प्रभुको घेरकर बैठी हैं।

जूथे जूथे तरुणी आइल प्रभु काछे।	समूहकी समूह तरुणीगण प्रभुके
बेड़िया रहिल विश्वम्भर करि माँझे॥	पास आईं और विश्वंभरको उन्होंने चारों
(चै० मं०)	ओरसे घेर लिया।

---

१. इनका जन्म बङ्गाब्द ११७५ गौराब्द २८३ में तथा लीला संवरण बङ्गाब्द १२८४ गौराब्द ३९२ में हुआ था।

२. विवाहोपरान्त वर-कन्याको जिस गृहमें लेजाकर हास-परिहास होता है उसको बंगालमें वासर-गृह कहते हैं।

प्रभुके अङ्ग स्पर्शसे, उनके श्रीअङ्गसे स्पृष्ट वायुसे सबका मन निर्मल हो गया। लज्जा-भय दूर भाग गया। प्रभुके मुखचन्द्रमें सुधामिश्रित हास्यका उदय होनेसे कुलकामिनीगणका लज्जा-तिमिर नष्ट हो गया।

से चन्द्रवदन हास्य उदय देखिया।
लज्जा-तिमिर सभाय गेल गलाइया॥
(चै० मं०)

सखियोंका कौतुक

श्रीभगवानकी कृपासे अन्तःकरण निर्मल होने पर, चित्त शुद्ध होने पर फिर लज्जा, भय, मान, अभिमान कुछ भी नहीं रहता। यही हुई लक्ष्मीप्रिया देवीकी सखियोंकी तथा वासर गृहकी नदिया नागरी वृन्दकी दशा। हास-परिहाससे उन्होंने निमाई पण्डितको विरक्त कर दिया। नदियाके सब लोग निमाई पण्डितको देखकर भयसे सिकुड़ कर रास्तेमें एक ओर खड़े हो जाते थे, बड़े बड़े धनी लोग उनको रास्तेमें देखकर पालकीसे उतर कर आदरपूर्वक प्रणाम करके एक ओर खड़े हो जाते थे। परन्तु आज लक्ष्मीप्रिया देवीकी सखियोंके सामने निमाई पण्डितका ऐसा कोई सम्मान नहीं हो रहा है। यह देखकर उनके मनमें भीतर ही भीतर कुछ रोष पैदा हो रहा है, परन्तु उसको प्रकट करनेका अवसर नहीं है, और न प्रकट करनेकी इच्छा हो रही है, क्योंकि उनका अपमान करने वाली रसिका बालिकावृन्द उनकी अत्यन्त प्रेमपात्री प्राण-प्रियतमाकी सखियाँ हैं। सखियोंको कुछ बोलने पर नव परिणीता अभिमानिनी प्रियतमाके मनमें दुःख होगा। प्रभु सब सहन कर सकते हैं, परन्तु प्रियाके दुःखको सहन नहीं कर सकते। भक्त-भगवानका यह सम्पर्क बड़ा ही मधुर होता है। भक्तवत्सल श्रीभगवान भक्तका दुःख दूर करते समय अपने माना-पमानको एक दम भूल जाते हैं। यहाँ श्रीगौर भगवानकी वही दशा हुई है। कोई बुद्धिहीन बालिका त्रिजगतके नाथ प्रभु विश्वम्भरका नाम लेकर पुकारती है, अण्ट-शण्ट बोलती है। रसिक चूड़ामणि प्रभु उसे हँसकर उड़ा रहे हैं।

नाम विपर्य्यय केहो करे वासर घरे।
विश्वम्भर गुणे भोरा परिहास करे॥
(चै० मं०)

कोई रसिका बालिका प्रभुको कह रही है—"हे वर महाशय! एक पान उठाकर हमारी प्रियसखी लक्ष्मीप्रियाके मुँहमें डालो। उनको बड़ी नींद आ रही है यह तुम क्या देख नहीं रहे हो? अजी तुम अपने हाथसे उठाकर सखीके मुँहमें एक पान दो, हम लोग देखकर सुखी होंगी।" इतना कहकर बालिकाने एक पान पानदानसे निकाल कर प्रभुके कर-कमलोंमें दे दिया।

केहो बोले गौरचन्द्र शुन मोर बोल।
गुयाखानि देह लक्ष्मी निन्दे भेल भोर॥
आपने तुलिया देह लखिमी वदने।
देखूक सकल सखी हरषित मने॥
(चै० मं०)

दूसरी कोई असीम साहसी बालिका शचीनन्दनके भ्रमरके समान काले सुन्दर केश-पास पर हाथ लगाकर सुसज्जित करके शिखा बाँधती हुई मनही मन कह रही है, "अहा ! ऐसे सुन्दर केश-पाश हमारी सखीके होते तो कितने आनन्दकी बात होती ?" इतना कहकर वह प्रभुके श्रीअङ्गोंके स्पर्श-सुखका अनुभव करके कृतार्थ हो गयी।

गौरचन्द्र केश केहो आउलाइया बान्धे।
हृदय-आनन्द देह परशेर साधे॥
(चै० मं०)

और एक रसिका रंगीली बालिका पानदानसे एक पान निकाल कर साहस पूर्वक प्रभुके मुँहमें देने गयी। बालिकाका हृदय थरथर काँपने लगा, प्रभुने यह देखकर प्रियतमाकी सखीका यथायोग्य सम्मान करके, हँसते हँसते उसका प्रेमोपहार पान ग्रहण किया। यह देखकर सब बालिकाएँ हँस पड़ीं। उस मधुर हँसीकी तरङ्ग लक्ष्मीप्रिया देवीके हृदय-सरोवरमें घात-प्रतिघात करने लगी। वे घूँघटके भीतरसे सखीकी ओर तिरछे नयनोंसे देखकर मुस्करा उठीं। श्रीगौराङ्ग यह देखकर परम सन्तुष्ट हुए। कोई बालिका प्रेमानन्दमें मत्त होकर हँसती हुई वरकी गोदमें जा गिरी।

"ढूलिया पड़िला केहो विश्वम्भर कोले।"

इससे उसको बड़ी लज्जा हुई। वह अत्यन्त घबराकर उठी और हँसती हुई वासर-गृहसे भागनेके लिए तैयार हो गयी। क्योंकि वरकी गोद, विवाहिता कन्याके लिये ही उपयुक्त स्थान है। वह स्थान अन्य बालिकाको अधिकार करते देखकर सभी ठहाका मारकर हँसने लगी। इससे उस कन्याके मनमें बड़ी लज्जा लगी। इसीकारण वह भागनेके लिए तैयार हो गयी। परन्तु भाग न सकी। दूसरी सखियाँ उसको पकड़ कर वरके निकट ले आयीं। इसी आनन्द-कोलाहलमें एक रसिका युवतीने लक्ष्मीप्रियाको उठाकर वरकी गोदमें बैठा दिया। शचीनन्दनकी गोदमें लक्ष्मीप्रिया बैठने वाली न थीं। परन्तु उनको बलपूर्वक पकड़कर बैठा दिया, और दो तीन सखियाँ उनको पकड़े रहीं। लज्जाशीला लक्ष्मीप्रिया देवी बड़ी विपदमें पड़ गयीं। परन्तु प्रभु चुपचाप बैठे रहे। उनको इससे बड़ा आनन्द हुआ। प्रियतमाको गोदमें पाकर वे उनको भलीभाँति दबाकर बैठ गये। इसका किसीको पता न लग सका। परन्तु लक्ष्मीप्रिया देवीने इसे मनही मन समझ लिया।

अङ्ग ठेलि पड़े केहो हिया उतरोल।
लखिमी तुलिया देइ गोराचाँदेर कोल ।।
(चै० मं०)

वासर-गृहमें इस समय उच्च हँसीकी एक विभ्राट तरङ्ग उठी। उस हँसीकी तरङ्ग घरके बाहर पहुँची। प्रभुके सखावृन्दने समझा कि वासरगृहमें कोई काण्ड हो गया। जिसने नववधूको प्रभुकी गोदमें रखकर यह रङ्ग जमाया था, वह परम सौभाग्यवती लक्ष्मीप्रिया देवीको लक्ष्य करके बोली—

हेन भाग्यवती केवा आछे।
गौरचन्द्र हेन पति पाइयाछे काछे।।
कोन् तप कैल एइ कोन् व्रतदान।
देव आराधना कोन् साधिल गेयान ।।
(चै० मं०)

इस (लक्ष्मीप्रिया देवी) के समान भाग्यशालिनी कौन होगी? इसने गौरचन्द्र जैसा पति जो पाया है। इसने ऐसा कौनसा तप, व्रत या दान किया है, कौनसी ऐसी देवाराधनाकी है या ज्ञान साधा है?

यह सोचकर उनके मनमें ईर्ष्याका उद्रेक न हुआ। लक्ष्मीप्रिया देवीकी अनुगामिनी दासी होकर श्रीगौर भगवानकी सेवाके सुखकी अधिकारिणी बनूँगी—यह सोचकर उसकी उस समय देवीके प्रति सखीबुद्धि न रही। उनसे लक्ष्मीप्रिया देवीको यथार्थ देवी समझकर मनमें निश्चय कर लिया कि उनका सङ्ग प्राप्त होनेसे सब कार्य सिद्ध हो जायगा। शचीनन्दनको नित्य एक बार आँख भरकर देख लेने और उनकी रूपसुधा पान कर लेने मात्रसे नदिया-नागरीवृन्दको सर्वसिद्धि प्राप्त हो जाती थी। इसकी अपेक्षा उनको और कोई ऊँची आशा न थी। पहले कहा जा चुका है कि नदिया नागरीवृन्दको केवल गौरचन्द्रके दर्शन मात्रमें ही सुख है, उनके चन्द्रवदनको देखनेसे ही उनको परमानन्द प्राप्त होता है। गौरचन्द्र उनकी ओर ताके या उनसे रसालाप करें, यह भाव उनके मनमें कभी नहीं आता था। नदिया-नागरीके इस विशुद्ध भावको श्रीलोचनदास ठाकुरने अपने श्रीचैतन्य मङ्गल श्रीग्रन्थमें निम्नलिखित चार पंक्तियों में सुन्दरता पूर्वक व्यक्त किया है।

लखिमी ए सब अङ्ग विलास करिब।
आमरा इहार कबे परश पाइब ।।
एइ आमादेर आशा ह'ब इहार दासी।
तबे से देखिब निति गौर-रूप-राशी ।।

लक्ष्मी ये सब अङ्ग-विलास करेगी। हमें इनका स्पर्श-सुख कब प्राप्त होगा? हमारी एकमात्र आशा यही है कि इनकी दासी बनें। तभी तो गौर-रूप-राशिके दर्शनका सौभाग्य नित्य प्राप्त हो सकेगा।

यह नवयुवती श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी प्रिय सखी चित्रलेखा थी। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया और विष्णुप्रिया देवीकी अनुगामिनी बनकर मधुर भावसे श्रीगौराङ्ग

भजनका सूत्रपात यहींसे हुआ। नरहरि ठाकुर श्रीगौराङ्ग प्रभुका मधुर भावमें भजन कर गये हैं। उनके प्रिय शिष्य ठाकुर लोचनदासने भी यही किया है। उनके बाद सैकड़ों भाग्यवान् वैष्णव साधुओंने उनका अनुगमन किया है। सिद्ध चैतन्यदास बाबाजी प्रभृति नवद्वीप-रसानन्दी गौर-गत-प्राण रसिक भक्तगणने इसी पथका पथिक बनकर श्रीगौराङ्गके चरणोंमें स्थान प्राप्त किया है। गोलोकवासी प्रभुपाद नवद्वीपचन्द्र गोस्वामीने अपने प्रसिद्ध वैष्णवाचार्य दर्पण श्रीग्रन्थमें यही लिखा है—

विष्णुप्रिया आदि करि नवद्वीप सुनागरी
गौर-रसे निमग्न सदाइ।
ताँदेर अनुगा ह'ब निताइ पदरज पाव
नवद्वीप दास गाइ ताइ॥

श्रीविष्णुप्रिया आदिसे ही नवद्वीपकी सुनागरी हैं और सदा गौर-रसमें निमग्न रहती हैं। उनकी अनुगामिनी होकर ही निताई-पद-रज मुझे प्राप्त हो सकेगी— इसीलिये नवद्वीपदास उनका गुणगान करते हैं।

प्रकृत भजन-पथ दिखलाकर इन वैष्णव महात्माओंने कलिग्रस्त अधम जीवोंका विशेष उपकार किया है।

प्रभुको वासरगृहमें छोड़कर हम अलक्षित भावसे विचार-पथमें आ पड़े हैं। प्रभुके अङ्कमें लक्ष्मीप्रियादेवी अभी बैठी हैं। अत्यन्त सुन्दर शोभा हो गयी है। श्रीगौराङ्गका यह नयन-रञ्जन युगल-विलास-दर्शन-सुख जितना ही स्थायी हो उतना ही मङ्गल हैं। इसीसे जान पड़ता है कि भक्त वत्सल रसिक-चूड़ामणि हमारे प्रभुने भक्तोंके चित्तके विनोदनके लिए यह तमाशा किया था। ऐसा न होता तो ऐसे मधुर समयमें तर्क-वितर्ककी शुष्क बात कहाँसे आ जाती? कृपामय प्रभुकी कृपानिदर्शनके सिवाय इसमें दूसरी बात कुछ नहीं है। कृपालु रसिक भक्त पाठकवृन्द प्रभुके इस लीलारङ्गको स्थिर चित्तसे ध्यान देकर समझें। श्रीभगवानकी कृपानुभूतिके बिना इन निगूढ़ रहस्योंको कोई समझ नहीं सकता। प्रत्येक सांसारिक कार्यमें प्रभुकी कृपादृष्टि लक्षित होती है। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि इस कार्यमें यही बात है।

लक्ष्मीप्रिया देवी बड़ी विपदमें पड़ी हैं। उनको प्रभुकी गोदमें बैठाकर सब मजा ले रही हैं, रसरङ्ग कर रही हैं। वह लज्जासे गड़ी जा रही हैं। उनको उनकी तीन प्रिय सखियोंने पकड़ रक्खा है, कैसे उठें? हमारे रसराज प्रभु निस्पन्द और निर्विकार बैठे हैं। कोमलाङ्गी प्रियतमाके कोमल अङ्गके स्पर्शसुखमें वे बिल्कुल ही तल्लीन हो रहे हैं। इस बीचमें थोड़ी सुविधा पाकर लक्ष्मीप्रिया देवी जोर करके प्राणवल्लभकी गोदसे उतरकर बैठ गयीं। उनकी इस घबराहटका कारण है। बहुत देर तक वे प्राण वल्लभकी गोदमें बैठी थीं, इससे उनके प्राणनाथको कष्ट हो रहा था। प्रियतमके कोमल जंघोंके ऊपर उनके गुरु नितम्बका गुरुभार पड़ा था, यह सोचकर

नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीको व्यथा हुई और वे प्रभुके अङ्कसे सत्वर उठ खड़ी हुई। प्रभुको कष्ट हो रहा है, यह सोचकर ही वे विपदग्रस्त हुई थीं। वे अभीसे प्राणवल्लभकी व्यथासे व्यथित हो रही हैं। परन्तु रसिक चूड़ामणि प्रभुके मनके भाव ऐसे नहीं हैं, वे प्रियतमाको गोदमें पाकर मानो आकाशके चाँदको हाथमें पा गये, वे प्रियतमाके अङ्गस्पर्शके सुखसे परम आनन्द अनुभव कर रहे थे। पश्चात् सुविधा पाकर प्रभुकी, अपनी प्रियतमाके साथ ये सारी रसकी बातें अवश्य हुई।

वर-कन्याका भोजन

दो पहर रात बीत चुकी, तब कन्याकी माताने वासरगृहमें प्रवेश किया। उसको देखकर सब शिष्टतापूर्वक चुपचाप बैठ गयीं। उन्होंने एक वयस्था रमणीको सम्बोधन करके कहा—"हाँ जी, इतनी रात हो गई है, बेटी और जामाताने अभी भोजन भी नहीं किया, यह क्या बिल्कुल ही भूल रही हो ? बेटी और दामादको लेकर केवल रङ्ग, तमाशा करनेसे काम न होगा। मेरे सोनेके बच्चे दिन भरके उपवासी हैं। पहले उनके भोजनकी व्यवस्था करनी चाहिए। तुम तो अवस्थामें सबसे बड़ी हो, तुम्हारी अक्लको क्या हो गया ?" इतना कहकर मृदु तिरस्कारसे वयस्था रमणीको कन्याकी माताने कुछ फटकार बतायी। उसने कुछ उत्तर न दिया और वर-कन्याके रात्रि-भोजनका आयोजन करने चल पड़ी। कुछ देरके बाद नाना प्रकारकी खाद्य सामग्रीसे पूर्ण एक स्वर्णकी थाली हाथमें लेकर वह रमणी पुनः वासरगृहमें प्रविष्ट हुई। दिव्य आसनके सामने नानाप्रकारकी भोजन-सामग्रीसे पूर्ण स्वर्ण थाली रखकर वर-कन्या दोनोंका हाथ पकड़कर उठाया और भोजन करनेके लिए कहा। वासर-गृहमें वर-कन्याका एकत्र भोजन दर्शन करना बड़े सौभाग्यसे, बड़ी ही सुकृतिके फलस्वरूप प्राप्त होता है। नदिया वासिनी कुल-कामिनियोंके सौभाग्यकी सीमा नहीं है। मिश्र दम्पत्तिकी सौभाग्य लक्ष्मीको उपलक्ष्य करके ठाकुर लोचनदासने लिखा है—

कि कहिब वल्लभमिश्रेर भाग्यराशि।
जार घरे कैला प्रभु ए पञ्चगराशि॥
कन्यावरे एक गृहे भोजन करिल।
शत शत कुलबधू वासरे मिलिल॥

उन वल्लभाचार्य मिश्रके सौभाग्यका क्या वर्णन किया जाय जिनके घरमें प्रभुने पञ्चग्रास किया। कन्या और वरने एक गृहमें भोजन किया जहाँ वासर-गृहमें सैकड़ों कुल-वधुएँ उपस्थित थीं।

हमारे प्रभु भोजनमें लज्जा नहीं करते। उन्होंने परम आनन्दपूर्वक शत-शत कुलकामिनीवृन्दसे वेष्टित होकर वासर-गृहमें प्रसन्न चित्तसे रात्रिका भोजन समाप्त किया। दिनमें उन्होंने उपवास किया था। उनको भूख बहुत लगी थी। श्रीमती

लक्ष्मीप्रिया देवी भी प्रभुका प्रसाद पाकरके कृतार्थ हो गयीं - प्राण वल्लभके अधरामृतके* लिए उनका मुँह बहुत दिनोंसे भूखा था। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी सौभाग्यवती सखियाँ उनके साथ प्रभुका प्रसाद पाकर कृतार्थ हो गयीं। वासर-गृहमें महाप्रसादकी लूट मच गयी। देवीकी सब सखियोंने छीना-झपटी करके प्रभुके अधरामृतका* आस्वादन करके अपने प्यासे प्राणोंको परितृप्त किया। इस प्रकार नाना प्रकारके क्रीड़ा विलासमें प्रभुकी वासर निशि समाप्त हुई। हमारे रँगीले प्रभुने वासरकी रात जाग करके बितायी।

"एइ मने रङ्गे ढङ्गे प्रभात हइल।"

नदिया नागरीवृन्द श्रीगौराङ्गके वासर-निशि जागरण करके निद्राके आवेशमें झूमती हुई घर जा रही हैं, और मनमें आनन्दित होकर गीत गा रही हैं—

आलो सइ नागरे देखिया वासरघरे। मन उचाटन छन् छन् चित जे केमन करे ॥ध्रु॥	हे सखि ! मैं वासर घरमेंनागर वर गौराङ्गको देखकर आ गयी। मनमें मेरे उच्चाटन हो रहा है और क्षण-क्षण मेरा चित्त कैसा कर रहा है !
गौराङ्ग चांदेर अङ्गेते, हल्द दिते सइ गियाछिनु। से रूपेर आगे, हल्द मलिन, रूपये झुरिया मनु ॥	हे सखि ! मैं गौराङ्ग चाँदके अङ्गमें हल्दी लेपन करने गयी थी। परन्तु उस रूपके आगे हल्दी फीकी पड़ गयी, मानो रूपने उसके रङ्गको निहत कर दिया।
मनु मनु मनु गो साखि हेरिया गौराङ्ग रूपे। साध हय जेन, कने हइ पुन ए वरे दि सब सूँपे ॥	हे सखि ! गौराङ्गके रूपको देखकर मनही मन यह साध होती है कि कन्या होकर फिर इस वरको सब कुछ आत्मसमर्पण कर दूँ।

* उच्छिष्ट प्रसादको वैष्णव लोग अधरामृत कहा करते हैं।

पञ्चम अध्याय

वर-कन्याकी विदाई और युगल रूपमें प्रभुका गृहागमन

•

आजि हैते लक्ष्मी तोरे कैनू समर्पण ।
जानिया करिबे इहार भरण-पोषण ।।

—श्रीपाद वल्लभाचार्यकी उक्ति ।
(चै० मं०)

विदाईका विषाद

अपराह्नमें वर-कन्याकी विदाईका समय आया । श्रीपाद वल्लभाचार्य और उनकी गृहिणीके मनमें अब वह आनन्द न रहा । अपनी दुलारी, प्यारी एकलौती कन्याको उन्हें आज दूसरेके घर भेजना है, यह बात मनमें आते ही उनकी हृदयतन्त्री मानो टूट गई । मुँहसे वे लोग बातें करते हैं, हाथसे काम करते हैं, परन्तु आँखोंके आँसू नहीं रोक पाते । दोनों हाथोंसे स्त्री-पुरुष अपनी अपनी आँखोंके आँसू पोंछ रहे हैं, और वर-कन्याकी विदाईके लिए उद्योग कर रहे हैं । वे सोचते हैं कि ऐसे शुभ समयमें इन निगोड़ी आँखोंमें इतना जल आता क्यों है ? मङ्गलकार्यमें आँखोंमें जल शोभा नहीं देता, अच्छा नहीं दीखता—चाहे वह प्रेमाश्रु हो या शोकाश्रु । यह सोचकर कन्याकी माता कातरभावसे अपने अञ्चलसे बार बार आँखें पोंछ रही हैं । पतिके साथ आँखें मिलते ही उनका दुःख समुद्र और भी उमड़ उठता है ।

इधर नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ उनकी सखियाँ बहुत हँसी खेल कर रही हैं । इस समय देवीको यह बिल्कुल ही अच्छा नहीं लग रहा है । वे वस्त्रालङ्कार पहनकर जननीके पीछे पीछे चल रही हैं । जननीके करुणाभरे दोनों नेत्रोंमें जल देखकर बालिकाके सरल प्राण व्याकुल हो रहे हैं । पिताके म्लान वदनको देखकर

उनका बाल-हृदय व्याकुल हो गया है। उनकी आँखोंसे भी अश्रुधार प्रवाहित हो रही है। बीच-बीचमें उनकी माता उनको गोदमें लेकर आदरपूर्वक मुख चुम्बन करके स्नेहपूर्वक कह रही हैं—"बेटी ! तुम मेरी लक्ष्मी बेटी हो ! छिः ! क्या ऐसे समयमें रोया जाता है ? तुम श्वसुर-गृह जाती हो, श्वसुर-गृह भी अपने ही गाँवमें है, दोनों वेला हम लोग तुमको देखने जावेंगे। बेटी ! तुम्हें दुःख ही किस बातका है ?" बालिका लक्ष्मीप्रिया यह कुछ भी नहीं समझ पा रही हैं। माताकी गोदमें घुसकर उनका गला अपनी कोमल भुजाओंसे आवद्ध करके सुन्दर मुखचन्द्रको माताके वक्षःस्थलमें छिपाकर सिसक सिसक कर रोने लगीं। आचार्य-गृहिणीने विपदमें पड़कर आचार्यजीको पास बुलाया। श्रीपाद वल्लभाचार्यने आकर रोती हुई कन्याको गृहिणीकी गोदसे अपनी गोदमें ले लिया। आदर-प्रेमके साथ पास बैठाकर पति-पत्नी दोनों अपनी कन्याको नाना प्रकारसे समझा रहे हैं। शत-शत स्नेह-चुम्बनोंने कन्याके अश्रुसिक्त वदनको और भी अश्रुसिक्त बना डाला। माता-पिताके स्नेह और आदरको प्राप्त कर नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवीने कुछ शान्त होकर गद्गद स्वरमें मातासे कहा—"माँ ! तुम मेरे साथ श्वसुर गृह चलो।" इतने दुःखके बीचमें भी माताके मुँह पर तनिक हँसीकी रेखा दौड़ गयी। उन्होंने कन्याका मुख-चुम्बन करके कहा, "अच्छा ! यही होगा। मैं भी तेरे साथ तेरे श्वशुरके घर जाऊँगी। तुम बेटी ! अब रोना तत।"

विदाकी तैयारी

लक्ष्मीप्रिया देवी माताकी बात सुनकर शान्त हो गयीं। वर-कन्याके वरणका शुभ समय आया। श्रीलक्ष्मीप्रिया गौराङ्ग दोनों दिव्यासन पर एक साथ खड़े हुए, प्रभुके वाम भागमें विद्युल्लता नवबाला लक्ष्मीप्रिया देवी शोभा पा रही हैं,

नदियावासिनी कुलललनाएँ नववर और नवबालाको घेर कर मण्डलाकारमें खड़ी हैं। श्रीपाद वल्लभाचार्य आँगनके एक पार्श्वमें म्लान मुख खड़े हैं। उनके मनमें भी आज हर्षमें विषाद उपस्थित है। उनकी गृहिणी उनके ही बगलमें खड़ी विषादयुक्त मुखसे वर-कन्याके मुखकी ओर देख रही हैं। शुभयात्राके समय वर-कन्याको वरण करके शुभ आशीर्वाद देनेके लिए दूर्वा, धान्य, सुपारी, चन्दन आदि थालमें सजाया गया है।

एकासने वंसे प्रभु लक्ष्मी वामपाशे।
चौदिके बेड़िल नारीगण तार काछे॥
वल्लभमिश्रेर हिया हरिषे विषाद।
यात्राकाले करे कन्या वरे आशीर्वाद॥
(चै० मं०)

वर-कन्या-वरण आदिका शुभ कार्य समाप्त हुआ। श्रीपाद वल्लभाचार्यने दीन भावसे जामातारूपी श्रीगौर-भगवानके निकट मन ही मन हाथ जोड़कर कुछ आत्मनिवेदन किया। जैसे श्रीचैतन्य-मङ्गलमें :—

धनहीन आमि छार नाहिं करि भाग्य।
कि दिब तोमारे दान किवा तब योग्य॥

मैं धनहीन हूँ मेरे भाग्यमें धूर भी नहीं है। मैं आपको क्या दान दे सकता हूँ? आपके योग्य कुछ भी नहीं है।

केवल आपना गुणे कैले अनुग्रह।
धन्य कराइले करि कन्या परिग्रह॥

आपने केवल अपने गुणसे मुझपर अनुग्रह किया है और मेरी कन्याको ग्रहण करके मुझे धन्य किया है,

आमि कि वलिब मोर कि आछे योग्यता।
तोमार निजगुणे तुमि आमार जामाता॥

मैं क्या कहूँ, मुझमें क्या योग्यता है। अपने निज गुणोंसे ही आप मेरे जामाता बने हैं।

देव पितृगण मोरे प्रसन्न हइल।
जखन तोमारे निज कन्या समर्पिल॥

देवता और पितृगण मुझपर उसी क्षण प्रसन्न हो गए जिस क्षण मैंने आपको अपनी कन्या समर्पित की।

तोमार अभय पाद-पद्मे ते शरण।
आर दुःख नाहिं मोरे दिवेक शमन॥

आपके अभयदानी पाद-पद्मोंमें मैंने शरण ले ली है, अब मुझे और दुख प्राप्त न होकर अवश्य शान्ति मिलेगी।

प्रभुके चरणोंमें श्रीपाद वल्लभाचार्यने मन ही मन इस प्रकार आत्मनिवेदन करके अपने मनकी बात उनसे कही। यह तो हुई उनकी मनकी बात। मनकी बात उन्होंने मन ही मनमें प्रभुसे कही। अब वह जामातासे कुछ मुँह खोल कर बोलेंगे। कन्याका हाथ पकड़कर जामाताके श्रीहस्तमें समर्पण करके कुछ बोलते-बोलते ब्राह्मणका कण्ठ अवरुद्ध हो गया, दोनों आँखोंमें छल्-छल् आँसू आ गये। उनके मुँहसे फिर कोई बात न निकली।

आर एक निवेदिये शुन विश्वम्भर।
ए बोल बलिते कण्ठे गद्गद् स्वर॥
छल छल करे आँखि करुणार जले।
लक्ष्मीकर धरि दिल गोराचाँद करे॥
(चै० मं०)

बहुत कष्टसे मनके आवेगको रोक कर श्रीपाद वल्लभाचार्य जामाताका हाथ पकड़कर सजल-नयन होकर अति करुणाजनक अत्यंत स्नेह-व्यञ्जक बात बोले—

आजि हैते लक्ष्मी तोरे कैनू समर्पण ।
जानिया करिवे इहार भरण-पोषण ।।

आज मैंने लक्ष्मीको आपके समर्पण कर दिया, यह जानकर अब इसका भरण-पोषण करना ।

मोर घरे छिला एइ घरेर ईश्वरी ।
आजि हैते तब दासी कोणेर बहुरी ।।

मेरे घरमें तो यह घरकी स्वामिनी बनकर रही है । आज यह नववधूके रूपमें आपके घरकी दासी है ।

मोर घरे छिल एइ स्वच्छन्द आचारे ।
आखटि करिया माये करित आहारे ।।

मेरे घरमें यह स्वच्छन्द घूमती - फिरती थी । और अपनी माँको परेशान करके आहार करती थी ।

मोर घरे आछिला ए माँ बापेर कोले ।
यथा तथा हैते आइले धरेसिया गले ।।

मेरे घरमें यह मां-बापकी गोदीमें ही रही है—जहाँ तहाँसे (खेल कूदकर) आकर गले लिपट जाती थी ।

सभार दुलारी एइ आमि अपुत्रक ।
घर मध्ये सबे मोर एइटि बालक ।।

यह सभीकी दुलारी रही है क्योंकि मैं पुत्रहीन हूँ । मेरे सारे घरमें एकमात्र बालक यही थी ।

आमि कि बलिब एइ तोर निजजन ।
मोहे मुग्ध हये बलि जतेक बचन ।।

मैं क्या बताऊँ यह तो आपकी ही है । मैंने तो मोहसे मुग्ध होकर इतनी बात आपके समक्ष बोल दी है ।

एइ जे वलिल सेइ आमि मूढ़मति ।
कि करिब मोर दया तुमि जार पति ।।

मैं मूढ़ मति हूँ इसीलिए मैंने इतना कहा है । आप जिसके पति हैं उसको मेरी दयाकी क्या अपेक्षा है ।

त्रिभुवने नाहिं लक्ष्मी समा भाग्यवती ।
आमि जत बलि सब ए माया पिरीति ।।
(चै० मं०)

त्रिभुवनमें लक्ष्मीके समान भाग्यवती कोई नहीं है । मैं जितना कहता हूँ वह तो माया मोहकी बातें हैं ।

इतनी बात कहते-कहते श्रीपाद वल्लभाचार्यके दोनों नेत्रोंसे झरझर आँसूकी धार बह चली । बहुत कष्टसे उन्होंने मनके आवेगको संवरण किया । उनकी गृहिणीने भी रोते-रोते वरकन्याको शुभ आशीर्वाद दिया । उनकी आँखोंसे भी अश्रुधारा बह रही है, अपने वस्त्रके अञ्चलसे आँसुओंकी धार पोंछकर रोते रोते अपनी रोती हुई कन्याको गोदमें लेकर डोलीमें बैठाकर उसके कानोंमें कुछ कहा । नवबाला लक्ष्मीप्रियाका मन आज बड़ा व्याकुल है । वे ससुराल जा रही हैं, उनके प्राणवल्लभ साथमें हैं, वे बड़ी आदरणीय नववधू हैं, इन सारी बातोंको वह भूल गयी हैं । वे मनमें सोच रही हैं कि उनके माता-पिता पराये हो गये । माताके

आदर और पिताके स्नेहसे वे सदाके लिए वञ्चित हो गईं। पिताका गला जकड़कर पकड़नेमें उनको जिस सुख अनुभव होता था, वह सुख सदाके लिए चला गया। माताके पास भोजनके लिए वे जो चुल्ली करती थीं, वह अब न कर सकेंगी। इसी दुःखसे बालिका लक्ष्मीप्रियाके मनमें एक स्वाभाविक कष्ट उपस्थित होकर उनको पीड़ित कर रहा है। उनको अब कुछ अच्छा नहीं लग रहा है।

विदाई और यात्रा

श्रीगौराङ्ग कन्या-विरह-सन्तप्त सास-ससुरको यथा-विधि प्रणाम करके प्रियतमाके साथ दिव्य यान पर सवार हुए। बाजे बज उठे, पुरनारियोंने शुभ शङ्ख ध्वनि की। हरिध्वनिसे नदिया-गगन परिपूर्ण हो उठा। नदियाके नर-नारी पुनः आनन्द सागरमें डूब गये।

चलिला से महाप्रभु निज प्रिया वामे।
लक्ष्मीर सहित चड़े मनुष्येर याने॥

महाप्रभु अपनी प्रियाको वाम भागमें लेकर चले और लक्ष्मीदेवी सहित पालकी पर चढ़े।

शङ्ख दुन्दुभि बाजे हरि हरि बोल।
नानाविध वाद्य वाजे आनन्द हिल्लोल॥
(चै० मं०)

उस समय शंख दुन्दुभी आदि बज उठे और हरि-हरि बोलकी ध्वनि होने लगी। नानाप्रकारके बाजोंकी आनन्द हिलोर उठने लगीं।

सुसज्जित पुष्पमयी डोली पर चढ़कर श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया युगल नदियाके पथपर बाहर निकले। नदिया नागरीकी आज अपरूप शोभा दृष्टिगोचर हो रही है। सारे नदियावासियोंकी दृष्टि गौर-लक्ष्मीप्रिया-युगल मूर्तिके ऊपर है। सबके मुँहसे धन्य-धन्य निकल रहा है। विशेषतः स्त्रियाँ श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाके युगलरूपको देखकर बिल्कुल ही अपने आपको भूल गयी हैं।

लक्ष्मीर सहित प्रभु चड़िया दोलाय।
आइलेन देखिते सकल लोक धाय॥

लक्ष्मीदेवी सहित प्रभु जैसे ही पालकीपर चढ़े, सब लोग दौड़कर उन्हें देखनेके लिए आये।

गन्ध माल्य अलङ्कार मुकुट चन्दन।
कज्जले उज्ज्वल दुइ लक्ष्मी नारायण॥

गन्ध, माला, आभूषण, मुकुट, चन्दन एवं (आँखोंमें) कज्जलसे शोभायमान वे दोनों लक्ष्मी-नारायणके समान प्रतीत हो रहे थे।

सर्व्वलोके देखिमात्र धन्य धन्य बोले।
विशेष स्त्रीगण अति पड़िलेन भोले॥
(चै० भा०)

सब लोग उहें देखकर धन्य-धन्य बोलने लगे। विशेष करके स्त्रीगण भ्रममें पड़ गईं।

पुरकी नारियाँ अपने-अपने घरकी उपरी छत पर चढ़कर निमाई पण्डितकी नववधूको देख रही हैं। मार्गके दोनों ओर लोगोंकी भीड़ लगी है। सघन जयध्वनि और शुभ हुलु ध्वनिसे नदियाके घाट-बाट परिपूर्ण हो रहे हैं। नदियावासिनी कुल-नारियाँ श्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाके अपरूप युगलरूपसे मुग्ध होकर लक्ष्मीप्रिया देवीको उपलक्ष्य करके कह रही हैं—

कत काल ए वा भाग्यवती हरगौरी।
निष्कपटे सेविलेन कत भक्ति करि॥

इस भाग्यवतीने कितने काल तक कितनी भक्ति करके निष्कपट भावसे शङ्कर-पार्वतीकी सेवा की है?

अल्प भाग्ये कन्यार कि हेन स्वामी मिले।
एइ हरगौरी हेन बुझि केह बोले॥
(चै० भा०)

क्या स्वल्प भाग्यसे कहीं किसी कन्याको ऐसा पति मिल सकता है? कोई दूसरी नागरी कहती है कि, जान पड़ता है ये ही शङ्कर-पार्वती हैं।

नवदम्पतिको लक्ष्य करके कौन क्या कहती है, सुनिये—

केहो बले इन्द्रशची रति वा मदन।
कोन नारी बोले एई लक्ष्मीनारायण॥

कोई कहने लगीं कि यह इन्द्र-शचीकी जोड़ी है अथवा ये रति और कामदेव हैं। कोई स्त्री बोली—ये लक्ष्मी नारायण हैं।

कोन नारीगण बोले जेन सीताराम।
दोलाय शोभिया आछे अति अनुपाम॥
(चै० भा०)

कोई-कोई नारीगण कहती—मानो ये सीताराम हैं और डोलीमें अति अनुपम रूपमें शोभायमान हैं।

इस प्रकार जिसकी जैसी अभिरुचि है, वैसा बोलकर सभी श्रीगौराङ्ग-लक्ष्मीप्रियाके युगल रूपकी प्रशंसा कर रहे हैं। सबके मुँहमें एक ही बात है। "मानो लक्ष्मीनारायण जा रहे हैं।" सभी एक दृष्टिसे लक्ष्मीनारायणके युगल रूपकी ओर देख रहे हैं—

"शुभ दृष्टि ते देखे लक्ष्मी नारायणे।"

गृहागमन

इस प्रकार आनन्द कोलाहलमें, बहुतसे लोगोंके साथ बाजे-गाजेके साथ सन्ध्याकालमें शचीनन्दन नववधूके सङ्ग युगल मूर्त्ति अपने घर पर आ उपस्थित हुए।

हेन मते नृत्यगीत वाद्य कोलाहले।
निजगृहे प्रभु आसिलेन सन्ध्याकाले॥
(चै० भा०)

शचीमाता पड़ौसी आत्मीय कुलललनाओंको साथ लेकर पुत्र और पुत्रवधू युगलकी शुभ अभ्यर्थना करनेके लिए तैयार हैं। वृद्धा आज आनन्दसे उत्फुल्ल है।

बड़े लाड़ प्यारके सोनेके चाँद निमाईकी सोनेकी बहू आज अपने गृह आयेगी। इस आनन्दको प्रकट करनेके लिए वाणी असमर्थ है। उन्होंने द्वार पर मङ्गलघट रखकर उसके ऊपर आम्र शाखा, नारियल फल आदि माङ्गलिक वस्तुएँ सजा रक्खी हैं। वरणका डाला सुसज्जित है, घृतका प्रदीप जल रहा है, चित्र विचित्र आलेपनसे युक्त दो अति सुन्दर पीढे आँगनके मध्यभागमें डाल रक्खे हैं। द्वार देश पर खड़ी होकर शचीमाता पुरनारीवृन्दके साथ वर-कन्याके शुभागमनकी प्रतीक्षा कर रही हैं।

एथा शची आनन्दित आइह सुह लैया।
पुत्र महोत्सवे बुले कौतुक करिया॥
सशाखा मङ्गल घट पातिल दुआरे।
नारिकेल फल दिला ताहार ऊपरे॥
निर्मच्छन सज्ज करे घृत बाति ज्वले।
घरेते आइला प्रभु सेइ शुभ काले॥
(चैं० मं०)

शचीमाताके पास खड़ी हैं श्रीअद्वैतगृहिणी सीतादेवी, श्रीवास पण्डितकी गृहिणी मालिनी देवी, चन्द्रशेखर आचार्यरत्नकी पत्नी, शचीमाताकी भगिनी सर्व्वजयादेवी, प्रभुकी धात्री माता नारायणी, मुरारी गुप्तकी वृद्धा मातृदेवी, गदाधर पण्डितकी परम वैष्णवी माता तिलोत्तमा देवी, वंशीवदन ठाकुरकी पितामही चन्द्रकला देवी, तथा अन्यान्य भाग्यवती नदियावासिनी रमणीवृन्द। इनका पवित्र नाम ठाकुर जयानन्दने अपने श्रीचैतन्य मङ्गल श्रीग्रन्थमें लिख रक्खा है, परन्तु दुर्भाग्यवश बहुतोंका परिचय नहीं दिया है। इन प्राचीन स्त्रियोंके नाम अति सुन्दर हैं। कृपालु पाठकवृन्द श्रीगौराङ्ग-युगल-विलास-दर्शन-सुखमें विभोर पुण्यवती नदियावासिनी इन रमणीवृन्दका नाम सुनकर धन्य हो जायँ, कानोंको पवित्र करलें।

नारायणी सर्व्वाणी मालिनी सीता जया।
चित्रलेखा सुलोचना मायावती छाया॥
सुभद्रा कौशल्या खेमा मुद्रिका जानकी।
चन्द्रकला रत्नमाला ऊषा चन्द्रमुखी॥
गङ्गा वैष्णवी विष्णुप्रिया* भाग्यवती।
ब्रह्माणी जाह्नवी गौरी सत्यभामा सती॥
सावित्री विजया लक्ष्मी रुक्मिणी पार्वती।
जाम्बवती अरुन्धती चम्पा सरस्वती॥

---

* यह विष्णुप्रिया किसी दूसरी वर्षीयसी पड़ौसिनका नाम है। इन्हें कोई प्रभुकी द्वितीय गृहिणी न समझ लें।

ये सभी शची माताकी प्रिय पड़ौसिन कुल ललनाएं हैं। उनकी सखीके रूपमें प्रसिद्ध हैं। निमाईचाँद विवाह करके नववधूको लेकर घर आ रहे हैं, ये सभी अतिशय आनन्दपूर्वक शचीके आँगनमें एकत्रित होकर नानाप्रकारके कौतुक रसमें मग्न हैं।

श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया युगलविलास-मुग्ध रमणीवृन्द शचीनन्दनको नववधूके साथ द्वारदेश पर उपस्थित होकर आनन्दसे मङ्गल गीत गाने लगीं—

अलका लुलित भाले, कवरी कुसुम माले,
चन्दन तिलक विन्दु गाये।
हाटक कुण्डल श्रुति, पङ्कज लोचन द्युति
शारद विशद इन्दु लाये॥
जय जय लक्ष्मी-गौरचन्द्र नाए॥
(ज० चै० मं०)

मस्तकपर लटें लटक रही हैं। चोटीमें फूलोंकी माला गुँथी हुई है। शरीरपर चन्दन और तिलक है। कानोंमें सोनेके कुण्डल धारण हैं। कमल जैसे नेत्रकी ज्योति भी शरदके पूर्ण चन्द्रके समान हैं। लक्ष्मी-गौरचन्द्रकी जय हो, उन्हें बारम्बार नमस्कार है।

मिश्र भवन आनन्द से पूर्ण हो गया। चतुर्दिक मङ्गलध्वनि सुनायी देने लगी। श्रीनरहरि ठाकुरने इसी समयका एक पद लिखा है, वह नीचे उद्धृत किया जाता है—

विवाह करिया विश्वम्भर।
श्वशुरालय हइते आइल निज घर॥

विवाह करके विश्वम्भर ससुरालसे अपने घर लौट आये।

जे आनन्द कहिते ना पारि।
करय मङ्गल जत पतिब्रता नारी॥

उस आनन्दका वर्णन नहीं किया जा सकता। जितनी पतिव्रता नारियाँ हैं, सब मङ्गलगान कर रही हैं।

शची पुत्रवधू कोले लैया।
कैल आशीर्वाद बहु धान्य दुर्वा दिया॥

शची माता पुत्र-वधूको गोदमें ले धान्य और दूर्वा आदि लेकर बहुविधि आशीर्वाद दे रही हैं।

श्रीशचीर सुखेर नाहि पार।
पुत्रमुख बधूमुख देखे कतबार॥

शची माँके सुखकी इस समय थाह नहीं है। बार-बार पुत्रका मुख और बहूका मुख देखती हैं।

लक्ष्मी विश्वम्भर शोभा देखि।
केह फिराइते नारे अनिमिख आँखि॥

लक्ष्मी और विश्वम्भर की शोभा देखकर कोई भी निर्निमेष नयनोंको हटा नहीं पातीं।

भुवन मोहन गोरा राय। सुमधुर भाषे परितोषय सबाय॥	भुवन मोहन गौरचन्द्र सुमधुर बोलीमें सबको परितुष्ट कर रहे हैं।
भाट नट वादकादि जत। करिलेन पूर्ण सकलेर मनोरथ॥	भाट, नट, और बाजा बजानेवाले जितने लोग थे सबका मनोरथ पूर्ण कर दिया गया।

शचीके आँगनमें देव और मानवकी धक्कामुक्की चल रही है। योगपीठमें सर्वयज्ञेश्वर त्रिलोकके स्वामी श्रीगौराङ्ग सुन्दर आज युगलरूपमें बैठेंगे। देव-देवीगण प्रच्छन्नवेशमें प्रच्छन्न अवतारकी प्रच्छन्न युगल-विलास-लीला देखने आये हैं। लाखों आदमी मिश्रपुरन्दरके गृहमें एकत्रित होकर प्रेमानन्दमें हरिध्वनि कर रहे हैं। सन्ध्याकालमें, चाँदनी रातमें मृदु-मन्द मलय पवन बह रहा है। जगतमें जो कुछ प्राकृतिक सौन्दर्य है, प्रकृति देवी इसी समय अवसर देखकर सारी सौन्दर्य छटाको विकसित करके श्रीगौर भगवानकी युगल-विलास-लीलाको अभिवादन करने आयी हैं, सुरधुनि गङ्गाजी श्रीगौराङ्ग जन्मभूमिके पाददेशमें आनन्दकी तरङ्गोंमें उछल-उछलकर मधुर तरङ्ग भङ्गिमामें प्रेमानन्दमें नृत्य कर रही हैं। सुनील गगनमें उज्ज्वल तारक रात्रि प्रेमानन्दमें हँसती हुई व्यग्र है। सुधाकर आज अवसर देखकर राशि-राशि सुधावृष्टि करके नदियावासी नरनारीके प्राणोंको शीतल कर रहे हैं। चारों ओर मानों आनन्दका स्रोत बह रहा है।

गृहद्वार पर स्वागत और घरमें उत्सव

शचीमाताने शीघ्र आकर डोलीसे नववधूको गोदमें लेकर अपने बहुत दिनोंके सन्तप्त प्राणोंको शीतल किया। निमाईचाँदके चन्द्रवदनको पकड़कर प्यारसे एक सस्नेह चुम्बन प्रदान किया। श्रीअद्वैत-गृहिणी सीतादेवी निमाईचाँदको गोदमें लेकर शचीमाताके साथ-साथ घरमें प्रविष्ट हुई। साथमें शतशः कुल बालाएँ मङ्गलगीत गाती-गाती चलीं। बाजा बजानेवाले फिर दूने उत्साहसे बाजा बजाने लगे। कुल ललनाओंकी शुभ हुलूध्वनिसे शचीमाताका गृह-प्राङ्गण पूर्ण हो गया। शत-शत शुभ शङ्खध्वनिसे मिश्रभवन प्रकम्पित हो उठा। आनन्द कोलाहलमें कोई किसीकी बात नहीं सुन पा रहा है, समस्त नदियाके नर-नारी आज प्रभुके घरमें उपस्थित हैं। लोगोंकी इतनी भीड़ है कि स्त्री-पुरुष धक्कमधक्का करके श्रीगौराङ्गके युगलविलासके दर्शनकी अभिलाषासे उन्मत्त होकर चल रहे हैं। इनके बीच अलक्षित भावसे देवदेवी-गण भी हैं, कौन किसको पहचानता है? सब आनन्दसे मतवाले हो रहे हैं, शचीका आँगन आज आनन्दका धाम है। भक्त कविने साध करके क्या कहा है?

"सर्व्व सुखमय हइल शचीर आगार।"

शचीमाताने नववधूको गोदसे उतारकर सीतादेवीकी गोदसे एकबार निमाई-चाँदको अपनी गोदमें ले लिया। इससे उनके प्राण शीतल हो गए। तत्पश्चात् सीतादेवीने विधिपूर्वक वरकन्याका वरण किया। शचीमाताने धान्य-दूर्वा देकर "चिरञ्जीवि हो"—कहकर आशीर्वाद दिया। मालिनी देवी आदि पूजनीय रमणी-गणने एक-एक करके नव विवाहिता वर-कन्याको शुभ आशीर्वाद दिया।

शचीमाता आनन्द विह्वल होकर पुत्रवधूके सुन्दर मुँहकी ओर देख रही हैं। वे एक बार नववधूके मुखचन्द्रकी ओर देखती हैं, और पुत्रके मुखकमलमें एक स्नेह चुम्बन प्रदान करती हैं और फिर पुत्रके मुखचन्द्रकी ओर देखती हैं और पुत्रवधूके मुखकमलपर स्नेहचुम्बन प्रदान करती हैं। मनके अत्यन्त आनन्दके कारण शची-माता इस प्रकार पुत्र और पुत्रवधूको कई बार लाड़ प्यार करके भी परितृप्त नहीं हो रही हैं। यह दृश्य बड़ा ही मनोरम है। श्रीगौराङ्गकी माधुर्य लीलाके चित्रकार ठाकुर लोचनदासजी लिखते हैं—

पुत्र आर बधू कोले करे शचीदेवी।
दुर्व्वा धान्य दिया बोले हय्रो चिरंजीवि॥

शचीदेवी पुत्र और वधूको गोदमें लेती हैं और दूर्वा, धान्य देकर कहती हैं—चिरञ्जीवी होवो।

पुत्रमुखे चुम्ब देइ बधूमुख चाञा।
बधूमुखे चुम्ब देइ पुत्र निरखिया॥

वधूके मुखकी ओर देखकर पुत्रका मुख चुम्बन करती हैं और पुत्रको निरखकर वधूका मुख चुम्बन करती हैं।

प्रभु ससुरालसे बहुत दान सामग्री लेकर आये हैं। प्रभुके विवाहमें सारे नदियाके लोगोंने दहेज दिया है। पहले वर्णन हो चुका है कि दरिद्र ब्राह्मण होते हुए भी श्रीपाद बलभाचार्यको अपनी एकलौती कन्याके विवाहमें समस्त नदिया-वासियोंसे विशेष सहायता प्राप्त हुई थी। तभी इतनी धूमधामसे लक्ष्मीप्रियादेवीका शुभ विवाह कर सके थे। जयानन्द ठाकुरने अपने श्रीचैतन्यमङ्गल ग्रन्थमें लिखा है—

आचार्य पुरन्दर लक्ष्मी सम्प्रदान करि।
नानाविध दानसंख्या करिते ना पारि॥

आचार्य पुरन्दर ने लक्ष्मीको समर्पण करके नाना प्रकारका दहेज दिया जिसकी गिनती नहीं हो सकती।

जत लोक गियाछिल विभा देखिबारे।
रजत काञ्चने यौतुक दिला विश्वम्भरे॥

जितने लोग विवाह देखने गये थे सभीने विश्वम्भरको चाँदी और सोनेके उपहार दिये।

शचीनन्दन यह सब यौतुक-द्रव्य-सम्भार देखकर मुस्कराये थे।

"यौतुक देखिया गौरचन्द्र ईषत् हासे।"

निमाईचाँदकी मौसीमां घरकी भाण्डारी हैं। वे विवाहकी सारी द्रव्य सामग्री घरमें रख रही हैं। शचीमाता बहुत ही व्यस्त हैं। उनको यह सब देखनेकी फुरसत नहीं है।

माँको ज्योतिदर्शन

माँ पुत्र और पुत्रबधूको गोदमें लेकर घरमें आयीं। दिव्य आसनपर श्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया अपने घरमें युगलरूपमें बैठे। जिस घरमें प्रभुका युगल-विलास हुआ, उस घरमें अपूर्व ज्योति आभासित हुई। उस ज्योतिकी छटा देखकर सब विस्मित हो उठे। पुत्रके शुभ विवाहके बाद कई दिनों तक निरन्तर वही ज्योति शचीमाता घरके बाहर और भीतर देखती रहीं। इस अद्‌भुत ज्योतिराशिसे उनकी आँखें चौंधिया जाती थीं। वे कभी-कभी पुत्रके पार्श्वमें अग्निशिखाके समान अत्यद्‌भुत ज्योति देखती थीं, घूमकर देखनेपर फिर वह ज्योति नहीं दीख पड़ती थी।

प्रभु पाशे लक्ष्मी हइलेन विद्यमान।
शचीगृह हइल परम ज्यतिर्धाम॥

प्रभुके पासमें लक्ष्मीदेवी विराजमान हैं। शचीगृह परमज्योति युक्त हो गया है।

निरवधि देखे शची कि घर बाहिरे।
परम अद्‌भुत ज्योति देखिते ना पारे॥

निरन्तर घर और बाहरमें परम अद्‌भुत ज्योति हो रही है जिसकी ओर शची माँ देख नहीं पातीं हैं।

कखनो पुत्रेर पाशे देखे अग्निशिखा।
उलटिया चाहिते ना पाय आर देखा॥
(चै० भा०)

कभी पुत्रके पास अग्निशिखा देखती हैं, लेकिन फिरसे जब लौटकर देखती हैं तो कुछ नहीं दीखता।

शचीमाताने एक और अद्‌भुत दृश्य देखा। उनके पुत्र और पुत्रवधू जिस घरमें बैठे थे, वहाँ निरन्तर पद्मपुष्पकी मनोरम सुगन्ध अनुभूत हो रही थी। शची-माता अत्यन्त आश्चर्यचकित होकर कुछ सोचने लगीं। कुछ देरके बाद उन्होंने मन ही मन सोचा—

बुझिलाम कारण इहार।
ए कन्यार अधिष्ठान आछे कमलार
अतएव ज्योति देखि पद्मगन्ध पाइ॥
(चै० भा०)

इसका कारण समझ गयी। इस कन्यामें कमलाका अधिष्ठान है इसीलिये ज्योति दीखती है, कमल जैसी सुगन्धि भी आ रही है।

प्रभु अपने घरमें प्रियतमा लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ युगलरूपमें बैठे हैं। मिश्रभवन सब सुखोंका आवास बन गया।

"सर्व्व सुखमय हइल शचीर आवास ।"

शचीमाता आज अपने दुर्जय पति-शोक भूल गयी हैं । उन्होंने सोचा —

आजि घर द्वार मोर सम्पूर्ण हइल । आजि मिश्र पुरन्दरेर शोक पाशरिल ।।	आज मेरा घर-द्वार परिपूर्ण हो गया और मिश्र पुरन्दरका शोक दूर हो गया ।

वनमाली आचार्यका विचित्र भाव

वरकर्त्तागण सभी वहाँ उपस्थित हैं । उनमें वनमाली आचार्य मुख्य हैं । उन्होंने प्रभुके द्वारा नियोजित होकर इस शुभविवाहकी अगुआयी की है । शचीमाता उनके ही ऊपर विवाहका सारा भार देकर निश्चिन्त थीं । उन्होंने भी यथासाध्य किसी कार्यमें त्रुटि नहीं आने दी । उनके सारे परिश्रम सफल हो गये हैं, सारी साध पूर्ण हो गयी है । उनके लिए आज बड़ा शुभ दिवस है, बड़े आनन्दका दिन है । उनके भाग्यसे आज श्रीगौराङ्गके युगल-विलास-दर्शनका सुख प्राप्त हुआ, इसी आनन्दसे वे उन्मत्त हो रहे हैं । वे प्रेमानन्दमें निमग्न होकर जड़वत् श्रीगौरलक्ष्मीप्रिया-युगल-रूप-माधुरी पान कर रहे हैं ।

श्रीवास पण्डित, चन्द्रशेखर आचार्यरत्न आदि अन्यान्य पण्डितगण उनको तदवस्थ देखकर विस्मित हो रहे हैं । वनमाली आचार्य-तत्व उनको अवगत न था । उनके इस अपूर्व प्रेमावेश भावका मर्म उनके मित्रगण कुछ भी समझ न पाये । एक वृद्ध पण्डित, सम्भवत: गदाधर पण्डितके पिता माधवाचार्यने वनमाली आचार्यके शरीरको हाथसे स्पर्शकर सारा गुड़ गोबर कर दिया । श्रीकृष्णकी युगल-विलास-सेवा-परायण चित्रा सखीने श्रीगौराङ्ग अवतारमें वनमाली आचार्यके रूपमें जन्म-ग्रहण किया है । यह समझनेकी शक्ति माधवाचार्य पण्डितमें न थी । इसी कारण वे प्रिय सखीके युगल-विलास-दर्शन सुखमें बाधक बने । वनमाली आचार्य एक वारगी चौंक पड़े, परन्तु तत्काल पुनः तन्मय हो गये । श्रीअद्वैत प्रभु वहाँ थे । वे सर्वज्ञ थे । यह देखकर वे माधवाचार्यका हाथ पकड़कर वाहर ले आये, किसीसे कुछ न कहा । किसीको कुछ पूछनेका साहस भी नहीं हुआ । प्रच्छन्नावतारके सारे भाव प्रच्छन्न होते हैं । गुप्त लीलाके सब भाव गुप्त हैं । श्रीगौराङ्ग लीलाका यही जटिल रहस्य है । जो इस रहस्यको भेद नहीं कर सकता, उसको श्रीगौराङ्ग लीलामधु पान करनेमें सुख न मिलेगा ।

श्रीगौराङ्ग सुन्दर स्वयं व्रजेन्द्रनन्दन हैं । अपनी प्रिय सखी चित्राके चित्तार्पित मनोभावको समझनेमें श्रीगौर भगवानको कुछ वाकी न रहा । वह करुण कटाक्ष

भावसे भक्तकी ओर बार बार देखते हैं, परन्तु भक्त निर्निमेष नेत्रोंसे उनके सुधामय मुखचन्द्रकी ओर ताकता रहा है। वनमाली आचार्यके पलक नहीं गिर रहे हैं। उनके दो नयन मानों दो मुखोंमें लिप्त हो गये हैं। मनकी साधसे वे श्रीगौराङ्ग-लक्ष्मीप्रियाके युगलरूप-रूपी सुधाका पान करके बहुत दिनोंके प्यासे प्राणको शीतल कर रहे हैं।

सारे लौकिक और माङ्गलिक कार्य करके शचीनन्दन जब युगल-भङ्ग करके उठे, तब वनमाली आचार्यको होश आया। प्रभु सर्वप्रथम उनके पास जाकर घटक चूड़ामणिका हाथ पकड़कर कौतुक करते हुए सुधा मधुर स्वरसे बोले—"पण्डित! तुम्हीं मेरे इस विवाहके मुख्य प्रेरक हो। तुमने बहुत परिश्रम किया है। कल मेरे घर भोजन करने आना। मैं तुम्हें खूब अच्छी तरह भोजन कराऊँगा।" इतना कहकर प्रभु अपने विवाहके घटक (अगुआ) महाशयको और कुछ कहनेका अवसर न देकर उनका हाथ पकड़कर बाहर आये।

उस समय तक वनमाली आचार्य पूर्णतः प्रकृतिस्थ नहीं हुए थे। कठपुतलीके समान वे प्रभुके साथ-साथ गये। प्रभुने उनको प्रेमपूर्वक पुकारा, उनके साथ प्रेमालाप किया, इसीसे वे आनन्दसे पिघल उठे। उसके ऊपर प्रसाद ग्रहण करनेका निमन्त्रण मिला। प्रभु निकट ही बैठकर स्वयं अपने हाथोंसे परोसेंगे, यह सोचकर वे प्रेमानन्दमें गद्गद् हो उठे। उन्होंने प्रभुसे कृतज्ञता प्रकट करके कुछ निवेदन करनेकी चेष्टा की, परन्तु प्रभुने उनका मुंह बन्द कर दिया। प्रभु उनके मनकी बात समझकर बोले—"पण्डित! अभी घर जाओ। तुम बहुत थक गये हो, यह तुम्हारा मुंह देखकर ही मुझे ज्ञात हो रहा है।" इतना कहकर प्रभु एक उलाँचमें वहाँसे प्रस्थान करके अपने सखावृन्दमें जा मिले। वनमाली आचार्य अपने रंगीले प्रभुके भाव-गतिको देखकर अवाक् रह गये। उन्होंने मन ही मन कहा—

"एसेछि नदे, देखबो बोले व्रजेर कानाइ। सेइ कि ओगो शचीर छेले दयाल निमाइ॥	मैं व्रजके कन्हैयाको देखनेके उद्देश्यसे नदियामें आया हूँ, क्या यह शचीका दुलारा दयालु निमाई वही कन्हाई है?
चाहिए आछि आकुल प्राणे धरबो वले कृष्णधने देय ना धरा से चित चोरा ए बड़ बालाइ।	मैं आकुल प्राणसे देखता हूँ कि कृष्ण धनको धर लूं। परन्तु वह चितचोर पकड़नेमें नहीं आता। यह बड़ा बली है।
एसेछि नदे, देखबो बले व्रजेर कानाइ॥" ग्रन्थकार	मैं व्रजके कन्हाईको देखनेके लिए ही नदियामें आया हूँ।

प्रभुके यहाँ गदाधरका भोजन

मिश्रगृहमें वह रात आनन्द और कोलाहलके बीच कैसे बीत गयी, किसीको ज्ञात न हो सका। सभी नववधूको लेकर व्यस्त हैं। कितने आदमी निमाईचाँदकी बहूको देखनेके लिए आये इसकी गणना नहीं है। निमाईचाँदको अब खोजकर पाना कठिन है। वे विवाह-बन्धनसे निष्कृति प्राप्तकर अपने मनमें आनन्दित हो सखावृन्दके साथ नदिया भ्रमण कर रहे हैं, गङ्गातट पर बैठकर कौतुक कर रहे हैं। शचीमाता "निमाई कहाँ गया ? निमाई कहाँ गया ?" कहकर सबसे व्याकुल-सी होकर पूछ रही हैं। उनकी प्रिय सखी मालिनी देवीने कौतुकवश हँसते-हँसते उत्तर दिया—"दीदी ! तुम क्या सोच रही हो ? अब तुम्हारा निमाई बहूको छोड़कर कहीं न रह सकेगा। देखो वह आया।" शचीमाता मुस्कराने लगीं। कुछ बोल न सकीं। थोड़ी ही देरमें कमरमें वस्त्र बाँधे लाठी हाथमें लिए गदाधरके साथ दौड़ते हुए शचीनन्दन घर पर आ उपस्थित हुए। माताको सामने देखकर मधुर मुस्कानके साथ बोले, "माँ ! आज गदाधर और मैं एक साथ बैठकर भोजन करेंगे। शीघ्र भोजनकी तैयारी करो। मुझे बड़ी भूख लगी है।" शचीमाताने प्रभुको प्रेमपूर्वक कहा—"बेटा ! तुम इतनी रात तक कहाँ थे ? आजके दिन क्या जहाँ तहाँ घूमा जाता है ?" प्रभु कुछ बोल न सके। गदाधरके साथ एक जगह बैठकर उन्होंने उस रात घरमें भोजन किया। शचीमाताने उनको भोजन कराकर परितृप्त किया। पुत्रको भली भाँति खिलाना ही शचीमाताका प्रधान कार्य था।

वनमालीका भोजन और प्रभुका परिवेशन

दूसरे दिन रातको प्रभुकी फूलशैया होगी। शुभ-विवाहके घटक वनमाली आचार्यको प्रभुने विशेषरूपसे आमन्त्रित किया है। माताको यह बतला दिया है। दूसरे कुटुम्बके लोग भी निमन्त्रित हैं।

शचीमाताने नानाप्रकारकी भोजन सामग्री तैयार की है। प्रभु स्वयं परोस रहे हैं। प्रभुका अधिक लक्ष्य वनमाली आचार्यकी ओर है। यह देखकर श्रीनिवास पण्डित, चन्द्रशेखर आचार्य आदि प्रभुके आत्मीय वर्गने प्रभुको लक्ष्य करके एक मजाक किया। पहले वे एक दूसरेका अङ्ग स्पर्श करके इशारेसे कहने लगे, "देखो ! निमाई चाँदको विवाहके घटकके प्रति कितना प्रेम है, कितनी दया है। बारम्बार उनके पास जाकर बिना माँगे घटककी पत्तल पर अच्छी अच्छी स्वादिष्ट मिठाइयाँ प्रचुर मात्रामें दे रहे हैं। विवाहका सम्बन्ध ही ऐसा प्रिय है। कन्याके आत्मीय जनोंके प्रति वरकी प्रीतिकी बात तो मैंने सुनी है, अब देखता हूँ कि विवाहके घटक महाशय भी वरके बड़े प्रियपात्र हैं। क्यों न हो ? कलियुग जो है। शास्त्रमें भी लिखा है कि कलियुगमें पुरुष स्त्रीके वशीभूत होगा, स्त्रीके सम्पर्कमें रहने वाले लोगोंका अनुगत बनेगा।"

वहाँ श्रीअद्वैताचार्य भी थे। उन्होंने भी इस रसरङ्गमें योग दिया। वे हमारे गौरमें अनुरक्त गोसाईं हैं। उनके साथ शचीनन्दनका बड़ा घनिष्ठ सम्पर्क था। वे श्रीगौराङ्गको पुकार कर सबके सामने हँसते-हँसते बोले—"अरे बाबू! इधर वृद्ध ब्राह्मणोंके ऊपर भी जरा दया करो। सारी अच्छी-अच्छी चीजें तो देख रहा हूँ तुम्हारे विवाहके घटक महोदयकी पत्तल पर ही गिर रही हैं।

शचीनन्दन यह बात सुनकर परोसनेकी पायसान्नकी हाँड़ी हाथमें लिये हँसते-हँसते एक उलाँचमें ही वहाँसे भाग गए। लज्जासे उनका सुन्दर चन्द्रमुख लाल हो गया। वे पाकशालामें माताके पास जाकर अभिमानमें भरे परोसनेकी हाँडी जोरसे फेंककर अभिमानमिश्रित आदरके सुरमें बोले—"अब मैं न परोसूँगा। बूढ़ा बांभन मुझसे ठट्ठा करता है।" इतना कहकर उद्धत-शिरोमणि श्रीगौराङ्ग दौड़कर घरसे भाग जानेके लिए तैयार हो गये।

वहाँ सीतादेवी थीं, और मालिनी देवी भी थी। वे इस विषयमें जाँच करने बाहर निकलीं। शचीमाता स्वयं परोसने लगीं। उनके मुखसे सीतादेवीने सुना कि वृद्ध ब्राह्मण, उनके स्वामीने ही यह कार्य किया है। भोजन समाप्त होने पर उन्होंने स्वामीको पास बुलाकर कहा, "छोटे लड़केके साथ हँसी-मजाक करनेमें बड़े-बूढ़ेको कुछ लज्जा नहीं आती? अब जाओ, निमाई चाँदको खोज लाओ। उसने अबतक भोजन नहीं किया है।"

वृद्ध ब्राह्मण श्रीअद्वैताचार्य बड़ी विपद्में पड़े। क्या करें? उनकी गलती है; गृहिणीका आदेश पालन करना ही पड़ेगा। नदियाके मार्ग पर निमाईको खोजनेके लिये वे निकले। गले तक भोजन करके अब वृद्ध ब्राह्मणसे चला नहीं जाता। यह उनके विश्रामका समय है। रास्तेमें जाते-जाते सोचते हैं—"दुष्ट बालक इस समय कहाँ मिलेगा?" फिर देखते क्या हैं कि गदाधरके साथ दौड़ते हुए उधर ही निमाई चाँद आ रहे हैं। श्रीअद्वैत आचार्यको देखकर वे दोनों आदरपूर्वक प्रणाम करके रास्तेमें एक ओर खड़े हो गए। वृद्ध ब्राह्मणकी जानमें जान आयी। निमाई चाँदको और कुछ न कहकर वे हाथ पकड़कर उनको घर लाये। सीधे पाकशालामें जाकर गृहिणीको पुकार कर बोले—"गृहिणी! यह लो अपना शची-दुलाल! इनका मर्म समझनेमें तुम लोगोंको बहुत दिन लग जाएँगे।"

सीतादेवीने शची-दुलालको पास बैठाकर परम परितोषके साथ भोजन कराया। रातमें घर जाकर पतिसे पूछा, "तुम उस शची-दुलाल और उसके मर्मके सम्बन्धमें क्या कह रहे थे?" श्रीअद्वैत प्रभु बोले—"गृहिणी! वह कोई बात नहीं है। मैं कह रहा था कि बेटा-बेटीको इतना आदर नहीं देना चाहिए। तुम्हारे शची-दुलालके सन्तापसे सारा नवद्वीप तङ्ग आ गया है। मुझे आज क्या कम हैरान किया

है ? इस वृद्धावस्थामें भोजनोपरान्त दौड़ते-दौड़ते मेरी जान पर बीती है। मेरा अपराध हुआ है, लो मैं कान पकड़ता हूँ। तुम लोगोंके शची-दुलालको फिर कभी कुछ न कहूँगा।" सीतादेवी पतिकी बात सुनकर हँसते-हँसते लोट-पोट हो गयीं। वृद्ध ब्राह्मणका रङ्ग देखकर उनसे हँसे बिना न रहा गया। श्रीअद्वैत-चरित्र बड़ा ही गम्भीर है। उससे भी अधिक गम्भीर शचीनन्दन का नदिया-लीला-समुद्र है। इसी कारण महाजन कविने लिखा है—

मधुर चैतन्य लीला-समुद्र गम्भीर।
लोके नाहि बूझे, बूझे जेइ भक्तवीर॥

पुष्प शैयाकी तैयारी

आज रात प्रभुकी पुष्प-शैया है। नदिया वासिनी कुल नारियाँ आहार-निद्रा तजकर प्रातःकालसे नानाप्रकारके सुगन्धित पुष्पोंकी माला गूँथने लगी हैं। बेला, जूही, जाती, मल्लिका, मालती, तगर, चम्पा, करवी, गुलाब, कमल, शेफालिका, गेंदा, रजनीगन्धा, कृष्णचूड़ा, अतसी, कुन्द आदि राशि-राशि पुष्प लाकर शचीमाताके घरमें भरे पड़े हैं। सुगन्धित पुष्पोंका सब प्रकारका अलङ्कार तैयार करके वर-वधूको सजायेंगी। पत्र-पुष्पसे घरको सुसज्जित किया। प्रभुका शयनगृह पत्र-पुष्पलता-गुल्मसे सुशोभित एक मनोहर कुञ्जमें परिणत हो गया।

वनमाली आचार्य अपने प्रति प्रभुकी भाव-भङ्गी देखकर विस्मित हो गये हैं। वे प्रभुकी युगल-सेवाके भिखारी हैं। प्रभु युगलरूपमें बैठे थे, और भाग्यसे उनको एक बार युगल-दर्शन-सुख प्राप्त हो गया था, उसीसे वे प्रेममें विह्वल हो गए थे। अब प्रभु पुष्प-शैया पर रातमें श्रीश्रीलक्ष्मीप्रियाके सङ्ग युगल-विलास करेंगे, फिर उनको प्रभुके युगलरूपके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त होगा, इस आनन्दमें विभोर होकर वे भी पुष्प-संग्रहके कार्यमें संलग्न हैं। उनको बड़ी साध है कि प्रभु जब युगलरूपमें बैठें तो पुष्प-शैया निशिमें मैं अपने हाथों श्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाको फूलोंके साजसे सजाऊँ। वे ब्राह्मण पण्डित हैं, नित्य पूजाके लिए पुष्प-चयन करते हैं, आज भी वही कर रहे हैं, परन्तु आज उनके मनमें और ही भाव है। वे अपने घर बैठकर फूलोंकी माला गूँथ रहे हैं, और मन ही मन युगल-विलास गीत गा रहे हैं—

फूल साजे साजाइब, लक्ष्मीप्रिया गोरा।	मैं लक्ष्मीप्रिया और गौरचन्द्रको फूलोंके साजसे सजाऊँगा।
(ताइ) गाँथितेछि फूल माला, मन प्राण हरा॥	इसी उद्देश्यसे मन और प्राणोंको हरने वाली माला गूँथ रहा हूँ।
गलाय मालती माला, परिबे शचीर बाला,	शचीनन्दन गलेमें मालतीकी माला पहनेंगे।

काने ते कदम्ब फूल,	कानोंमें कदमके फूल और माथेपर
माथे कृष्णचूड़ा ।	कृष्णचूड़ा होगा ।
फुल साजे साजाइब,	इस प्रकार लक्ष्मीप्रिया और गौरचन्द्रको
लक्ष्मीप्रिया गोरा ।।	फूलोंके साजसे सजाऊँगा ।
(ग्रन्थकार)	

वनमाली आचार्यके हृदयमें आज नदियानागरी भाव उथल उठा है । परन्तु उसको समझना किसीके वशकी बात नहीं है । गृहिणीने आकर उनसे पूछा, "आज इतनी फूलोंकी मालायें क्यों गूँथ रहे हो ?" उन्होंने उत्तर दिया—"आज ठाकुरका युगल-विलास होगा ।" वनमाली आचार्यके घरमें श्रीश्रीराधा-कृष्णका युगल-विग्रह था ।

नवद्वीपके अन्यान्य वैष्णव वृन्द भी प्रभुकी पुष्प-शैयाके लिए माल्य, चन्दन और पुष्पमाला लाये हैं । किसी किसीने वस्त्र भी दिया है ।

माल्य चन्दन दिल वस्त्र ताम्बूल ।
गौरचन्द्रे वैष्णव सब दिल नाना फूल ।।
(ज० चै० मं०)

वर-वधूका पुष्प-शृङ्गार

शुभरात्रिके शुभक्षणमें श्रीश्रीनवद्वीपचन्द्र अपने घरमें युगलरूपमें पुष्पशैया पर बैठे हैं । उनका शयनगृह सुगन्धित पुष्पोंसे आमोदित है । नदिया वासिनी कुल नारियोंसे परिवेष्टित होकर श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया पुष्प-शैया पर आसीन हैं । प्रभुके सखावृन्दने प्रभुको नाना प्रकारके पुष्पोंके साजमें सजाया है । नव वधूके लिए प्रत्येकने पुष्पाभरण उपहार दिया है । कुलकामिनी गणने अपने मनकी साधसे नववधूको सजाया है । प्रभुको भी उन्होंने अपने हाथों फूलोंके साजसे सजाये बिना न छोड़ा । क्योंकि पुरुषोंके द्वारा सजाए साजसे उनका मन न भरा । कोई रसिका रमणी मनके भावको छिपा न सकनेके कारण प्रभुके सामने ही मुस्कराती हुई बोल उठी—"यह क्या पुरुषोंका काम है ? वे इसका मर्म क्या जानें ? **'जिसका काज उसीको साजे'** पुरुषोंका शौक देखकर तो हम मरी जा रही हैं ।" इतना कहकर शिव-विरञ्चि-वन्दित प्रभुके दोनों रक्त कमल चरणोंको पकड़कर पहले उनमें अशोक-कलिकाका नूपुर पहना दिया, और उनमें फिर चम्पाका झूमर बाँध दिया । इससे प्रभुके दोनों चरणकमल इतने सुशोभित हो उठे कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता । जिन सब सौभाग्यवती रमणियोंने इस अपरूप शोभाका दर्शन किया, उन्होंने आनन्दमें विभोर होकर गाते-गाते सखियोंको सम्बोधन करके कहा—

(१)

अशोकेर कलि गाँथि क'रेछि नूपुर ।
ताहाते बाँधिया दिछि चम्पक झुमुर ।।

कटि तटे गाँदा-हार,
बाहू ते बकुल ताड़,

पद्मपुष्प पदतले दाओ लो प्रचुर ।
सर्व्व अङ्ग कर सखि ! पुष्पे भरपूर ।।

(१)

अशोककी कलियाँ गूँथकर नुपुर बनाये हैं और फिर उनमें चम्पाके झूमर बाँधे हैं ।

कटि प्रान्तपर गेंदाके हार, बाहुमें बकुल-पुष्प एवं,

चरण-तलमें प्रचुर मात्रामें कमलके पुष्प अर्पण करो। अरी सखी ! इस प्रकार (प्रभुके) सब अङ्गोंको पुष्पोंसे भरपूर करदो ।

(२)

साजालो शयन गृहे पुष्प थरे थरे ।
ब'साब ताहार माझे शची-दुलालेरे ।।

गोलाप टगर चाँपा,
तुलि लई ह'ते खोंपा,

छुड़िया मारिब सखि ! गोरा देह'परे ।
नदिया नागरे भज कुसुमेर शरे ।।

(२)

सम्पूर्ण शयन-गृह राशि-राशि पुष्पोंसे सजाया गया है, उसके मध्य दुलारेको बैठावेंगी।

गुलाब, टगर और चम्पाका गुलदस्ता हाथमें लेकर,

अरी सखी ! गौर सुन्दरकी देह पर फेंककर मारेंगी, इस प्रकार नदिया नागरको कुसुमशरसे भजो ।

(३)

शत दल पद्म दिये साजाब चरण ।
जे खाने जा' साजे दिब फुल आभरण ।।

सुगन्धि चन्दन दिया,
फूल डालि सजाइया,

गोरार चरणे दिब करिया यतन ।
पराणेर धन गोरा परम रतन ।।
(ग्रन्थकार)

(३)

शत दल वाले कमलसे उनके चरण सजावेंजी, जिस जगह जो सजेगा वही फूल आभरण देवेंगी ।

सुगन्धि चन्दन देकर, फूल डाल सजाकर,

यत्नपूर्वक गौरचन्द्रके चरणोंमें अर्पित करेंगी, क्योंकि गौरचन्द्र हमारे प्राणधन एवं परम रत्न हैं ।

पुष्प-शैया-गृहमें वनमाली आचार्य

इस प्रकार फूलोंके साजमें सजाकर नववधू और नववरको लेकर पुरनारी-वृन्द पुष्प-शैया-निशिमें नानाप्रकारके कौतुक और रस-रंगमें मत्त हैं। उसी समय शचीमाताने गृहमें प्रवेश करके एक वयस्का रमणीको लक्ष्य करके कहा—"वनमाली आचार्य निमाईचाँदकी बहूको देखने आये हैं, तुम लोग जरा रास्ता छोड़कर किनारे हो जाओ।"

शचीमाताके पीछे-पीछे घटक-चूड़ामणिने वस्त्रमें पुष्पमाला छिपाये धीरे-धीरे घरमें प्रवेश किया। रमणीवृन्दका कौतुकानन्द-रस भङ्ग हो गया। इससे कई रमणियाँ वनमाली आचार्यके ऊपर रुष्ट हो गयीं। एक रसिका मुँहजोर रमणी उनके मुँह पर ही बोल उठी, "इस समय बूढ़े ब्राह्मण विघ्नस्वरूप कहाँसे आ गये?" घटक महाशयने इसे सुनकर भी अनसुनी कर दी। परन्तु शचीमाताने एक बार उस रमणीकी ओर तीखी नजरोंसे देखा। हमारे कमल-लोचन प्रभु युगलरूपमें पुष्प-दलके बीच बैठे हैं। वे इस असमयमें वनमाली आचार्यको देखकर हँस पड़े। परन्तु घटक महाशय गम्भीरतापूर्वक धीरे-धीरे उनके चरण-प्रान्तमें जाकर बैठ गये। प्रभुने उनका हाथ पकड़कर उठनेके लिए अनुरोध किया। परन्तु उन्होंने इस पर ध्यान न दिया। वनमाली आचार्य अपने वस्त्रके भीतरसे दो पुष्प मालाएँ निकालकर एक प्रभुके गलेमें, और दूसरी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके गलेमें डालकर श्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया-युगल-विग्रहके पादपद्ममें तीन बार पुष्पाञ्जलि देकर हाथ जोड़कर बन्दना करने लगे—

जय नदिया पुरन्दर प्रभु विश्वम्भर, रस-सागर-नागर श्रीनवद्वीप-इन्दु।	नदिया-पुरन्दर विश्वम्भर-प्रभु रस-सागर नागर नवदीपचन्द्रकी जय हो।
जय नवदीपेश्वरी त्रैलोक्यसुन्दरी पद युगले धरि देह करुणा बिन्दु॥ (ग्रन्थकार)	नवदीपेश्वरी त्रैलोक्यसुन्दरी (श्रीलक्ष्मी-प्रिया)की जय हो। उनके युगल चरण पकड़कर करुणा बिन्दु देनेकी बिनती करता हूँ।

प्रभु इस बार उनका मुँह बन्द न कर सके। उनके विवाहके घटक चूड़ामणिके हृदयावेगसे मनकी बात बाहर निकल पड़ी, वह प्रेम-विह्वल नेत्रोंसे युगल-विग्रहके अपरूप रूपको देखकर विवश होकर अजस्र आँसू बहाते हुए रोने लगे। प्रभु अब स्थिर न रह सके। उन्होंने पुष्प-शैयासे उठकर घटक चूड़ामणिको गाढ़ालिङ्गन प्रदानकर कृतार्थ किया। भक्त-भगवानका मिलन हुआ। दोनोंने एकदूसरेको पहचाना, दोनोंने एक दूसरेके मनको समझा। दोनोंने मन ही मन सारी बातें कर लीं। हमारे प्रभु प्रच्छन्न अवतार हैं। इस प्रकार प्रच्छन्नभावसे रसालाप करके

प्रिय सखी चित्राको उस समयके अनुसार बिदा किया। वनमाली आचार्य जाना नहीं चाहते, प्रभु भी उनको बिना हटाये नहीं मानेंगे। प्रभुने उनको द्वारदेश पर पहुँचाकर गृहद्वार अपने हाथों बन्द कर दिया। फिर आकर युगलरूपमें आसीन हो गये।

नदिया-नागरीवृन्द वृद्ध ब्राह्मणके ढंगको देखकर हँसती हुई एकदूसरेके ऊपर लुढ़क पड़ीं। घरमें उच्च हँसीकी एक लहर दौड़ पड़ी। उन्होंने सोचा, "यह बूढ़ा ब्राह्मण पागल तो नहीं है ? दूधका पूत निमाई चाँद, और इस शिशु बालिकाको बूढ़े ब्राह्मणने प्रणाम किया। हाँरी ! इससे इनका अकल्याण तो न होगा ?" भाग्यसे शचीमाता वहाँ नहीं थीं। परन्तु पीछे यह बात सुनकर उन्होंने वनमाली आचार्यको बहुत फटकारा। और फटकारनेकी बात भी थी। वनमाली आचार्य शचीमाताके सामने किस प्रकार हतप्रभ हो गये थे, यह रसिक और विज्ञ कृपालु पाठक अवश्य समझ गये होंगे।

पुष्प-शैया-गृहमें नागरीगण

प्रभुको पुष्प-शैया-निशि बहुत सुखप्रद जान पड़ी। वे अपनी प्रियतमाको अपने पार्श्वमें बैठाकर, नदिया-नागरी वृन्दसे परिवेष्टित होकर प्रेमराज्यके राज्येश्वरके समान आनन्दमय-विग्रहरूपमें पुष्पासन पर बैठे हैं। चारों ओर मानो प्रीति, प्रेम और आनन्दकी वृष्टि हो रही है। श्रीश्रीनवद्वीपचन्द्रकी नदियाकी युगल-विलास-सहचरी नवद्वीपेश्वरी प्रेममयी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके कमलवदन पर मधुर हँसी फूटकर निकल रही है। आनन्दमयी आनन्दमयके पार्श्वमें बैठकर नदियावासी नर-नारियोंके प्राणमें आनन्दवर्द्धन कर रही हैं। दोनोंके शुभदृष्टिपातसे नदियावासियोंके सारे कर्मबन्धन छिन्न हो गये हैं, उनकी त्रिताप ज्वाला दूर हो गयी है। वे सब कुछ भूलकर श्रीगौर-भगवान्‌को युगल-माधुरीके रसमें मग्न होकर आनन्द-विभोर हो रहे हैं। वे मन ही मन शचीनन्दनसे कह रही हैं:—

कि दिये तुमि चित्तहारि ! बाँधले प्रेम डोर।	हे चित्त हरण करनेवाले ! तुम किस प्रकार (मेरे मनको) प्रेम डोरसे बाँध लिया है।
अटूट ताहा छिड़ते नारि, नाइक मोदेर जोर॥	उस अटूट प्रेमडोरको तोड़नेमें हम असमर्थ हैं। हममें (जरा भी) जोर नहीं है।
छेड़ेछि मोरा सकल माया, लुटाये दिछि मोदेर काया, तोमार पदे पराण बन्धु, हे गौर किशोर।	हमने सब माया मोहको छोड़ दिया है और हे प्राणबन्धु गौर किशोर ! तुम्हारे चरण कमलोंमें अपनी काया न्यौछावर कर दी है।

तोमार लीला धेयान मोदेर
तुमिई हे चित्तचोर ।।
(ग्रन्थकार)

तुम्हारी लीला ही हमारा ध्यान है और तुम्हीं हमारे चित्त चोर हो।

श्रीगौराङ्ग सुन्दरने पुष्प-शैया-निशिके लौकिक विधि, नियम और आचारका यथावत् पालन करके पुष्पशैयासे सुसज्जित पलङ्ग पर प्रियतमाको लेकर सुखसे युगल-शयन किया। रसिका नदियानागरीगण गृहद्वार तथा गवाक्षसे चुपचाप झाँकती हैं। यहाँ स्त्री वेषमें कोई पुरुष तो नहीं हैं यह जाननेके लिए कोई रसिका नदिया-नागरी इतस्ततः परिभ्रमण कर रही है। क्योंकि उसके मनमें कुछ सन्देह हो रहा है। परन्तु वह कुछ पता न पा सकी। वनमाली आचार्य और गदाधर पण्डित उनमें थे। परन्तु श्रीगौरभगवान्‌की कृपासे उनका रूपान्तर हो गया है। उनको पहँचाननेकी शक्ति किसीमें नहीं है। श्रीपाद चन्द्रशेखर आचार्यके घर जब प्रभुने लक्ष्मी वेषमें रुक्मिणीके आवेशमें मधुर मनोहर नृत्य किया था, उस समय श्री नित्यानन्द बड़ी बूढ़ी बने थे, गदाधर पण्डितने व्रजगोपिकाका वेष धारण किया था। कोई आदमी उनको पहचान न सका। प्रभुका मनमोहिनी लक्ष्मी वेष देखकर शचीमाता तकने उनको नहीं पहचाना।

अन्येर कि दाय आइना पारे चिनिते।
मूर्तिभेदे लक्ष्मी कि वा आइला नाचिते ।।
(चै० भा०)

अन्यकी तो बात ही क्या, शचीमाँ भी प्रभुको नहीं पहँचान पायीं। ऐसा प्रतीत होता था मानों मूर्ति बनकर स्वयं लक्ष्मी ही नृत्य करने आई हो।

यहाँ भी वैसा ही हुआ। श्रीचैतन्य भागवतकार लिखते हैं :—

जखने जे रूपे गौरचन्द्र विहरे।
सेइ अनुरूप रूप भक्तगण धरे ।।

गौरचन्द्र जिस समय जो रूप धरकर विहार करते हैं, भक्तगण भी वही रूप धरकर उनका अनुसरण करते हैं।

वनमाली आचार्य चित्रा सखी हैं, और गदाधर पण्डित राधाशक्ति हैं। वे प्रभुके युगल-विलास-लीलाके अनुरूप रूपमें युगल-विहार दर्शन कर रहे हैं, उनको कौन पहँचानेगा? यह मधुर नवद्वीप-रस समझनेकी शक्ति किसमें है? इसीसे महाजन कवि कहते हैं—

"के बूझिबे इहा, जार अनुभव नाइ।"

श्रीभगवान्‌के लीला-रहस्यको समझनेकी शक्ति चाहिए, अनुभूति चाहिए। सिद्धरसिक भक्तगण ही इसके मर्मको समझते हैं, क्योंकि उनके ऊपर प्रभुकी अपार

कृपा होती है। श्रीभगवान्‌की कृपाके बिना उनकी लीलानुभूतिकी शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। श्रीवृन्दावनदास ठाकुरने लिखा है :—

"कृष्ण अनुग्रहे जे एसब मर्म्म जानि।"

नदियावासिनी वैष्णवगृहिणीगण साक्षात् नारायणकी शक्ति हैं, वे श्रीगौर भगवानकी अन्तरङ्गा शक्ति हैं।

जत नारायणी-शक्ति जगत-जननी।
सेइ सब हइयाछे वैष्णव-गृहिणी॥"
(चै० भा०)

यह सब गूढ़ रहस्यमय बातें हैं। इनकी व्याख्या करने पर एक महान् ग्रन्थ तैयार हो जायगा। इसमें अविश्वास करनेका कोई कारण नहीं है। श्रीगौराङ्गकी नवद्वीप लीला प्रच्छन्न लीला है। इसलिए उन्होंने सब कुछ गुप्तभावसे किया। इसी कारण महाजन गणने श्रीनवद्वीपको गुप्त वृन्दावन नाम दिया है।

बहू-भातकी तैयारी

मिश्रभवनमें आज प्रभुका बहू-भात है। शचीमाँ आज बहुत व्यस्त हैं। सीता देवी, मालिनी देवी, शचीमाताकी बहिन सभी पाकशालामें हैं। नवद्वीपके सब लोग निमन्त्रित हुये हैं। आयोजनमें कोई त्रुटि नहीं है। प्रभुके घरका भण्डार नाना प्रकारके द्रव्यसंभारसे परिपूर्ण है। कहाँसे किसके द्वारा इतनी सामग्री आकर घरमें भर गई, किसीको इसका पता नहीं है। शचीमाता स्वयं पाकशालाके कार्यकी देखभाल कर रही हैं, आत्मीय कुटुम्ब तथा पुरनारीवृन्दसे शचीमाताके घरका आँगन भर गया है। प्रभु स्वयं सब बातोंकी देखभालमें हैं और कमरमें उज्ज्वल रक्त पाड़की धोती बाँधकर घरके आँगनमें दौड़ धूप कर रहे हैं। उनके भुवन-मोहन रूप, प्राणको शीतल करने वाली सुन्दर मुखकी मधुरहास्य छटा, सुधा-सिञ्चन करने वाली मधुर वाणीसे सब लोग विमुग्ध होकर उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी नव नव माधुरीको देख रहे हैं। नववधूको लेकर कुलकामिनीवृन्द एक घरमें बैठकर कौतुक-रसरङ्गमें आनन्द कर रही हैं। प्रभु कभी कभी उसी घरकी ओर जाते हैं। पुरनारियाँ उनको देखते ही आनन्द-विह्वल होकर नववधूके घूंघटको हटा देती हैं। प्रभु एक बार तिरछे नयनसे अवलोकन करके वहाँसे भाग खड़े होते हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्राणवल्लभकी झलकती हुई अपरूप रूपसुधाका पान करके मन-प्राणको शीतल कर रही हैं।

वधू द्वारा परिवेशन

पाक-स्पर्श करनेका शुभ समय आ गया। शचीमाता पुत्रवधूको वस्त्रालङ्कारसे विभूषित करके ब्राह्मण-भोजनके स्थानमें ले गयीं। यहाँ आत्मीय कुटुम्बी लोग बैठे हैं। यहाँ श्रीअद्वैत प्रभु हैं, श्रीवास पण्डित हैं, चन्द्रशेखर आचार्य रत्न हैं, वनमाली आचार्य हैं, तथा अन्याय आत्मीय स्वजन भी हैं। नाना प्रकारके व्यञ्जनोंसे भरी सोनेकी थाली हाथमें लिए वस्त्रालङ्कारसे आभूषित नववधू श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने धीरे-धीरे सबको अन्न-व्यञ्जनादि कुछ कुछ परोस दिया।

साक्षात् अन्नपूर्णा रूपी श्रीपाद वल्लभाचार्यकी कन्याके रूप-लावण्यको देखकर सभी धन्य-धन्य कह रहे हैं। सबका ध्यान नववधूके रञ्जित पद कमलोंकी ओर है। अहो! अलक्तक-रञ्जित, अलङ्कार-भूषित, कोटिचन्द्र-विनिन्दित, नख-पद्मविराजित इतने सुन्दर रक्त चरण-कमल तो कहीं देखे नहीं गये। ऐसे सुलक्षण युक्त चरण-चिह्न तो नर-देहमें लक्षित होते अब तक कभी देखे नहीं गये। नववधूका प्रफुल्ल कमल-सदृश जैसा निर्दोष मुख-चन्द्र है, जैसा ही शिव-विरञ्चि-वन्दित अपरूप रक्त चरण-युगल।

नववधूकी रूपराशिको देखकर सब लोग भोजन करना भूल गये। वनमाली आचार्य हाथ उठाये बैठे हैं, उनकी आँखोंसे झरझर प्रेमाश्रु प्रवाहित हो रहे हैं। श्रीअद्वैत प्रभु अवाक् होकर निस्पन्द भावसे नववधूके मुखचन्द्रकी ओर देख रहे हैं। वनमाली आचार्यके नेत्रद्वय नववधूके चरण-युगलमें लिप्त हो रहे हैं। किसीके मुँहसे कोई बात नहीं निकल रही है। शचीमाता पुत्रवधूके पीछे पीछे हैं। वे सब कुछ समझ रही हैं। वे पुत्रवधूके हाथसे थाल लेकर स्वयं परोसने लगीं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी जैसे ही नम्रतापूर्वक धीरे धीरे मृदु पाद-विक्षेप करती हुई समीपके घरकी ओर चलीं, वैसे ही सीतादेवीने उनको प्रेमपूर्वक हाथ पकड़कर गोदमें उठा लिया।

प्रभु द्वारा परिवेशन

शचीनन्दन दूरसे ही सब कुछ देख रहे हैं। इसके बाद उन्होंने स्वयं परोसना शुरू किया। उनके घर आज नवद्वीप भरके लोग आमन्त्रित हैं। सबको भलीभाँति सन्तोषपूर्वक भोजन कराना है। वे घरके कर्त्ता हैं। उनके बैठे रहनेसे कैसे काम चलेगा? चारों ओर उनकी दृष्टि है। सारे आँगनके सभी घरोंमें वे दौड़-धूप लगा रहे हैं। उनके सिरकी भ्रमरके समान कुञ्चित केशराशि सुन्दर मुखचन्द्रके ऊपर पड़ रही है। दोनों हाथ अन्न-व्यञ्जनमें लगे रहनेके कारण सुललित सुन्दर बाहु युगलके अग्रभागसे बीच बीचमें केश-पाशको कपोल देशसे कानकी ओर हटा देते हैं। शुभ्र यज्ञोपवीत गलेमें डोलता रहता है, पहने हुए लाल पाड़के धौत वस्त्रको कमरमें

बाँधे हैं। मणिबन्धमें शुभ विवाहका लालसूत्र अभी वर्त्तमान है। मुखकमलमें सदा ही मधुर हँसी रहती है, हाथमें परोसनेका थाल है। पहने हुए वस्त्रमें व्यञ्जनका छींटा-छटका लगा है। परिश्रमसे सुन्दर मुखमण्डल पर पसीनेकी बूँदें झलक रही हैं। उनके इस समयके अपूर्व रूपलावण्यको देखकर निमन्त्रित सब लोग विमुग्ध होकर उनके अङ्गप्रत्यङ्गका सतृष्ण नयनोंसे निरीक्षण कर रहे हैं।

प्रभुके सखावृन्दभी परोस रहे हैं, उनमें गदाधर भी हैं। प्रभु उनको बीच बीचमें वज्र गम्भीर नादसे पुकार कर कहते हैं, "इधर पायसान्न ले आओ, इधर मिष्ठान्न नहीं पड़ा—इत्यादि।" परिणत वयस्क परोसने वालोंमें वनमाली आचार्य भी आ मिले हैं। वे परोसनेका पात्र हाथमें लेकर शचीनन्दनके मुँहकी ओर देखते रहते हैं, और उनकी अपरूप रूपसुधाको पान करते हैं। उनकी दृष्टि प्रभुके सुन्दर मुखचन्द्रकी ओर आकृष्ट रहनेके कारण वे आँगनमें ठोकर खाकर गिर पड़े। यह देखकर प्रभु दौड़ पड़े और उनको उठाकर गोदमें ले लिया। प्रभुका यह प्रेमालिङ्गन प्राप्तकर वे कृतार्थ हो गये, उनके सारे दुःख दूर हो गए। प्रभु बोले, "पण्डित, तुम्हें चोट लग गयी।" उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, कुछ नहीं हुआ।" प्रभुका मर्म वनमाली आचार्य जानते हैं, और वनमाली आचार्यका मर्म प्रभु जानते हैं। दूसरा कोई इसे क्या समझेगा?

बड़े धूमधामसे प्रभुके शुभ-विवाहके पाक-स्पर्शका भोज समाप्त हुआ। दीन-दरिद्रके प्रति प्रभुकी दृष्टि सदासे है। प्रभुके विवाहमें उन्होंने पिष्टक, पायस, घृत, दही, दूध, गुड़ आदि परम आनन्दपूर्वक पेट भर खाया और सहस्र मुखोंसे प्रभुका जयजयकार किया। श्रीगौराङ्गके वासमन्दिरमें इस उपलक्ष्यमें नवद्वीपके समस्त वैष्णवोंका शुभागमन हुआ। सबको ही हमारे प्रभुने परम आदरके साथ सन्तोषपूर्वक भोजन कराया।

गौराङ्ग-मन्दिरे जत वैष्णवागमन।
पञ्चामृते सभारेइ कराइल भोजन॥
(ज० चै० मं०)

प्रभुने अपने हाथों बाजा बजाने वालोंको, धोबी और नाइयोंको प्रचुर भोजनकी सामग्री देकर विदा किया। नया वस्त्र पहनकर वे लोग प्रभुके घरसे विदा हुए। शचीमाता राह चलने वालोंको पकड़कर उनके वस्त्रमें प्रचुर परिमाणमें मिष्ठान्न बाँध देती हैं। इस प्रकारका आनन्दोत्सव नदियाके लोगोंने कभी नहीं देखा। नदियावासी नर-नारी बड़े ही भाग्यवान हैं। उनके सौभाग्यकी सीमा नहीं है। श्री भगवानकी श्रीमूर्त्तिके शुभ विवाहोत्सवका दर्शन कर जीव सब पापों से मुक्त होकर वैकुण्ठ गमन करता है, उसी श्रीगौर-भगवानके शुभविवाहोत्सवको नदियावासी

साक्षात दर्शन करके कृतार्थ हो गये। उनके प्रति दयामय श्रीगौरभगवानकी जो अपार कृपा थी उसका स्मरण करने पर आनन्दसे सर्वाङ्ग पुलकित हो जाता है। श्रीवृन्दावन दास ठाकुरने लिखा है—

जाहार मूर्त्तिर बिभा देखिले नयने।
सर्व्व पापयुक्तो जाय बैकुण्ठ भवने॥
से प्रभुर विभा लोक देखये साक्षाते।
तेञि तान नाम दयामय दीना नाथे॥

नवद्वीप वासी नर-नारीके चरणोंमें कोटि कोटि नमस्कार। वे प्रत्येक हमारे पूजनीय हैं, निश्चय ही वे देवताका अंश लेकर उत्पन्न हुए थे। देव-देवीके सिवा श्रीभगवानकी युगल-विलास-लीला दर्शन करनेकी शक्ति अन्य किसीमें नहीं है। नवद्वीपवासी प्रभुके नित्य दास-दासी हैं।

षष्ठम अध्याय

श्वसुर-गृहमें श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी



एइ लक्ष्मी बधू आसि गृहे प्रवेशिले।
कोथा हैते ना जानि आसिया सब मिले।।
(शचीमाताकी उक्ति। श्रीचैतन्य भागवत)

श्वसुर-गृहमें लक्ष्मीप्रिया

प्रभुका शुभ विवाहोत्सव सुसम्पन्न हो गया अब वे घर-गृहस्थीमें मन लगाने लगे। पहले अपने घर वे अधिक समय नहीं रहते थे। नदियाके पथ पर, गङ्गाके घाट पर, पण्डितोंकी पाठशालामें उनका सारा दिन कट जाता था। केवल भोजन करने और सोनेके समय वे घर आते थे। शचीमाता इससे बहुत दुःखी रहती थीं। अब पुत्रको अधिक समय घरमें रहते देखकर उनके मनमें बड़ा आनन्द होता है।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको विवाहके पश्चात उनके पिता श्रीपाद वल्लभाचार्य लेनेके लिए आये। जामाताको भी वह अपने घर ले जायेंगे। साथमें वनमाली आचार्य हैं। गाँवमें विवाह हुआ है। प्रभुकी ससुराल और अपना घर आस-पासके मुहल्लेमें है। श्रीपाद वल्लभाचार्य प्रतिदिन आकर कन्याको देख जाते थे। उनकी गृहिणीभी रातमें आकर कन्याको देख जाती थीं। शचीमाताके साथ गृहस्थीके सम्बन्धमें उनकी बहुत बातें होती थीं, दोनों समधिनमें बड़ी प्रीति थी। दिलकी बातें खुलकर होती थीं, सुख-दुःखकी सारी बातें होती थीं। श्रीमतीलक्ष्मीप्रिया देवी ससुरालमें आनन्दसे रहती हैं। रोना-धोना कुछ नहीं है, यह देखकर माता-पिताके मनमें बड़ा आनन्द है।

शचीमाता पुत्रवधूको प्राणोंके समान स्नेह करती हैं। सोनेके निमाईचाँदकी बड़े आदरकी बहू हैं। वे उसको कहाँ रखकर शान्ति पावेंगी, क्या खिलाकर सुखी होंगी—सोच नहीं पातीं। पुत्रवधू भी अपनी सासको मातासे भी अधिक मानती हैं।

क्षणभरके लिए भी उनका साथ नहीं छोड़तीं। सासका आँचल पकड़े सदा उनके पीछे पीछे रहती हैं। नववधू होकर भी वे सब काम करनेमें लग जाती हैं। सासके मना करने पर भी वे घरके बहुत काम करती हैं। इससे शचीमाताके मनमें बड़ा आनन्द होता है। वे साक्षात लक्ष्मीके समान गृहलक्ष्मी पुत्रवधू पाकर सब दुःख भूल गयी हैं।

इस वृद्धावस्थामें शचीमाता सारे गृहकार्य करके उठ नहीं पाती हैं। कर्मठ और बुद्धिमती गृहस्थकन्या पुत्रवधू पाकर वे गृहस्थीके कार्यसे थोड़ा अवसर प्राप्त करेंगी, इस आनन्दसे वे पुत्रवधूके गुणोंकी बात सबसे कहती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सेवाकार्यमें अतिशय निपुण हैं। वे माता-पिताकी एकलौती दुलारी कन्या होने पर भी पिताके घर रहते समय माता-पिताकी सेवाके कार्यमें लगी रहती थीं। श्वसुरके घरमें आकर वे प्राणपन से सासके सेवा-कार्यमें लग गयीं। वे अभी व्याहता कन्या हैं। थोड़े ही दिन हुए विवाहको हुए। कहना पड़ता है कि पति और सासकी सेवाके कार्यमें उनको लाज-शर्म बिल्कुल ही नहीं आती। शचीमाताके सब कामोंमें वे रहती हैं।

इस नवीन वयसमें श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी ऐसी कार्य कुशलता और गुरुजन-सेवा-प्रियता देखकर सभी आश्चर्य करते हैं। धीरे धीरे सारी नदियामें उनकी गुणराशिको लोग जान गये। यह सुनकर उनके माता-पिताके मनमें बड़ा आनन्द हुआ। शचीमाता उनके सामने पुत्रवधूके गुणोंको दस मुँहसे कहकर भी तृप्त नहीं हो सकतीं। ऐसी सर्व गुणवती कन्या उन्होंने कभी देखी नहीं।

श्रीपाद बल्लभाचार्यकी गृहिणी शचीमाताके निकट बैठकर गृहस्थीके सुख-दुःखकी बातें करती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सास और माता के बीचमें बैठी हुई हैं। उनका एक हाथ शचीमाताके जानु देशमें न्यस्त है, और दूसरा हाथ माताके वक्षस्थल पर स्थापित है। एक बार वह माताके मुँहकी ओर देखती हैं, और दूसरे ही क्षण सासका गला पकड़ कर प्रेमपूर्वक कानोंमें कुछ फुस फुसाने लगती हैं। श्रीपाद वल्लभाचार्य और वनमाली आचार्य दूसरे घरमें कुछ दूर बैठकर कुछ बातें कर रहे हैं। शचीनन्दन घर पर नहीं हैं

कुछ देरके बाद शचीमाता ने पुत्रवधूका चिबुक पकड़कर एक स्नेह-चुम्बन देते हुए आदर पूर्वक कहा,"री बहू ! तू तो कल बापके घर जायगी। तुझसे अब बातें करने से क्या लाभ ?"

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको सासकी बातसे मनमें कुछ दुःख हुआ। उन्होंने उनको कुछ न कहकर माताके मुँहकी ओर देखकर निःसङ्कोच कहा—" माँ ! तुम क्यों न यहाँ ही रहो ? मेरी सास तुम्हें बहुत आदर पूर्वक रक्खेंगी। मेरे समान ही

तुमको आदर-सोहाग करेंगी। तुम यहाँ ही रहो" उनकी माता नव विवाहिता कन्याकी बात सुनकर मन ही मन कुछ दुःखित हुईं। परन्तु वह दुख प्रकट न हुआ। वे हँसकर कन्यासे बोलीं—"मेरी पगली लड़की ! क्या सास-ससुर अपने दामादके घर रहते हैं ? जब तेरा दामाद होगा तो तू अपने दामादके घर जाकर रहियो।" श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सरल बालिका हैं। माताकी इस बातका कुछ मर्म न समझीं। उन्होंने अपनी स्वाभाविक सरलताके साथ उत्तर दिया, "माँ ! दामादके घर रहनेसे क्या होता है ?" तब उनकी माताने अपनी कन्यासे विशेष बातें न करके केवल इतना ही कहा—"दोष होता है !" परन्तु चतुर कन्या छोड़ने वाली न थी, वह बोल उठी—"क्या दोष होता है ?"

आचार्य-गृहिणीने और कुछ न कहकर शचीमातासे कहा—"समधिन ! रात्रि हो गयी, अब हम जाते हैं। कल कर्त्ता आकर बेटी-दामादको ले जायेंगे।" शचीमाताने कहा—"अच्छा, निमाईसे एकबार पूछूँगी।"

श्रीपाद वल्लभाचार्य और उनकी गृहिणी घर लौट गये। रास्तेमें गृहिणीने पतिसे कहा—"तुम्हारी लड़की ससुरालका सुख छोड़कर आना नहीं चाहती।" श्रीपाद वल्लभाचार्यने उत्तर दिया," यह तो अच्छी बात है, मेरी बच्ची सुखी मनसे ससुरके घर रहे। बड़े भाग्यसे उसे यह सास मिली है।"

श्वसुरालय जानेकी सूचना पर प्रभु माता व प्रियाजीकी बातचीत

दूसरे दिन शचीनन्दन ससुराल जायेंगे। उन्होंने पूर्व दिन रातमें सुना है कि उनके सास–ससुर आकर सब कुछ तय कर गये हैं। यह समाचार उनकी प्राण-वल्लभाने ही उनको दिया है। रातके भोजनके पूर्व ही उनको यह समाचार मिल गया है।

भोजनके समय शचीमाताने पुत्रसे कहा, "बेटा निमाई ! कल बहू पिताके घर जायगी, तुम भी उसके साथ ससुराल जाना।" शचीनन्दन कुछ देर चुप रहे। भोजनके बाद मातासे बोले, "माँ ! कितने दिन ससुराल रहना पड़ेगा ?" शचीमाताने उत्तर दिया, सासु-ससुर आदरपूर्वक ले जा रहे हैं, जितने दिन रक्खें, रहियो। "प्रभुने उत्तर दिया—"नहीं मैं दो दिनसे अधिक न रहूँगा"। इतना कहकर उन्होंने दुलारसे अपनी दोनों भुजाओंसे माताके गले लिपट कर और अपने सुन्दर मुखचन्द्रको उनके आँचलमें छिपाकर फिर पूछा, "माँ ! तुम बूढ़ी हो गयी हो, बहूने तुम्हारी सेवा करना सीख लिया है, तुम उसे घर क्यों नहीं रखती हो ?" शचीमाताने पुत्रको गोदमें लेकर स्नेहसे शतशत चुम्बन देते हुए कहा—"मेरेलाल मेरे रतन ! माँ का दुःख तुम समझते

हो ? मैं तुम्हारे ससुरको कह दूंगी कि बहूको तुम्हारे सङ्ग ही विदा कर दें, ये लोग बड़े अच्छे समधी हैं। लड़की भी मेरी बहुत आज्ञाकारिणी है। बस, घर तो आस-पासके मुहल्लोंमें ही हैं। मेरे कहनेसे ही तुम्हारे सास-ससुर बहूको तुम्हारे साथ विदा कर देंगे।

शचीमाताने पुत्रका मन जानकर मनकी बात कह दी। इससे प्रभुको बड़ा आनन्द मिला। वे हँसते हँसते माताकी गोदसे छलाँग मारकर दौड़ते हुए शयन-गृहमें चले गये। शयन-गृहमें जाकर प्रियासे हँस हँस कर यह सारी बातें कह गये।

वह रसकथा सुननेके सौभाग्यकी स्पर्धा हम नहीं करते उस मधुर लीला कथाके लिखने या सुननेका अधिकारी होना बड़े पुण्यके प्रतापसे संभव है। किसी किसी भाग्यवती नदियावासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी अन्तरङ्गा सखियोंके द्वारा पीछे ज्ञात हुआ कि देवीने अपने प्राणवल्लभसे कहा था कि, "तुम्हारी और तुम्हारी माताकी सेवा छोड़कर मैं पिताके घर न जाऊँगी।" यह अत्यन्त गोपनीय बात थी, प्रकट करने योग्य न थी। रुद्धद्वार, सुसज्जित गृहके भीतर दिव्य पर्यङ्कके ऊपर कोमल शैय्या पर सोये नव दम्पतिके अति मृदुल स्वरमें होने वाली प्रेमानुरागकी वार्त्ता किसने कैसे सुनी, इस बातकी समझ मेरे जैसेकी मोटी बुद्धिमें नहीं आ सकती। परन्तु बात सत्य है, यह निःसन्देह समझमें आती है। कोई बुद्धिहीन अरसिक रमणी यह बात सुन कर श्रीमतीजीको लज्जाहीना पति-पागलिनी कहकर उपहासजनक बात कहनेसे भी न हिचकी। श्रीमती लक्ष्मीप्रियादेवीके मन पर इसका तनिक भी असर न पड़ा। इसमें उन्होंने अपने दृढ़ ऐकान्तिक पति-भक्तिका परिचय दिया। इतनी छोटी उम्रमें इसप्रकारकी पति-सेवा-परायणता तथा दृढ़ कर्त्तव्यनिष्ठा किसीने कभी किसी बालिकामें नहीं देखी। श्रीगौराङ्ग सुन्दरकी विशेष कृपापात्रीको ही यह शोभा देता है।

श्रीगौराङ्ग वक्षविलासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने मनकी बात नहीं छिपायी सासके सामने भी यह बात बोल गयीं। शचीमाताने पुत्रवधूके मुँहसे यह बात सुनकर हँसती हुई दुलार करते हुए उनको गोदमें ले लिया, और शतशत चुम्बन देते हुए प्रेमपूर्वक कहा—"मेरी बहू पगली लड़की है ! मेरा निमाई जैसे पागल लड़का है, वैसे ही एक पगली लड़की मुझे मिल गयी है। दोनों खूब मिले हैं। निमाई नहीं चाहता कि बहू पिताके घर रहे, मेरी बहू, जान पड़ता है—इस पागलकी बातमें पड़ गयी है।" शचीमाता इतना कहकर आनन्दित चित्तसे संसारके काममें लग गयीं। आज उनकी पुत्रवधू घरको अँधेरा करके पिताके घर जायेगी। उनको कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। वे अन्यमनस्क होकर सब काम करती हैं।

श्रीवल्लभाचार्यका कन्या और जामाताको अपने घर लिवाजाना

यथा समय श्रीपाद वल्लभाचार्य कन्या और जामाताको लेनेके लिए मिश्रके घर आये। नववर और नववधू वस्त्रालङ्कारमें सुसज्जित हुए। शचीमाता श्रीपाद वल्लभाचार्यसे बातें करती थी। वे उसी गाँवकी कन्या थीं। शचीमाताके पिता श्रीपाद नीलाम्बर चक्रवर्तीको श्रीपाद वल्लभाचार्य गाँवके सम्बन्धसे दादा (बड़ा भाई) कहकर पुकारते थे। सर्वदा उनके घर आते जाते थे। इसी सूत्रसे शचीमाताके साथ उनका पूर्व परिचय था। विवाह संबंध हो जानेके कारण शचीमाता गाँवके पूर्व सम्बन्धको एक बारगी तोड़ न सकीं। शचीमाताने समधीसे अनुनय-विनय करके एकान्तमें कहा, "निमाईकी इच्छा नहीं है कि बहू अधिक दिन पिताके घर रहे। बहू भी यहाँ ही रहनेके लिए अधिक इच्छुक है। आप निमाईके साथ ही उसको फिर बिदा करदें। भेंट होने पर समधिनको मैं यह बात समझा दूंगी। श्रीपाद वल्लभाचार्य अति सरल स्वभावके ब्राह्मण पण्डित हैं, वे शचीमाताकी बात पूरी होनेके पहले ही बोले, "यह तो बहुत ही आनन्दकी बात है। इसके लिए अनुनय-विनय क्या ? निमाई चाँदकी जो इच्छा हो, वही करना हमारा कर्त्तव्य है। इसके लिए आप चिन्ता न करें। दो दिनके बाद ही मैं कन्या और जामाता दोनोंको साथ लेकर आपके घर पहुँचा जाऊँगा। हमारे लिए एक बार उनको आँखसे देख लेने भरकी बात है। जो नारायणकी कृपासे दोनों समय हो ही जायगा।" शचीमाता समधीकी स्वाभाविक सरल बात सुनकर मनमें बहुत आनन्दित हुईं। मन ही मन सोचने लगीं कि मेरा निमाई जो कहता है, वही होता है। कल उसने मुझसे कहा था कि, "दो दिनसे अधिक मैं ससुरालमें न रहूँगा।" आज उसके ससुर स्वयं कह रहे हैं कि "कन्या-जामाताको दो दिनसे अधिक न रक्खूंगा।"

श्रीपाद वल्लभाचार्य कन्या और जामाताको लेकर घर चले गये। उनकी गृहिणीने परम आदर पूर्वक कन्या और जामाताको शुभ आशीष देकर घरमें प्रवेश कराया।

प्रभुका श्वसुरालयका श्रृङ्गार और भ्रमण

प्रभुकी ससुरालकी सजावट उनके सङ्गी-साथी लोगोंने कर दी है। उनके पहननेका दिव्य वस्त्र सलवट डाली हुई हल्दीके रंङ्गकी पाड़वाली धोती है। गलेमें दूध सा सफेद दुपट्टा शोभा देता है। प्रशस्त सुन्दर ललाटमें केशर और चन्दनके अलक-तिलक सुशोभित हैं, सुदीर्घ नासिकाके अग्रभागमें सुन्दर तिलक सुशोभित है। गलेमें मालती पुष्पकी माला झूल रही है। हाथमें सोनेका कङ्कण और अंगूठी शोभा पा

रही हैं। भ्रमरके समान कृष्ण और कुञ्चित केशसे परिशोभित मुख-मण्डल चन्दनसे चर्चित है। सुवलित सुन्दर बाहु युगलमें सोनेका ताटङ्क शोभा दे रहा है। आजानु लम्बित सुवलित बाहुद्वय डुलाते हुए सुन्दर दीर्घ कोंचा झुलाते हुए नदियाके मार्गसे वे प्रिय सखावृन्दके साथ ससुराल जाते। उनको देखकर नदियावासियोंके प्राण आनन्दसे मत्त हो उठते थे।

रसिक भक्त ठाकुर लोचन दासने लिखा है —

नदिया-विनोद गोरा।
जेन केलि कुतूहल भोरा॥

नदिया विनोद श्रीगौरचन्द्रने मानों सबको कुतूहलसे पागल बना दिया। उनकी भृकुटी कामदेवके धनुषके समान है।

कामेर कामान, भूरु निरमाण,
बाण करियाछे तारा॥

आँखोंकी भोहोंका निर्माण कामदेवकी धनुष है और आँखोंका तारा बाण है।

वयस्येर सङ्गे, रहस्य विलास,
लीला - रसमय - तनु।

अपने समवयस्कोंके साथ लीला-रसमय-तनु गौरचन्द्र रहस्यमय विलास कर रहे हैं।

बिनि मेघे मही, एथिर बिजुरी,
साजल कुसुम धनु॥

बिना बादलोंके इस पृथ्वी पर विजली चमक रही है। उनके कुसुम-धनुष धारण है।

सुगन्धि चन्दन, अङ्गे विलेपन,
विनोद विनोद फोटा।

शरीर पर सुगन्ध और चन्दन विलेपित है। चन्दनके विनोदपूर्ण फोटे लगे हुए हैं।

ताहार सौरभे, मदन मोहित,
जतेक नागरी घटा॥

उनके सौरभसे नागरियोंका समूह काममोहित हो रहा है।

चाँचर केशर, वेशेर माधुरी
हेरिया के धरे चित।

घुंघराले बालोंकी और वेशकी माधुरी देखकर चित्तको कौन समाहित रख सकता है?

कोंचार शोभाय, लोभाय युवती,
ना माने गुरु गरवित॥

कोंचाकी शोभासे युवतीजन विमोहित हैं, वे गुरुजनका भय भी नहीं मानतीं।

नदिया - नगर, नागरे - आगर,
रसेर सागर सभे।

नदियानगर नागरोंसे आलोकित है, सभी रसके सागर हैं।

गौरचन्द्र लीला, देखिया भूलिला,
दम्भ चूर गेल तबे॥

गौरचन्द्रकी इस प्रकारकी लीला देखकर सब खोयेसे हो रहे हैं, जिससे दम्भ चूर हो गया।

अपराह्नसे जब प्रभु ससुरालसे नदिया भ्रमण करने निकलते है, तब सखाबृन्द उनके साथ रहते हैं। गदाधर तो प्रभुका सङ्ग छोड़कर एक दण्ड भी अलग नहीं होते। प्रभु उनके कन्धे पर हाथ रखकर पुस्तक दूसरे हाथमें लिए ससुरके घरसे नदियाके मार्गमें नव नटवर वेषमें निकलते हैं। सन्ध्याकालमें गङ्गातट पर जाकर सखावृन्दके साथ बैठकर नाना प्रकारके कौतुक करते हैं।

वयस्येर काछे, कर अवलम्बि,
पूथि करि वाम हस्ते।
दिवसेर अन्ते, रम्य राजपथे,
सुरधुनि तट ताथे॥

प्रभुके सास-ससुर जामाताको घर पर नहीं देख पाते। केवल भोजन-शयनके समय वे बहुत ही भले मानसके समान ससुरालमें रहते हैं। उस समय भी गदाधर उनके साथ रहते हैं। गदाधरको श्रीपाद बल्लभाचार्य और उनकी गृहिणी भी खूब स्नेह करते हैं। गदाधरके पिता पण्डित माधवाचार्य श्रीपाद वल्लभाचार्यके प्रिय बन्धु हैं। गदाधर उनके घर सदा आते हैं। ऐसी बात नहीं कि गदाधर उनके दामादके सखाके रूपमें इन्हीं दो दिनोंसे आ रहे हों। गदाधर भी प्रभुके साथ उनके ससुरालमें दामादके समान आदरपूर्वक भोजन करते हैं। केवल रातको अपने घर आते हैं।

सखियोंका उलाहना और प्रियाजीका निवेदन

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी सखियाँ वरको लेकर आमोद-प्रमोद नहीं कर पातीं। अतएव दुःखित चित्तसे एक दिन अपनी सखीसे बोलीं, "अरी ! तेरा कैसा वर है, एक बात भी नहीं करता, एक बार भली भाँति हम देख भी नहीं पातीं। कमलाका वर कैसा सुन्दर है ? हमारे साथ बैठकर कितनी बातें करता है, कितना हँसी-ठट्ठा करता है ? तेरा वर इतने बड़े आदमीका बेटा है कि हमारे जैसी गरीब लड़कियोंके साथ एकबार भी बातें करनेसे उसे दोष लगता है !" श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी गौर-विरह सन्तप्ता सखियोंके दुःखसे दुःखित हो गई। उन्होंने मधुर मुस्कानके साथ उनने कहा, "आज मैं उनको तीसरे पहर पकड़ रक्खूंगी। तुम सब आना।" साखियाँ बहुत आनन्दित होकर अपने घर गयीं।

प्रभु मध्याह्न भोजनके पश्चात् जब शयनगृहमें गये तो श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने बहुत आदर पूर्वक चन्द्र मुखको अवनत करके अपने प्राणवल्लभको एकान्तमें पाकर मधुर वचनोंमें कहा, "आज मैं तुम्हें घूमने नहीं जाने दूंगी। मेरी सखियोंके मनमें बहुत दुःख है, कि वे तुम्हें घर पर नहीं देख पातीं, तुम्हारे साथ एकबारभी बातें नहीं कर पातीं। उनको आज अपराह्नमें आनेके लिए कहा है। तुम आज कहीं जा न सकोगे।"

प्रभु प्रियतमाकी बात सुनकर मचलकर हँस पड़े। प्राण-प्रियतमाके आदेशका उल्लंघन करना उनके वशकी बात नहीं है। वे सदासे भक्तके अधीन हैं। भक्त उनको जो कहता है, वही उन्हें करना पड़ता है। अपनी इच्छा न होने पर भी भक्तकी मनोकामना पूर्ण करनेके लिए श्रीभगवानको सारे कार्य करने पड़ते हैं। श्री गौराङ्ग अवतारमें वे स्त्रीजनका मुँह नहीं देखते। उनकी दृष्टि सदा स्त्रियोंके चरणोंके ऊपर रहती है। मुँह उठाकर वे किसी स्त्रीसे बातें नहीं करते। घाट-बाटमें स्त्रीजनको आते देख हमारे प्रभु दूर हटकर एक किनारे खड़े हो जाते हैं। चैतन्य भागवतमें लिखा है :—

"स्त्री देखिले दूरे प्रभु हय एक पाश।"

प्राणप्रियतमाके अनुरोधसे प्रभुको प्रतिज्ञा भङ्ग करनी पड़ी। भक्तके अनुरोधसे श्रीभगवानने अनेक स्थानोंमें अनेक बार अपनी प्रतिज्ञा भङ्गकी है। कौरव-पण्डव युद्धमें श्रीभगवानने प्रतिज्ञा की थी कि वे अस्त्र धारण न करेंगे। किन्तु भक्त चूड़ामणि भीष्म पितामहने उनकी प्रतिज्ञा भङ्ग करादी। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने श्रीगौर भगवानकी प्रतिज्ञा भङ्ग करायी तो इसमें आश्चर्यकी बात क्या है ?

श्रीगौराङ्ग प्रभु भक्तके भगवान हैं। वे पूर्णतः भक्तके वशीभूत हैं। उन्होंने प्रियतमासे आदरपूर्वक कहा "अच्छा, आज मैं कहीं न जाऊँगा। तुम्हारी सखियाँ यदि मुझको देखकर, मेरी बात सुनकर सुखी होती हैं तो मैं क्यों उनके सुखमें बाधक बनूंगा ?"—इतना कहकर प्रभुने चुपकेसे गदाधरसे सारी बातें कहीं, तथा उनको उस दिन तीसरे पहर आनेसे मना कर दिया। गदाधरने मुस्करा कर प्रभुके मुखचन्द्रकी ओर एक बार देखा। प्रभुने भी मुस्करा दिया। दोनों जनोंकी हँसी अति निगूढ़ भावपूर्ण थी। दोनोंने एक दूसरेके मनकी बात समझी। उस दिन गदाधर तीसरे पहर प्रभुके पास नहीं आये।

सखियोंका प्रभुसे विनोद

श्रीश्रीगौर लक्ष्मीप्रिया युगल रूपमें बैठे हैं। अपराह्ण काल है। श्रीपाद वल्लभाचार्य घरमें नहीं हैं। उनकी गृहिणी घरके कार्यमें व्यस्त हैं। बेटी-दामाद शयन गृहमें बैठे हैं और पड़ोसकी बालिकाओंके साथ आमोद-प्रमोद कर रहे हैं। आचार्य-गृहिणी इससे मन ही मन अत्यन्त आनन्दित हो रही हैं।

प्रभुके चारों ओर उनकी प्रियतमाकी सखियाँ बैठी हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी कुछ दूर पर अपनी प्रियसखी चित्र-लेखाके साथ कानाफूसी कर रही हैं। सभी बहुत धीरतापूर्वक शान्त और शिष्टके समान बैठकर मृदु-मृदु मुस्कानके साथ एक दूसरेके शरीरको दबाकर हँस-हँस पड़ती हैं। साहस करके वरसे कोई कुछ बोल नहीं रही है। शचीनन्दन प्रफुल्ल-वदन चाँदके हाटमें स्थिर होकर बैठे हैं। उनके दीर्घाकार

सुन्दर दिव्य तेज और ज्योतिपूर्ण अङ्गोंको देखकर बालिका वृन्दके मनमें बड़ा आनन्द हो रहा है, परन्तु कुछ भय भी हो रहा है। प्रभुकी दृष्टि नीचेकी ओर है। बालिकाओंकी दृष्टि उनके सब अवयवों पर है।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी प्रियसखी चित्रलेखा सर्वापेक्षा अवस्थामें बड़ी हैं। वे श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके पास बैठी थीं, साहस करके अब प्रभुके सामने आयीं। प्रभुने उनको देखकर मुखचन्द्रको और भी अवनत कर लिया। चित्रलेखा कुछ चञ्चला और रसिका हैं। प्रभुके अवनत मस्तकको देखकर उन्होंने उनके पीछे जाकर विनत मस्तकके ऊपर सखीकी एक पहननेकी साड़ी ओढ़ा दी। फिर प्रभुके सामने आकर हँसते-हँसते बोलीं, "वाह! वरने तो खूब घूंघट काढ़ लिया है। यह तो वर नहीं, है, कन्या है! मुँहमें बोली नहीं है। आँखें मिलाकर ताकते नहीं। जान पड़ता है हमारी सखी ही वर है और ये ही बहू हैं।

प्रभुने अपने हाथसे वस्त्रको मस्तकसे हटाकर बगलमें रख लिया और सिर झुकाए हुए बोले, "तुम्हारी सखी ही वास्तवमें वर हैं, वरका अर्थ है बड़ा।" नववरके मुँहसे मधुर बात सुनकर बालिकावृन्दके प्राण जुड़ा गये। वे श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मुँहकी ओर ताक कर हँसते-हँसते एक दूसरेके अङ्ग पर ढल पड़ीं। जिसने प्रभुसे प्रश्न किया था, वह एक बारगी हँसते-हँसते गिर पड़ी। विशेष कष्टसे उठकर सखीके पास जाकर हँसते हुए कहने लगी, "लक्ष्मीप्रिये! अपने वरसे तू ही श्रेष्ठ है। क्या तेरा वर तेरा पैर पकड़ता है?" पतिभक्ति परायणा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी लज्जासे अपनी जीभ दाँतों तले दबाते हुए सखीसे बोलीं—"छिः! यह बात न बोलो। इनके चरणधूलिके कण प्राप्त कर मैं अपने जीवनको सार्थक मानती हूँ।"

चित्रलेखा अब सखीको कुछ न कहकर वरके पास गयी। इस बीचमें एक दूसरी चतुरा बालिकाने वरसे एक और प्रश्न किया। बालिका बोली, "वर! तुम बताओ तो सही हमारे बीचमें सुन्दरी कौन है?" अब चतुर चूड़ामणि निमाईचाँद बड़े संकटमें पड़े। श्रीगौर भगवान् भक्तका मान बढ़ानेके लिए सदासे ही कृत सङ्कल्प हैं। इस समय भी वे अपने सङ्कल्पसे च्युत नहीं हुए। वे मुस्करा करके बोले, "तुम लोगोंके बीचमें मैं तुम्हारी सखीको ही सुन्दरी समझता हूँ।" प्रभुकी इस बातसे घरमें बालिकाओंके बीच हँसीकी एक लहर उठी। उस तरङ्गकी प्रतिध्वनि आचार्य-गृहिणीके कानोंमें पहुँची। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी लज्जावश वहाँसे उठकर भागनेके लिए तत्पर हो गयीं, परन्तु सखियोंने उनको पकड़कर वरके वाम भागमें बैठा दिया। इसी समय एक दूसरी रसिका बालिकाने मजाकमें हँसते-हँसते प्रभुसे कहा, "अपनी बहूको सबसे बढ़कर सुन्दरी बतानेमें तुमको लज्जा नहीं आयी?"

प्रभु इस बालिकाकी बातसे बहुत सन्तुष्ट हुए। यह बालिका बहुत छोटी उम्रकी थी। प्रभुकी कृपादृष्टि उसके ऊपर पड़ी। हास्यमयी बालिका प्रभुके दाहिने

ओर आकर बैठ गयी। प्रभुके श्रीहस्तमें अपने कोमल-कर-पल्लवको देकर उनके मुखचन्द्रकी ओर देखती हुई बालिका फिर बोली—"वर! तुम भी बड़े सुन्दर हो, इसीसे तुम्हारी बहू बड़ी सुन्दरी है। तुमने ठीक कहा है, तुम्हारी बहू सबसे बढ़कर सुन्दर है।" बालिकाकी सरलतापूर्ण मधुर वाणी सुनकर प्रभुने मनमें बड़ा सुख अनुभव किया। बालिकाको लेशमात्र भी भय नहीं है और प्रसन्न मुखसे प्रभुके श्रीहस्तको धारण करके उनके सुन्दर मुखकी ओर देखकर बातें कर रही है। दूसरी बालिकाएं अवाक् होकर देख रही हैं। क्योंकि प्रभुका दीर्घाकार शरीर और गम्भीर भाव देखकर उनके सरल बाल हृदयमें पहले कुछ भयका सञ्चार हुआ था, जो अब तक सम्पूर्ण रूपसे दूर नहीं हुआ है। प्रभु बालिकाकी बातका और क्या उत्तर देते? उसकी पीठ पर अपने श्रीकर-कमलोंके स्पर्शके द्वारा उस पर कृपा कर रहे हैं। सरला बालिका आनन्दसे प्रफुल्लित होकर प्रभुके श्रीचरणोंमें गिर पड़ी। सौभाग्यवती बालिकाके अङ्गमें श्रीगौर-भगवानका पाद-स्पर्श हो गया। तत्काल उसको सर्वसिद्धि प्राप्त हो गयी। अज-भव-वाञ्छित, कमला-सेवित पाद-पद्मकी रजको प्राप्तकर बालिका विवश होकर आनन्दसे हँसती हुई प्रभुके चरणोंमें लोटने लगी। बालिकाका भाग्य देखकर शिव-ब्रह्मादि देवता ईर्ष्या करने लगे।

आओ, पाण्डित्यका अभिमान करने वाले तार्किक भ्रमान्ध ज्ञानगर्वी महापुरुषगण! आओ, एक बार प्रभुके ससुरके घरके इस करुणा भरे दृश्यको देख जाओ। आओ, मायावादी, वेदान्ती चूड़ामणि, आत्माभिमानी सन्यासीवृन्द! आओ, तुम लोग भी आओ, देखो श्री भगवानकी चिरकालकी अदत्त प्रेमसम्पत्ति वे किस प्रकार किस भावसे प्रेमभक्तिरता, साधन-भजन-ज्ञान-रहिता, सप्तवर्षीया बालिकाको अयाचित भावसे लुटा रहे हैं। आओ, निरीश्वरवादी 'तत्त्वमसि' 'सोऽहं' दलके साधुवृन्द! तुम लोग भी एक बार आओ। आकर देख जाओ, तुम्हारा वही निराकार, निर्विकार, पूर्ण ब्रह्म सनातन, अवाङ् मनस-गोचर विशुद्ध चैतन्यघन, सच्चिदानन्द, परमपुरुष आज नदियामें क्या ही अपूर्व प्रेमभक्तिका भण्डार खोले हुए है। ज्ञान, वैराग्य, योग-याग, जप-तप, ध्यान-धारणा, सेवा-उपासनाकी जिस सम्पत्तिको कहीं किसीने प्राप्त नहीं किया, आज वल्लभाचार्य घरमें उसी अनर्पितचरी प्रेमभक्तिकी लूट मची हुई है। अनधिकारिणी नारीजातिसे तुम लोग बड़ी घृणा करते हो, तुम्हारे शास्त्रके मतसे स्त्री-शूद्र वेद-पाठसे वञ्चित है, परन्तु देखो तो हमारे दयामय श्रीगौर भगवानने अधमा स्त्रीजातिको किस प्रकार अपना गुप्तधन प्रेम-भक्ति-रत्न दान करके कृतार्थ किया है। तुम्हारे भाग्यकी अपेक्षा उनका भाग्य कहीं अच्छा है, क्या इसकी विवेचना तुम लोग नहीं करते? क्या कुछ स्थिर चित्तसे ज्ञान गर्व छोड़कर इसका उत्तर दोगे?

सबके अन्तमें आओ पाश्चात्य शिक्षाभिमानी सुरुचि सम्पन्न हमारे प्रिय बन्धुगण! तुम लोग बुद्धिके बलसे संसारमें सर्वश्रेष्ठ बुद्धि-जीवि माने जाते हो।

तुम अपनी प्रखर-तीक्ष्ण बुद्धिके द्वारा जिसको कुरुचि समझते हो, वह वस्तुतः कुरुचि नहीं है, इस बातको श्रीगौर भगवानके ऊपर लिखे हुए सुन्दर सांसारिक चित्रको देखकर क्या नहीं समझ पाते ? तुम लोगोंमें इतनी बुद्धि है, इतनी विवेचना शक्ति परिचय देते हो, जरा विवेचना शक्तिका परिचय देकर स्थिर भावसे विवेचना पूर्वक बतलाओ तो कि ऊपर लिखे चित्रमें कहीं काम गन्ध मिलती है क्या ? बिना देखे, बिना सुने, बिना समझे, नाक भौं मत सिकोड़ना। श्रीभगवानने तुम लोगोंको ज्ञान बुद्धि दी है, उत्तम घ्राणशक्ति प्रदान की है। भलीभाँति दुर्गन्धरहित विमल नासिकासे प्रेम भक्ति रूपी पुष्पोद्यानके प्रेम-पारिजात पुष्पको एक बार सूँघकर देखो, हृदयमें श्रीभगवानका पवित्र नाम लेकर, उनके उद्देश्यसे एक बार हाथ जोड़कर ऊपर दृष्टि करके अपने हृदय पर हाथ रखकर निष्कपट भावसे बोलो कि वह गन्ध कैसी है ? स्पष्ट बात बोलनेमें लाज क्या है ? इससे तुम्हारे सम्मानको बट्टा न लगेगा। श्रीभगवान् नरवपु धारण करके नदियामें अवतीर्ण हुए थे—इस पर तुम विश्वास क्यों नहीं कर पाते ? जब भगवान सिंह, बराह, कूर्म आदि रूप धारण करके अंश रूपमें भूतल पर अवतीर्ण हो सकते हैं, वे यदि नदियामें शुद्ध ब्राह्मण-कुलमें विप्र-कुमारके रूपमें पूर्ण होकर आविर्भूत हुए तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? नदियाका ब्राह्मण बालक सब अवतारोंका अवतारी है, यह बात उनकी मधुर लीलाके अनुशीलनसे ही समझमें आ जायेगी। एक बातसे यह प्रमाणित हो जायगी। इतनी दया, इतनी करुणा, कलिके पतित अधम जीवके प्रति उनकी ऐसी अयाचित कृपा, उनके उद्धारके कार्यमें इस प्रकारका त्याग किसी अवतारमें देखा है ? सर्वोपरि उनकी सर्वश्रेष्ठ सरल धर्मशिक्षा प्रणाली, स्वयं आचरण करके कलिके जीवको प्रेमभक्तिकी शिक्षा प्रदान करना, अपने हाथों भक्ति मार्गके पथको परिष्कृत करना—इत्यादि कर्म श्रीभगवानके स्वयं प्रकाशके पूर्ण परिचायक हैं। ये सारी बातें लिखनेके लिए इस ग्रन्थमें स्थानका अभाव है। दूसरे ग्रन्थोंमें इस विषयको मैंने विस्तारपूर्वक लिखा है।

श्रीलक्ष्मीप्रियाजीका पतिके साथ श्वसुर-गृह लौटना और उनका गृहस्थ जीवन

शचीनन्दन ससुरालमें तीन दिन रहे। शचीमाताके कथनानुसार श्रीपाद वल्लभाचार्यने जामाताके साथ कन्याको पुनः ससुराल भेज दिया। पड़ोसिनियोंमें किसी किसीने उनकी गृहिणीसे कहा, "यह कैसी बात है। लोगोंका विवाह हो जाने पर घरका काम बिगड़ने लगता है। बच्चीको साल भर भी पिताके घर नहीं रहने दिया। तुमने भेजा क्यों ?" आचार्य-गृहिणीके मनमें दुःख अवश्य है। पर उसे उन्होंने दबा रक्खा है। उत्तरमें उन्होंने कहा—"जामाता और उनकी माताकी बड़ी

साध है कि मेरी लक्ष्मीप्रिया उनके पास ही कुछ दिन रहे। समधिन मेरी बेटीको बहुत प्यार करती हैं। मेरे पास मेरी बेटीको जितना लाड़-प्यार मिलता है, उसका सौगुना आदर ससुरालमें मिलेगा। यह मैं अपनी आँखों देख आयी हूँ। तुम सब आशीर्वाद दो कि चिरंजीवि होकर यह ससुरालमें रहे।" पड़ोसिनोंके मुँह बन्द हो गये। वे कन्याकी माँके मुँहसे ऐसी बात सुनकर और कुछ न बोल सकीं।

शचीनन्दन घर आ गये हैं। माता और बहूके साथ मन लगाकर गृहस्थी चला रहे हैं। इसके बाद लक्ष्मीप्रिया देवी कभी पिताके घर नहीं गयीं। पति-सेवा छोड़कर वे पिताके घर किस लिए जायँ? यह बात उन्होंने अपने प्राण-वल्लभको विवाहके समय कही थी। विवाह हुए एक वर्ष बीत गया, वे ससुरालके मर्मको अब भलीभाँति जान गयी हैं। सास और स्वामीकी सेवा उनके जीवनका परम धर्म है, यह वे अच्छी तरह जान गयीं हैं। इसी कारण वे पिताके घर नहीं जातीं। यह बात ठाकुर जयानन्द अपने श्रीचैतन्य मङ्गल ग्रन्थमें लिख गये हैं—

लक्ष्मी ठाकुरानी गौरचन्द्र सेवा करि।
ना गेला बापेर बाड़ी नवद्वीप छाड़ि।।

सासकी सेवाके सिवा उनका और कोई कार्य ही नहीं है, पतिके चरण-चिन्तनके सिवा उनका और कोई धर्म नहीं है।

लक्ष्मी ठाकुरानी प्रभुर वचन ना लङ्घिया।
ना गेला बापेर बाड़ी शाशुड़ी छाड़िया।।
शाशुड़ीर सेवा हैते आन नाहि मने।
गौराङ्गचरण ध्यान करे रात्रि दिने।।

(ज० चै० मं०)

शचीमाताके दुःखका संसार अब सुखका आलय बन गया है। उनके घर मानो कमलाका आविर्भाव हो गया है। यह बात उन्हें क्षण-क्षण समझमें आ रही है। वे बीच-बीचमें सोचती हैं—

—बूझिलाम कारण इहार।
ए कन्यार अधिष्ठान आछे कमलार।।

(चै० भा०)

पहलेके समान शचीमाताके घरमें अब दरिद्रता नहीं है। सब बातोंमें सम्पन्नता है। न जाने कहाँ से कौन सारे पदार्थ घरमें ला देता है। किसी वस्तुका कभी कोई अभाव नहीं दीखता। शचीमाता मन ही मन सोचती हैं—

पूर्व्वप्राय दरिद्रता दुःख एबे नाइ।
एइ लक्ष्मी बधू आसि गृहे प्रवेशिले।
कोथा हैते ना जानि आसिया सब मिले।।

इस प्रकार अनेक बातें शचीमाताके मनमें उठती हैं। निमाईचाँदकी कल्याण कामनासे वे नित्य देव-देवीकी पूजा करती हैं, ब्राह्मणोंको भोजन कराती हैं, दीन-दरिद्रोंको मुक्त हस्त अन्न दान करती हैं। उनके सोनेके संसारमें किसी वस्तुका अभाव नहीं है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी घरका सारा काम-काज अपने हाथों करती हैं। वे रसोईके काममें सासकी विशेष सहायता करती हैं। फलस्वरूप इस अल्प वयसमें ही उन्होंने रसोई बनाना सीख लिया है। परन्तु शचीमाता उनसे रसोई नहीं बनवातीं। बारह वर्षकी बालिकासे क्या कोई रसोई बनवाता है? फिर वे क्यों बनवायेंगी? श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी यदि किसी दिन भोजन बनाने जाती हैं, तो शचीमाता झटपट आकर उनको रसोई घरसे उठाकर स्वयं सब काम छोड़कर हाँड़ी लेकर बैठती हैं। इसमें ही उनको सुख मिलता है। अपने हाथसे भोजन बनाकर अतिथि-ब्राह्मणको भोजन करानेमें उनको जो सुख मिलता है, अपने सोनेके चाँद पुत्र और पुत्र-वधूको भोजन करानेमें उनको जो आनन्द होता है, उससे अधिक आनन्द या सुख देवपूजा या भजन-साधनमें नहीं होता। श्रीगौर-भगवानकी गृहस्थीके सब कामोंमें ही शचीमाताकी सब साधना सिद्ध होती है।

विवाहके उपरान्त प्रभुकी दिनचर्या

प्रभुकी अवस्था यद्यपि इस समय १७ से १८ वर्षकी होगी। इतनी छोटी अवस्थामें यद्यपि नदियाके लोग उनको निमाई पण्डित कहते हैं, परन्तु उन्होंने अभी अध्ययन नहीं छोड़ा है। छात्रोंको पाठ देना और अध्ययन करना, इसके सिवा प्रभुको इस समय कोई कार्य नहीं है।

एइ मत गुप्त भावे आछे विप्रराज।
अध्ययन बिना आर नाहि कोन काज॥
(चै० भा०)

इस समयके प्रभुके अपरूप रूपका वर्णन श्रीचैतन्य-भागवतकार श्रीवृन्दावन दास ठाकुरने अति उत्तम किया है।

रूप-मुग्ध साधक कवि लिखते हैं—

जिनिया कन्दर्प कोटि रूप मनोहर।
प्रति अङ्गे निरूपम लावण्य सुन्दर॥

करोड़ों कामदेवको पराजित करनेवाला प्रभुका मनोहर रूप है। उनके प्रति अङ्गका सुन्दर लावण्य उपमारहित है।

आजानु लम्बित भुज कमल नयान।
अधरे ताम्बूल दिव्यवास परिधान॥

घुटनों तक लम्बी बाहें हैं, नेत्र कमलके समान हैं। होठों पर पान एवं शरीर पर सुगन्धियुक्त दिव्य वस्त्र हैं।

सर्व्वदाये परिहास मूर्त्ति विद्यावले ।
सहस्त्र पड़ुया सङ्गे जबे प्रभु चले ।।

विद्या-बलसे मुस्कराहटयुक्त मुख-मण्डल है । जब प्रभु चलते हैं तो हजारों विद्यार्थी उनके साथ होते हैं ।

सर्व्व नवद्वीप भ्रमे त्रिभुवनपति ।
पुस्तकेर रूपे करे प्रिया सरस्वती ।।

त्रिभुवनपति प्रभु सम्पूर्ण नवद्वीपमें घूमते हैं । पुस्तकके रूपमें हाथमें प्रिया सरस्वती उनके साथ है ।

नवद्वीपे हेन नाहि पण्डितेर नाम ।
जे आसिया बूझिवेक प्रभुर व्याख्यान ।।

नवद्वीपमें ऐसा कोई भी पण्डित नहीं है जो प्रभुके व्याख्यानको समझ सके ।

सबे एक गङ्गादास महा भाग्यवान ।
जार ठाँइ करे प्रभु विद्यार आदान ।।

सबमें एक गङ्गादास ही महा-भाग्यवान हैं । जिनके यहाँ प्रभु विद्याका आदान करते हैं ।

सकल संसारि लोक बले धन्य धन्य ।
ए नन्दन जाँहार ताँहार कोन दैन्य ।।

सब लोग धन्य-धन्य कहते हैं कि ये जिनके नन्दन हैं उसके यहाँ दीनता कैसी ।

जतेक प्रकृति देखे मदन समान ।
पाखण्डीये देखे जेन यम विद्यमान ।।

जितनी स्त्रियाँ हैं वे उन्हें कामदेवके समान देखती हैं । पाखण्डी देखते हैं मानों यमराज विद्यमान हैं ।

पण्डित सकल देखे जेन बृहस्पति ।
एइ मत देखे सभे जार जेन मति ।।

जितने पण्डित हैं उन्हें वे साक्षात् बृहस्पति मालूम पड़ते हैं । इस प्रकार जिसकी जैसी दृष्टि है सब उन्हें वैसाही देखते हैं ।

नन्द-नन्दन श्रीकृष्ण जब कंसके बधके लिए उसकी राज-सभामें उपस्थित हुए तब दर्शकवृन्दमें जिसकी जैसी रुचि और मति थी, उसने उनका उसी रूपमें दर्शन किया था, यथा श्रीमद्भागवतमें—

मल्लानामशनिर्नृणां नरवरः स्त्रीणां स्मरो मूर्त्तिमान्,
गोपानां स्वजनोऽसतां क्षितिभुजां शास्ता स्वपित्रोः शिशुः ।
मृत्युर्भोजपतेर्विराडविदुषां तत्त्वं परं योगिनां,
वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रङ्गं गतः साग्रजः ।।
(श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध, अध्याय ४३, श्लोक १७)

नदियाके लोग नदियाके मार्गमें नदियानन्द श्रीगौरचन्द्रका दर्शन करके इसी प्रकार अपनी अपनी कामनाके अनुरूप उनकी रूप सुधा पान करते थे । इस प्रकार अपरूप रूपसम्पन्न, सर्वगुणनिधि सर्वाङ्ग सुन्दर ब्राह्मणकुमारको देखकर श्रीवास आदि वैष्णवगणके मनमें हर्ष-बिषाद उपस्थित होता था । विद्याके गौरवमें वे भूलने वाले लोग न थे । वे सोचते थे —

हेन दिव्य शरीरे ना हय कृष्णरस ।
कि करिबे विद्याय हइले कालवश ।।
(चै० भा०)

ऐसे दिव्य शरीरमें कृष्ण-रस नहीं हुआ तो कालवश होने पर विद्या क्या करेगी ?

प्रभुकी वैष्णवी मायामें वे मुग्ध थे । उनको पहचान कर भी नहीं पहचानते । कोई कोई उनके सामने ही बोलते थे—

"कि कार्य्ये गँवावो काल तुमि विद्याभ्यासे ?"

मेरे रंगीले प्रभु उनका मन बूझकर हँस देते और दैन्यभावसे उत्तर देते, "आप लोग मुझको भक्तिकी शिक्षा देकर श्रीकृष्णके चरणोंमें रतिमति करा दें ।" एक दिन नदियाके मार्ग पर प्रभु अपने रङ्गमें चले जा रहे थे, गोविन्द दास, मुकुन्द आदि वैष्णवगणके साथ मार्गमें साक्षात्कार हुआ । वे भी इस प्रकारकी बातें कहकर भयसे भाग चले । क्योंकि वे जानते थे कि निमाई पण्डित उद्धत-शिरोमणि हैं, कहीं बातोंमें ही दङ्गा फसाद न कर बैठें । सर्वज्ञ प्रभु उनके मनकी बात जानकर उनको लक्ष्य करके हँसते हुए बोले—

एमत वैष्णव मुञि हइब संसारे ।
अज भव आसिबेक आमार दुयारे ।।

संसारमें मैं ऐसा वैष्णव बनूँगा कि ब्रह्मा और विष्णु मेरे द्वार पर आयेंगे ।

शुन भाइ सब एइ आमार वचन ।
वैष्णव हइब मुञि सर्व्वविलक्षण ।।

सब भाई मेरे ये वचन सुनें । मैं सबसे विलक्षण वैष्णव बनूँगा ।

आमारे देखिया एबे जे सब पलाय ।
ताहाराओ जेन मोर गुण कीर्ति गाय ।।
(चै०भा०)

जो लोग मुझको देखकर दूर भागते हैं, वे ही सब मेरे गुण-कीर्त्तन गायेंगे ।

वस्तुतः हमारे प्रभु ऐसे वैष्णव हो गये थे कि उनके द्वार पर शिव-विरिञ्चि आकर हाथ जोड़कर खड़े रहते थे । प्रभुने यहाँ स्वप्रकाश न करके प्रच्छन्नभावसे ऐश्वर्य विकास किया । ऐसा वे बीच-बीचमें करते रहते थे । कोई इसे समझ नहीं पाता था । वे इस समय विद्यारसमें तल्लीन थे । इधर पक्के गृहस्थ थे । विवाह करनेके बाद उन्होंने गृहस्थाश्रममें काफी मन लगाया है ।

देवीकी रसोई बनानेकी साध

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी क्रमशः गृहस्थीके सारे कार्योंको समझती जा रही हैं । वृद्ध सासके हाथसे सारा कार्य-भार अपने ऊपर स्वयं ले रखा है । भोजनालयमें रसोईके सारे कार्यका जोगाड़ सासके लिए कर देती हैं । शचीमाता केवल बैठकर भोजन बनाती हैं । श्रीमती लक्ष्मीप्रियाकी बड़ी इच्छा है कि सासको इस कठिन

कार्यके भारसे निष्कृति प्रदान करें, परन्तु शचीमाता उनकी एक नहीं सुनतीं। ऐसी कम अवस्थाकी बहूके ऊपर यह बोझ डालकर क्या वे निश्चिन्त रह सकती हैं? शचीमाता प्राण रहते ऐसा नहीं कर सकतीं। देवता और ब्राह्मणके लिए भोजन बनाना ही उनका भजनसाधन है। विशेषतः उनका निमाईचाँद शाक-व्यञ्जनमें विशेष रुचि रखता है, माताके हाथके भोजनके सिवा अन्य आहारसे उनको तृप्ति नहीं होती। शचीमाता सब काम छोड़कर सबसे पहले ठाकुर भोगके लिए प्रतिदिन नाना प्रकारके शाक-व्यञ्जन प्रस्तुत करती हैं।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको रसोई करनेकी बड़ी साध है। उन्होंने सासके पास सब कुछ सीखा है। परन्तु उनकी मनकी साध पूरी नहीं होती। एक दिन उन्होंने अपने प्राणवल्लभके सामने यह बात उठायी। रातमें शयन-गृहमें श्रीगौराङ्ग दिव्य पलङ्गके ऊपर शयन कर रहे थे। देवी उनके चरणोंमें बैठीं अज-भव-वन्दित रक्त चरण युगलको अपने ऊरु देशमें स्थापन करके पद सेवा कर रही थीं। दोनों एक दूसरेके मुखचन्द्रकी ओर देख रहे थे। देवीने प्रभुसे पूछा, "तुमसे एक बात कहनेका मन हो रहा है। बहुत दिनोंसे कहनेकी इच्छा होने पर भी कह नहीं पा रही हूँ। तुम्हारी माँ अब वृद्धा हो गयी हैं; रसोई करनेमें उनको बड़ा कष्ट होता है। मुझको सब कार्य करना उन्होंने सिखला दिया है। रसोई करनेकी मेरी बड़ी साध है। वे मुझे कदापि यह कार्य नहीं करने देंगी। वे कहती हैं, 'मेरे रसोई करनेसे तुम्हारा पेट न भरेगा।' तुम जो खाकर तुष्ट होवोगे, मैं वही करूँगी। तुम माँको कहकर रसोई बनानेका भार मुझपर देकर कृतार्थ करो।"

प्रभु प्रियतमाकी बात सुनकर मनमें बहुत आनन्दित हुए। अपनी मातृ-सेवा-परायणा भार्याकी इस अल्प वयसमें इतने बड़े कठिन कार्यका गुरुतर भार लेनेकी लालसा देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए। प्रभु सोये हुए थे, उठकर बैठकर प्रियतमाको आदरपूर्वक हाथ पकड़ कर पास बैठा लिया। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्रभुकी पदसेवासे वञ्चित होकर दुःखित हो उठीं। उन्होंने मन ही मन सोचा, "क्या कहना था क्या कह गयी, क्या अपराध हुआ, यह तो ज्ञान नहीं। प्रभुने पद सेवासे वञ्चित क्यों किया?" यह सोचकर वे शत अपराधीके समान भय और लज्जासे सिकुड़कर प्रभुके निकट बैठीं।

प्रभु हमारे सर्वज्ञ हैं। उन्होंने प्रियतमाके मनकी बात समझ कर उनको आदरपूर्वक अपनी गोदमें उठा लिया। प्रियतमाका यह लज्जा और भीति-विह्वल भाव प्रभुको बहुत अच्छा लगा। वे प्रियतमाके सुन्दर कुसुम कोमल चिबुक पर अपने करकमलोंको प्रदान करके आदरपूर्वक बोले—"लक्ष्मीप्रिये! तुम्हारे सेवा-कार्यसे मेरी माता परम सन्तुष्ट हैं। यह वे मुझसे दिनमें सैकड़ों बार बोलती हैं।

तुमने इतनी छोटी उम्रमें सेवाकार्यसे माताको और मुझको पूर्णतः वशीभूत कर लिया है। तुम्हारे हाथकी रसोई खाना मेरे लिए परम सौभाग्यकी बात होगी। तुम जो कार्य करती हो, उसमें मैं तनिक भी दोष नहीं देख पाता। तुम मेरी गृहलक्ष्मी हो। जबसे तुम मेरे घर आयी हो, मेरा घर लक्ष्मीका भाण्डार बन गया है। मैं माँसे कह दूँगा, वे तुम्हारे मनकी साध पूरी करेंगी।" इतना कहकर प्रभुने प्रियाके मुखकमल पर एक प्रेम-चुम्बन प्रदान किया।

देवी लज्जासे अवनत मुखी होकर प्राणवल्लभके पद-प्रान्तमें बैठ गयीं। वे उस समय पतिप्रेममें विह्वल होकर अपने आपको भूल गयीं। कुछ देरके बाद प्रकृतिस्थ होकर चन्द्रमुखको अवनत करके प्राणवल्लभसे बोलीं, "नाथ! मैं सब प्रकारसे तुम्हारे अयोग्य नारी हूँ। तुम्हारी दासी होनेके उपयुक्त नहीं हूँ। यह मैं खूब जानती हूँ। परन्तु, तुमने दया करके जो मुझे दासीके रूपमें वरण किया है, यह तुम्हारी महिमा और करुणा है। मेरी क्या क्षमता, जो तुम्हारी माताकी सेवा कर सकूँ? तुम्हारे गुणसे ही तुम्हारी पूजनीया जननी मुझसे स्नेह करती हैं, प्राण-तुल्य मानती हैं। बहुत भाग्यसे मुझे तुम्हारी और तुम्हारी माताकी सेवाका भार प्राप्त हुआ है। आशीर्वाद दो कि जन्म-जन्मान्तर यह सेवा-कार्यका भार मुझे प्राप्त होता रहे। इससे अधिक सुखप्रद और प्रीतिप्रद वस्तु जगतमें और कुछ नहीं है। नाथ! अपनी चरण-सेवासे मुझे वञ्चित न करना।" इतना कहकर श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने प्रभुकी पदधूलि लेकर अपने सिर पर चढ़ा ली। प्रभुने हँसकर कहा—"लक्ष्मीप्रिये! प्रियतमे! अपनी सेवाके बलसे ही तुम मेरी वक्षःविलासिनी बनी हो। मैं सदाके लिए तुम्हारी सेवाके वशीभूत हूँ। श्रीभगवान् तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करेंगे।" यह कहकर प्रभु शैया पर सो गये। देवी पुनः अपने प्राणवल्लभकी पद-सेवामें लग गयीं।

प्रभुका मातासे निवेदन

दूसरे दिन जब शचीमाता रसोई घरमें रसोई बना रही थीं तो निमाईचाँद दौड़ते हुए वहाँ आये और माताके निकट बैठ गये। शचीमाता पुत्रके रक्ताभ मुखचन्द्रको देखकर हंसती हुई बोलीं—"बेटा निमाई! आ गये? बैठो। यह पीढ़ा लेकर मेरे पास बैठो। बेटा! तुम कहाँ गये थे? अहा! मुँह इस धूपमें लाल हो गया है। इतना दौड़ते-दौड़ते कहाँसे आये थोड़ा धीरे-धीरे चलना चाहिए। कभी कहीं गिर पड़ोगे तब मैं हाय-हाय करके मरूँगी।"

शचीनन्दन पीढ़ा पर योगासन लगाकर बैठे हँसते-हँसते माँसे बोले—"माँ! गिरनेसे मुझे चोट नहीं लगती।" शचीमाता हँस पड़ी। इसके बाद जब प्रभु कृष्णप्रेममें उन्मत्त होकर कीर्त्तन करते-करते भूतल पर पछाड़ खाकर गिर पड़ते थे

तो उसे देखकर शचीमाताने श्रीभगवानसे वर माँगा था कि उनके निमाईचाँद जब कीर्त्तनके आनन्दमें विह्वल होकर भूतल पर मूर्छित होकर गिरें तो धरती माता कोमल हो जायँ, और उनके पुत्रके शरीरमें चोट न लगे। शचीमाताकी इस वर-प्रार्थनासे ही शचीनन्दनकी देहमें चोट नहीं लगती थी। प्रभुने उसी बातका सूत्रपात यहाँ किया है।

निमाईचाँद रसोई घरमें माताके पास बैठकर उनसे नाना प्रकारकी बातें पूछते हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी पासके एक दूसरे घरके द्वार पर खड़ी होकर माँ-बेटेकी बातचीत सुनती हैं और अलक्षित भावसे प्राणवल्लभकी रूपसुधा पान करती हैं। बहुत बातें हो जाने पर प्रभुने हँसकर मातासे कहा, "माँ! तुम अब वृद्धा हो गयी हो, अब भी तुम क्यों रसोई करती हो? अपनी बहूके हाथका तुम खाओ तो उसे बड़ा आनन्द होगा। वह अब बड़ी हो गयी है, रसोई बनाना सीख गयी है। उसके ऊपर रसोईका भार देकर तुम निश्चिन्त हो जाओ। तुम्हारी सेवा करके वह अपना उद्धार करे।" यथा जयानन्द ठाकुरके श्रीचैतन्यमङ्गल ग्रन्थमें—

एक दिन गौराङ्ग रन्धनशालाय गिया।
मायेरे कहिल किछू हासिया हासिया॥
बृद्ध शरीर तोमार कत दुःख पाय।
तोमार बधू राँधेन यदि तुमि अन्न खाय॥
यदि बल तोमार बहू तोमार सेवा करु।
तोमार सेवाये लक्ष्मी भवार्णवे तरु॥
आजि हइते माता तुमि छाड़ह रन्धन।
लक्ष्मीर रन्धने माता करह भोजन॥

शचीमाता पुत्रकी बात सुनकर हँसे बिना न रह सकीं। वे सस्नेह वचनोंसे उत्तर देने लगीं—"बहूकी क्या अभी रसोई करनेकी अवस्था हो गयी है जो उसके गलेमें मैं हाँड़ी बाँधदूँ? पागल है बेटा मेरा। मैं जब तक कर सकती हूँ, तुम्हारे लिए थोड़ी रसोई बनाकर मनुष्य जीवनको सफल कर लेती हूँ। बड़े भाग्यसे मुझे ऐसी सोनेकी बहू मिली है। उसके गलेमें क्या मैं अभी हाँड़ी बाँध सकती हूँ? कुछ दिनके बाद वह अपना काम तो अपने हाथमें लेगी ही। इस समय दो दिन मैं अपने संसारकी साध पूरी कर लूं।"

हमारे उद्धत-शिरोमणि प्रभु माताकी बात सुनकर रुष्ट हो गये। प्रियतमाकी साध पूर्ण करनेकी उनकी इच्छा है। वे जानते हैं कि उनकी माता सीधे यह काम छोड़ने वाली नहीं हैं। यह समझकर उन्होंने रुष्ट होकर मातासे कहा, "माँ! तुम यदि मेरी बात नहीं सुनती हो तो अब मैं घर ही नहीं आऊँगा।" शचीमाता विशेष रूपसे जानती हैं कि उनका निमाई जो कहता है वह करके रहता

है। निमाईकी बातका प्रतिवाद करनेका किसीको साहस नहीं होता। शचीमाता ने मन ही मन सोचा, "पुत्र तो दिन-रात रसोई घरमें रहेगा नहीं, मेरी बहू नाम मात्रके लिए हाँड़ी पकड़ेगी, मैं सारा काम कर दूँगी। फिर निमाईके साथ यह झंझट पैदा करनेकी क्या आवश्यकता? यह सोचकर हँसते-हँसते उन्होंने पुत्रसे कहा, 'अच्छा ठीक! आजसे ही बहू रसोई करेगी।"

भाल भाल करिया करिला अङ्गीकार।
आजि हैते लक्ष्मी बहू रन्धनेर भार॥
(ज० चै० मं०)

वैष्णव भोजनका आयोजन

माताकी बात सुनकर प्रभुके मनमें बड़ा आनन्द हुआ उन्होंने। हँसकर उनको कहा, "माँ! तुम्हारी बहू रसोई करेगी, मैं आज हरिदास ठाकुर, श्रीवास पण्डित और उनके चारों भाई वासुदेव दत्त, मुकुन्द, गङ्गादास पण्डित, वक्लेश्वर पण्डित आदिको निमन्त्रण दे आता हूँ। उनको पिष्टक, पायसान्न आदि व्यञ्जन तैयार करके भली भाँति भोजन कराना। इससे तुमको और तुम्हारी बहूको बहुत पुण्य होगा।" इतना कहकर प्रभु बड़े आनन्दसे अपराह्लमें निमन्त्रण देनेके लिए नदियाके रास्ते पर निकले। रास्तेमें प्रभुको वनमाली आचार्य याद आये। वे उनके विवाहके घटक चूड़ामणि थे। घरमें जब जो प्रयोजन होता है, प्रभु पहले अपने विवाहके घटकको उसमें निमन्त्रित करते हैं।

मायेर वचन शुनि गौरचन्द्र हासे।
भोजन कराह कालि श्रीहरिदासे॥
श्रीनिवास पण्डित ठाकुर चारि भाइ।
वासुदेव मुकुन्ददत्त लेखक जगाइ॥
वक्लेश्वर पण्डित भगाइ गङ्गादासे।
भोजन कराब कालि पिष्टक पायसे॥
सकल वैष्णवे आजि देह निमन्त्रण।
लक्ष्मीर रन्धने कालि सवार भोजन॥
(ज० चै० मं०)

प्रभुने अपनी नवीना त्रयोदश वर्षीया बालिका भार्याके ऊपर कैसा विषम गुरुभार अर्पण किया—यह कृपालु पाठक समझ लें। श्रीगौर भगवान् अपनी प्रियतमा लक्ष्मीप्रिया देवीकी शक्तिसे विशेषरूपसे अवगत हैं, और वे यह भी जानते हैं कि प्रियतमाकी शक्तिसे ही वे शक्तिमान् हैं। शक्ति-शक्तिमानका तत्त्व जानना निमाई

पण्डितको बाकी नहीं है। इसी कारण उन्होंने इतने बड़े कामको प्रसन्नतापूर्वक महा शक्ति रूपा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके कन्धे पर सहज ही डाल दिया।

रात बीतते-बीतते शचीनन्दन शैयासे उठकर प्रातः कृत्य समाप्त करके दौड़कर श्रीवासगृहिणी मालिनी देवी और उनकी दासी दुःखीको बुला लाये।

रजनी प्रभाते गौरचन्द्र आज्ञा दिल।
दुःखीदासी मालिनीरे डाकिया आनिल ॥
(ज० चै० मं०)

सात प्रहरिया महाप्रकाशके समय मेरे प्रभुने दुःखीदासीको 'सुखी' नाम प्रदान किया। दुःखिनी दुःखी दासी गौराङ्ग-गतप्राणा थी। शचीमाताके घरमें आज बड़ी धूम मची है, सब पड़ोसकी पुरनारियाँ आकर भोजन बनानेके कार्यमें जुट गयीं। कौन क्या कर रही हैं, सुनिये—

केहो चाल कूटे केहो नारिकेल कुरे।
खीर खिरी दिआ केहो पीठा पुरे ॥

कोई चावल कूट रही है, कोई नारियल कुरा रही है। कोई खीरमें मेवा आदि दे रही है, कोई पेठा पूर रही है।

केहो मूग पेषे केहो दुग्धे देइ ज्वाल।
हरिद्रा पिठाली बांटे केह गुण्डे झाल ॥

कोई मूंग पीस रही है और कोई दूधमें उबाल दे रही है। कोई हल्दीकी गाँठ और कोई मिरच मसाला पीस रही है।

केहो कूटे केहो वाटे केहो आगुन ज्वाले।
केहो काष्ठ आने केहो अनाज पाखाले ॥
(ज० चै० मं०)

कोई कूट रही है, कोई पीस रही है कोई अग्नि प्रज्वलित रही है। कोई लकड़ी ला रही है और कोई अनाज साफ कर रही है।

श्रीलक्ष्मीप्रिया देवी द्वारा रन्धन

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मनमें आज बड़ा आनन्द है। वे गङ्गामें प्रातः स्नान करके दिव्य वस्त्र पहनकर रसोई घरमें प्रविष्ट हुई हैं। शचीमाता बहूके साथ हैं। मालिनी देवी भी हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने एक एक करके सब भोज्य पदार्थोंके पचासों व्यञ्जन तैयार कर डाले।

"पञ्चाश व्यञ्जन अन्न राँधिल कौतुके।"

पायसान्न, पिष्टक, घृत बड़ा आदि सब तैयार कर दिये। ठाकुर जयानन्दने अपने श्रीचैतन्य-मङ्गल ग्रन्थमें इन सभी व्यञ्जनों और मिठाइयोंके नाम लिखे है। कृपालु पाठक इसे सुनकर कानोंको परितृप्त करें। इस प्रसादान्नसे जिन्होंने अपनी

जिह्वाको परितृप्त किया था, उनके उद्देश्यसे साष्टाङ्ग प्रणाम करें। इससे जो आनन्द प्राप्त होगा, उससे हृदयमें प्रेमभक्तिका उदय होगा।

घृतान्न सभारे दिला शाक मूग सूप।
फेना बड़ी लाफरा पटोल वास्तुक ॥
हिङ्ग झाल झोल भाजा तला काञ्जिबड़ा।
बड़ाम्बु शर्करा लाज मिठामुख बीड़ा ॥
क्षीर अमृत-गुटिका खरड़ा नवात।
मनोहरपुलि दुग्धपुलि दुग्धजात ॥
आर्य्या नारिकेल-पुलि साकरा काकरा।
चन्द्रकाति पायेस परमान्न शर्करा ॥
गुटिका डालिमा मधु प्रवासात पुलि।
मन-सन्तोष नयनसुख गङ्गाजल सिलालि ॥
मर्च्या छेना दुग्धपुलि कोरा मृष्ट सर।
अनुपाम जगन्नाथ भोग सुखसार ॥

सभी प्रकारके घृतान्न, शाक, मूंग सूप, फूल बड़ी, लाफरा, परवल (पटोल) बास्तुक, हींग-झाल, रसे वाला साग, भाजा, तले हुए साग, काँजीबड़ा, रस बड़ा, मीठी खील, मीठा-मुख, बीड़ा, खीर, अमृत-गुटिका, खरड़ा, नवात, मनोहर पूड़ी, दुग्धपूड़ी, दुग्धजात, आर्या, नारियल-पूड़ी, साकरा-काकरा, चन्द्रकला, पायस, मीठा परमान्न, गुटिका, डालिमा, मीठी पूड़ी, मन-सन्तोष, नयनसुख, गंङ्गाजल सिलालि, मर्चा, छेना, कोरी दुग्ध पूड़ी, मीठा शर्वत, जगन्नाथ-भोग एवं सुख-सार सभी अनुपम खाद्य पदार्थ बनाये गये।

उस समयके भोज्य द्रव्यके नाम भी अति सुन्दर थे। उनको तैयार करनेकी प्रणाली भी अवश्य अपूर्व थी। दुर्भाग्यवश कृपालु पाठकवृन्द इन सब प्रसादोंके आस्वादनसे वञ्चित हैं, नाम सुनकर ही लालसासे हमारी जीभसे पानी गिरने लगता है। प्रसादके लोभमें पाप है या नहीं, मैं नहीं जानता। यदि है तो रहे। हम वैष्णवोच्छिष्ट छोड़ना नहीं चाहते। नरोत्तम ठाकुर महाशय लिख गये हैं—

"वैष्णवेर उच्छिष्ट, ताहे मोर मन निष्ठ।"

यही हमारा वेद-विधान है। इस महाप्रसादके लिए ही हमारे मनमें सदा लोभ बना रहे। यह लोभ ही सर्वपाप नाशक है।

शचीमाताने रसोई घरमें ठाकुरको भोग लगाया। प्रत्येक अन्न व्यञ्जनके पात्रके ऊपर नवीन तुलसी मञ्जरी चढ़ाकर प्रभुने श्रीकृष्णको भोग लगाया। इसके बाद वैष्णवोंको पंक्तिमें पत्तल देकर बैठाया।

तुलसी मञ्जरी दिया कृष्णे निवेदिला।
सारि दिया सकल वैष्णव वसाइला ॥

(ज० चै० मं०)

वैष्णव-भोजन

सभी हरिस्मरण करके प्रभुके आँगनमें भोजनके लिए बैठे हैं। प्रभु परोस रहे हैं। निमन्त्रित ब्राह्मण वैष्णव वृन्द शतमुखसे प्रसादकी महिमा कीर्त्तन कर रहे हैं। शचीमाताने सबको कहा, "आज मेरी बहूने ठाकुरके भोगके लिए रसोई तैयार की है। छोटी लड़की है, न जाने कैसा बनाया है। ठाकुरने खा लिया क्या ?" सब एक स्वरसे बोल उठे—"ऐसी रसोई कभी कोई बना नहीं सकता। तुम्हारी बहू साक्षात लक्ष्मी है। ऐसा न होता तो वे इस प्रकारका अमृत भोजन कैसे बनातीं ?"

शचीमाता यह सुनकर मनमें बहुत आनन्दित हुई। प्रभुने भी यह सुना। वे वहाँसे हँसकर भाग खड़े हुए। रसोई-घरके द्वार पर खड़ी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने भी सुना। आत्मप्रशंसा सुनकर वे बहुत लजा गयीं। रसिक चूड़ामणि मेरे प्रभु परोसनेकी थाली हाथमें लिए अचानक वहीं जा खड़े हो गये। श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाकी आँखें चार हुईं। दोनोंही मुस्कराकर दो ओर चले गये। प्रभुके मुस्कानेका मर्म यह था कि, "देखा, तुम्हारी साध कैसे पूर्ण की ?" देवीकी मधुर हँसीका मर्म यह था कि, "तुम्हारी कृपासे ही सब कुछ हुआ, तुम्हीं सबके मूल आधार हो।"

वनमाली आचार्य रसोई-घरके द्वार पर भोजन करनेके लिए बैठे थे। श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रियाके इस शुभ मिलन तथा उनके कमल नयनोंके द्वारा यह मधुर भाव आदान-प्रदान करना उन्होंने भली भाँति देखा और कृतार्थ हुए। उनके प्राण युगल-मिलन-सुखके भिखारी थे। हमारे दयामय प्रभु अत्यन्त भक्तवत्सल हैं। वह सुख उनको देनेसे भगवान कुण्ठित न हुए। प्रभु रसोई घरसे निकलते समय वनमाली आचार्यके पास जाकर हँसते हँसते बोले—"पण्डित ! और कुछ चाहिए ?" वनमाली आचार्य प्रभुके मुखचन्द्रकी ओर देखकर प्रेमानन्दसे रो पड़े। वे कुछ कहने जा रहे थे। परन्तु प्रेममें गद्गद होनेके कारण वे बोल न सके। प्रेमावेगके कारण उनका कण्ठ अवरुद्ध हो गया। प्रभुने देखा कि यहाँ खड़ा होना ठीक नहीं है। यहाँ देर तक खड़े रहने पर एक काण्ड हो जायगा। यह सोचकर वे और कुछ न कहकर छलाँग मारकर वहाँसे परोसनेका पात्र हाथमें लिए आँगनमें उतर आये और सबको उसी प्रकार पूछ-पूछ कर सन्तुष्ट किया।

प्रभुके घर उस दिन बड़े समारोहसे ब्राह्मण-वैष्णव-भोजन हुआ। उन्होंने सबको माल्य, चन्दन, कर्पूर और ताम्बूल देकर सन्तुष्ट किया। वैष्णवोंको दिव्य वस्त्र दान दिए। श्रीवास पण्डितको प्रभुने कृष्ण-केलि वस्त्र प्रदान किया।

पिठा पाना भोजने वैष्णव सन्तोषिला।
माला चन्दन दिया सभारे तुषिला॥
कर्पूर ताम्बूल दिल दिल सरुवास।
कृष्ण केलि दिया तुष्ट कैल श्रीनिवास॥
(ज० चै० मं०)

वनमाली आचार्यको प्रभुने वस्त्रादि कुछ भी नहीं दिया। क्योंकि वे सब अति तुच्छ पदार्थ हैं। एकान्तमें ले जाकर प्रभुने उनको बारम्बार प्रेमालिङ्गन प्रदान करके कृतार्थ किया। यह कोई देख न सका। वनमाली आचार्य प्रेम विह्वल नेत्रोंसे प्रभुकी अपरूप रूप-सुधाका पान करते हुए चित्रलिखितसे खड़े रह गये। प्रभु वहाँसे भागकर चले गये।

स्वयं श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने हरिदास ठाकुरको विदाई दी। यह प्रभुका आदेश था। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने अपने हाथों हरिदास ठाकुरको चादर तथा अपने हाथका तैयार किया हुआ एक हरिनामका झोला दिया। दैन्यावतार हरिदास ठाकुरने आँगनके निम्न स्थानमें सिर झुकाकर देवीके श्रीकरकमलोंसे प्रसादग्रहण किया और साष्टाङ्ग दण्डवत करके प्रभुकी पत्नीको प्रणाम किया। ठाकुर जयानन्द लिखते हैं—

"लक्ष्मी विदाय दिला श्रीहरिदासे।"

परमानन्दमें उन्मत्त हो सब अपने-अपने घर चले।

प्रभुका भोजन और मातासे वार्तालाप

प्रभु अब भोजन करनेके लिए बैठे। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी उनको परोसने लगीं। शचीमाता और मालिनी देवी दोनों ओर बैठी थीं, प्रभु आनन्द मनसे भोजन कर रहे हैं। भोजन करते-करते जननीके मुखकी ओर देखकर हँसते हुए बोले—"मैं समझता था कि तुम्हारी बहूने रसोई करना नहीं सीखा है, परन्तु अब देखता हूँ तुम्हारी सुशिक्षासे यह पक्की रांधुनी (रसोई बनानेमें निपुण) बन गयी है। माँ! तुम अब रसोई घरमें न जा सकोगी।"

शचीमाता पुत्रकी बात सुनकर हँस पड़ीं। मालिनी देवी आनन्दसे उत्फुल्ल होकर बोलीं—"निमाई! तेरे बड़े भाग्य हैं, तभी ऐसी बहू पायी है।" यह बात सुनकर शचीनन्दन ठहाका मारकर हँस पड़े। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी लज्जावश फिर परोसनेके लिए नहीं आयीं। शचीमाताने पुत्रको अच्छी तरह भोजन कराया। सबके भोजन कर लेनेके बाद श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने प्रभुका प्रसाद पाया।

भक्तवत्सल श्रीभगवान् इसी प्रकार भक्तकी मनोकामना पूर्ण करते हैं। भक्तकी कोई कामना उनके सामने अपूर्ण नहीं रहती। श्रीभगवानकी कृपादृष्टिसे सर्वसिद्धि प्राप्त होती है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी बालिका होने पर भी श्रीगौर भगवान्की अत्यन्त प्रियतमा तथा एकान्त भक्त थीं। अपनी ऐकान्तिक भक्तिके बलसे ही उन्होंने प्रभुका दासीत्व-पद प्राप्त किया है। प्रभुकी कृपासे उनको सर्वसिद्धि प्राप्त हुई है।

जय गौरवक्ष विलासिनी श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया देवीकी जय

सप्तम अध्याय

प्रभुका गार्हस्थ्य धर्म और लक्ष्मीप्रिया देवीका गृहिणीपन

लक्ष्मीर चरित्र देखि श्रीगौराङ्ग सुन्दर ।
मुखे किछु ना बोलेन सन्तोष अन्तर ॥
(श्रीचैतन्य भागवत)

प्रभुका गार्हस्थ्य धर्म

श्रीचैतन्य भागवतकार कलिके व्यासावतार श्रीवृन्दावन ठाकुरने लिखा है—

"गृहस्थेरे महाप्रभु शिखायेन धर्म्म ।"

हमारे प्रभु स्वयं आचरण करके सब धर्मोंकी शिक्षा प्रदान कर गये हैं। उनमें एक गार्हस्थ्य धर्म भी है। स्वयं गृहस्थ हुये बिना गार्हस्थ्य धर्मकी शिक्षा कैसे प्रदान करते ? इसी कारण श्रीगौराङ्ग सुन्दर विवाह करके माताको साथ लेकर नदियामें सर्वोत्तम गृहस्थ बने। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी साक्षात लक्ष्मी थीं। देवीकी सहायतासे हमारे प्रभुने सुन्दर गृहस्थी जमाकर सारे नदियाके लोगोंको गार्हस्थ्य धर्मकी शिक्षा दी। प्रभुका घर एक दिन भी अतिथिके बिना नहीं था। अतिथि-सेवा गृहस्थका मुख्य धर्म है, यह उन्होंने अपने कर्मके द्वारा विशेषरूपसे समझा दिया था। वे कहते थे—

गृहस्थ हइया यदि अतिथि ना करे । पशु पक्षी हैते अधम बलि तारे ॥ (चै० भा०)	गृहस्थ होकर भी यदि कोई अतिथि-सेवा नहीं करता है तो उसको पशु पक्षीसे भी अधम माना जाता है।

प्रभुने नदियावासियोंको सर्वप्रथम अतिथिसेवाके वैदिकी तत्त्वकी शिक्षा दी।

तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सुनृता ।
एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन ।।

इसका अर्थ यह है कि दरिद्रतावश अन्नदानमें असमर्थ होने पर भी अतिथिके शयनके लिए तृण, विश्रामके लिए भूमि, चरण-प्रक्षालनके लिए जल और आवाहनके लिए प्रीतिवचन, इन चार वस्तुओंकी धार्मिक गृहस्थके घर कभी कमी नहीं होती। जिसकी जैसी शक्ति होगी, वह वैसी ही अतिथि-सेवा करेगा। गृहस्थको अतिथि-सेवामें जितना आनन्द होता है, उतना आनन्द और किसी बातसे नहीं होता।

अकैतवे चित्तसुखे जार जेन शक्ति ।
ताहा करिलेइ बलि अतिथिर भक्ति ।।
(चै० भा०)

यही प्रभुका उपदेश है।

प्रभुके घरमें किसी वस्तुका अभाव नहीं है। साक्षात लक्ष्मी जिनकी गृहिणी हैं, उनको फिर अभाव क्यों होगा ? बहुत व्यय करने पर, अपरिमित दान देने पर भी प्रभुकी लक्ष्मीका भण्डार खाली नहीं होता। बड़े नगरके समान नवद्वीपमें लाखों लोग रहते हैं। किसीके घरमें चाहे कोई भी यज्ञ-प्रयोजन हो, प्रभुके घर वह भोजन-सामग्री, वस्त्र आदि नाना प्रकारके पदार्थ भेज देता है। ऐसा कोई दिन नहीं जाता, जब प्रभुके घर एक डेढ़ मन चावलका सीधा न आता हो, दस थान कपड़ा न आता हो ।

नवद्वीपे जारा जत धर्म्म-कर्म्म करे ।
भोज्य वस्त्र अवश्य पाठाय प्रभु घरे ।।
(चै० भा०)

हमारे प्रभु दान करने और व्यय करनेमें मुक्तहस्त हैं। शचीमाता भी अतिथिके आते ही सर्वस्व देकर उसको सन्तुष्ट करती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी दरिद्रको देखते ही पेटारी खोलकर अच्छा-अच्छा वस्त्र निकालकर उसे दान कर देती हैं। प्रभुमें अपार दानशक्ति है, दीन दरिद्रके ऊपर उनकी असीम दया है। इसी कारण उनका नाम दीनानाथ है।

प्रभु से परम व्ययी ईश्वर व्यभार ।
दुःखितेरे निरवधि देन पुरस्कार ।।
दुःखिते देखिले प्रभु बड़ दया करि ।
अन्न वस्त्र कपर्द्दक देन गौरहरि ।।
(चै० भा०)

अतिथि-सेवा

प्रभुका घर रातदिन अतिथि और साधु-सज्जनसे परिपूर्ण रहता है। जिसको जिस वस्तुकी आवश्यकता होती है, उसे वह वस्तु देकर तुष्ट करते हैं।

निरवधि अतिथि आइसे प्रभु घरे।
जार जेन योग्य प्रभु देन सभाकारे॥
(चै० भा०)

किसी-किसी दिन प्रभुके घर बीसों संन्यासी आकर भिक्षा करते हैं। प्रभु माताके पास समाचार भेज देते हैं। शचीमाता मन ही मन सोचती हैं कि, कैसे वह बीसों संन्यासियोंका आतिथ्य सत्कार करेंगी, घरमें इतनी सामग्री नहीं है। उसी समय न जाने कहाँसे कोई यथेष्ट खाद्यान्न प्रभुके घर पहुँचा जाता है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी बड़े आनन्दपूर्वक रसोई घरमें जाकर झटपट सब प्रकारके व्यञ्जन तैयार कर देती हैं। प्रभु देवीके पास बैठकर उनको रसकी बातोंसे प्रसन्न करके रसोई बनवाते हैं। वे स्वयं पास बैठकर संन्यासी लोगोंको परम परितोषपूर्वक भोजन कराते हैं।

कोन दिन सन्न्यासी आइसे दश बीश।
सभा निमन्त्रेण प्रभु हइला हरिष॥
सेइ क्षणे कहि पाठायेन जननीरे।
कूड़ि* सन्न्यासीर भिक्षा झाट् करिवारे॥
घरे किछु नाञि आइ चिन्ते मने मने।
कूड़ि* संन्यासीर भिक्षा हइब केमने॥
चिन्तितेइ हेन नाहि जानि कोन जने।
सकल सम्भार आनि देइ सेइ क्षणे॥
तबे लक्ष्मीदेवी गिया परम सन्तोषे।
रान्धेन विशेष तबे प्रभु आसि बंसे॥
सन्न्यासी गणेरे प्रभु आपने वसिया।
तुष्ट करि पाठायेन भिक्षा कराइया॥
(चै० भा०)

दरिद्र भिखारियोंके प्रति हमारे प्रभुकी बड़ी दया है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी उनको परम आदरपूर्वक अन्न प्रदान करती हैं। इन भिक्षु लोगोंके समान भाग्यवान जीव-जगतमें दूसरा कौन है? साक्षात लक्ष्मी-नारायणरूपी श्रीश्रीगौर-लक्ष्मी-प्रिया जिनको अपने हाथसे आदरपूर्वक अन्न प्रदान करते हैं वे निश्चय ही छद्मवेषी भिक्षुक रूपधारी देववृन्द हैं, यह बात श्रीवृन्दावन दास ठाकुर लिख गये हैं।

---

* बीस संख्या

सेइ सब भिक्षुक परम भाग्यवान।
लक्ष्मी नारायणे जाँरे करे अन्नदान।।

वे सब भिक्षुकगण बड़े भाग्यवान हैं जिनको लक्ष्मी (श्रीलक्ष्मीप्रिया) और नारायण (श्रीगौर भगवान) अन्नदान दे रहे हैं।

जाँर अन्ने ब्रह्मादिर आशा अनुक्षण।
हेन से अद्‌भुत ताहा खाय जे-ते-जन।।

जिनके अन्नकी ब्रह्मादि देवतागण प्रतिक्षण आशा करते रहते हैं उसी अद्‌भुत अन्नको ऐसे वैसे लोग खा रहे हैं।

केहो केहो इति मध्ये कहे अन्य कथा।
से अन्नेर योग्य अन्य ना हय सर्व्वथा।।

इसी बीच कोई-कोई अन्य बात कह रहे हैं इस अन्नके सर्वथा योग्य और कोई लोग कि नहीं हो सकते।

ब्रह्मा शिव शुक व्यास नारदादि करि।
सुरसिद्ध आदि जत स्वच्छन्द विहारी।।

ब्रह्मा, शिव, शुक, व्यास, नारदादि से लेकर जितने भी स्वच्छन्दविहारी देवता और सिद्ध हैं,

लक्ष्मी-नारायण अवतीर्ण नवद्वीपे।
जानि सभे आइसेन भिक्षुकेर रूपे।।

वे सभी श्रीलक्ष्मीनारायणका नवद्वीपमें अवतार हुआ जानकर भिक्षुकरूपमें नवद्वीपमें आते रहते हैं।

अन्यथा से स्थाने जाइबार शक्ति कार।
ब्रह्मा आदि बिना कि से अन्न पाय आर।।
(चै० भा०)

अन्यथा इस स्थानपर आनेकी किसमें शक्ति है, क्योंकि ब्रह्मादि देवताओंके बिना इस अन्नको और कौन प्राप्त कर सकता है ?

श्रीगौराङ्ग अवतारमें श्रीभगवानकी कृपादृष्टि दीन, दरिद्र, पतित, अधमके प्रति विशेषरूपमें थी, इस अवतारमें उनकी प्रतिज्ञा थी—

"ब्रह्मादि दुर्लभो दिव सकल जीवेरे।।"

ब्रह्मादिको भी दुर्लभ वस्तु सब जीवोंको दूँगा।

इसी कारण प्रभुके घरमें इस अन्नदानकी व्यवस्था थी। इस प्रकार कङ्गाल-भोजन करानेकी परिपाटी चली। अतएव श्रीचैतन्य भागवतकार कह गए हैं—

अतएव दुःखितेरे ईश्वर आपने।
निज गृहे अन्न देन उद्धार कारणे।।

अतएव स्वयं ईश्वर अपने घरमें दुःखितोंको उनका उद्धार करनेके लिए अन्न देते हैं।

प्रियाजीका गृह-धर्म

अब श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अकेली ही सारी रसोई बनाती हैं। वृद्धा सासको रसोई घरमें अब नहीं जाने देतीं। इससे देवीका मन बड़ा सन्तुष्ट रहता है। गृहस्थ कन्याके हाथके पके भोजनको लोगोंको खिलानेमें जो सुख है, जो आनन्द है, वैसा सुख और किसी वस्तुमें नहीं है। शचीमाता पुत्रवधूके गुणसे दिन-प्रतिदिन अधिकतर आकृष्ट हो रही हैं। प्रभु अपनी प्राणवल्लभाके अपूर्व मधुर चरितको देखकर मन ही मन बहुत सन्तुष्ट होते हैं, परन्तु खुलकर कुछ नहीं कहते।

एकेश्वर लक्ष्मी देवी करेन रन्धन।
तथापिह परम सन्तोषयुक्त मन॥
लक्ष्मीर चरित देखि शची भाग्यवती।
दण्डे दण्डे आनन्द विशेष बाड़े अति॥
लक्ष्मीर चरित्र देखि श्रीगौराङ्ग सुन्दर।
मुखे किछु ना बोलेन सन्तोष अन्तर॥

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अति बाल्यकालसे ही धर्मप्राणा हैं, परम धार्मिक और निष्ठावान पिता, तथा स्वधर्मपरायणा साध्वी माताके तत्त्वावधानमें श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी बालिका-अवस्थासे ही धर्माचरणकी शिक्षा अति उत्तम रीतिसे ही अनुष्ठित हुई थी। उसके फल-स्वरूप इस समय वे इस छोटी उम्रमें नदिया नगरीमें आदर्श गृहिणी और धर्मप्राणा रमणीके रूपमें गिनी जाती हैं। सब लोग उनकी प्रशंसा करते हैं, उनको धन्य-धन्य कहते हैं। वे बहुत तड़के उठकर पतिदेवताकी चरण धूलि लेकर गृहकार्य करना प्रारम्भ करती हैं। सब कार्य वे स्वयं करती हैं। प्रभुके घरमें दास-दासीका अभाव नहीं है, परन्तु श्रीमती अपना कार्य-भार किसीके ऊपर नहीं डालतीं। पति और सासकी सेवा ही उनका जीवन है। किसी बातकी थोड़ीसी त्रुटि होने पर वे दुःखसे मर जाती हैं। उनको इतनी आत्मग्लानि होती है कि वे बालिकाके समान रो पड़ती हैं। इस प्रकारकी चरित्र वाली रमणी कभी अपना कार्य दूसरेको देकर निश्चिन्त नहीं रह सकती। यही श्रीचैतन्यभागवतकारने लिखा है—

ऊषाकाल हइते लक्ष्मी जत गृहकर्म्म।
आपने करेन सब सेइ तान् धर्म्म॥

गृहकार्य करके देवी देवालयकी सेवा भी करती हैं; श्रीतुलसी देवीकी सेवा उनका प्रधान कार्य है। जब अवसर मिलता है देवी तुलसी तलमें जाकर बैठती हैं।

श्रीतुलसी देवीकी सेवा करती हैं। परन्तु इस तुलसी-सेवाके सिवा उनका एक और प्रियवर कर्म है। वह है सासकी सेवा। शचीमाताकी सेवासे जब वे अवसर पाती हैं, तब श्रीतुलसी देवीकी सेवा करती हैं। गृहस्थ रमणीको पति-पुत्र तथा सास-ससुरकी सेवा सर्वप्रथम करनी चाहिए। यही उनके लिए सर्वधर्मोंका सार है। यह न करने पर भगवत्सेवामें उनका अधिकार नहीं होता। श्रीगौरभगवानने अपनी गृहिणीके द्वारा नदियावासिनी कुल नारियोंके समक्ष सर्वप्रधान इस गार्हस्थ्य धर्मको समझाया है। श्रीगौराङ्ग लीलाके व्यासावतार श्रीवृन्दावनदास ठाकुर श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके चरित्र-चित्रणमें यह बात स्पष्ट रूपमें लिख गये हैं।

देवीके कार्य सुनिये—

देवगृहे करेन से स्वस्तिक मण्डली।
शङ्ख चक्र लिखेन हइया कुतूहली॥

श्रीमती लक्ष्मीप्रियादेवी देवगृहमें स्वस्तिक मण्डलकी रचना करके उसमें कौतूहलपूर्वक शंख, चक्रादि अंकित करती हैं।

गन्ध पुष्प धूप दीप सुवासित जल।
ईश्वर पूजार सज्ज करेन सकल॥

ईश्वर पूजाकी सारी सामग्री—गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और सुवासित जल—तैयार करके रखती हैं।

निरवधि तुलसीर करेन सेवन।
ततोधिक शचीर सेवाय तार मन॥

सदैव तुलसीकी पूजा सेवा करती हैं और उससे भी अधिक उनका मन रहता है शची माँकी सेवामें।

अन्तिम पंक्तिमें श्रीचैतन्यभागवतकारने गृहस्थ रमणीके गार्हस्थ्य धर्मके सूक्ष्म मर्मको समझा दिया है। श्रीगौरभगवानकी प्रेरणासे उनके लीला-लेखकने जगतमें नारी धर्मका प्रचार किया है। भारतीय नारियाँ प्रभुकी गृहिणीके पवित्र चरित्रका अनुशीलन करके स्पष्ट देख पावेंगी कि वे पति और सासकी सेवाके अतिरिक्त अन्य धर्म-कर्म नहीं करती हैं। इससे ही उनको सर्वसिद्धि प्राप्त हुई थी। शास्त्रके मतसे गृहस्थ धर्म सर्वप्रधान धर्म है। गृहस्थाश्रम सर्वश्रेष्ठ आश्रम है। पतिसेवा स्त्री जातिका एकमात्र धर्म है। अन्य धर्म-कर्म उसके बाद आते हैं। श्रीगौरभगवानकी लक्ष्मीरूपा गृहिणीने स्वयं आचरण करके कलिके जीवोंको इसकी शिक्षा दी है। प्रभु स्वयं आचरण करके कलिग्रस्त जीवोंको धर्मकी शिक्षा दे गये हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने भी प्रभुकी इच्छासे उनके पद-चिह्नोंका अनुसरण किया है। गौर-लक्ष्मी गृहस्थाश्रमके पूर्ण आदर्शको दिखलाने वाली तथा ग्रहिणीरूपमें नदियाके सब लोगोंको गार्हस्थ्य धर्मकी शिक्षा देनेके लिए भूतलमें अवतीर्ण हुई थीं।

ठाकुर नरहरिने भी लिखा है—

लक्ष्मी प्राय लक्ष्मी ठाकुरानी।
शाशुड़ीर सेवा करे दिवस रजनी।।
पति प्रति अचला भकति।
पति सेवा करे दिन राति।।

साक्षात् देवी लक्ष्मीके समान श्रीमती लक्ष्मीप्रियाजी रात-दिन अपनी सासकी सेवामें रत रहती हैं उनकी पतिके प्रति अचल भक्ति है और दिन रात पति-सेवामें रत रहतीं हैं।

ठाकुर लोचनदासने भी लिखा है—

पतिव्रता लक्ष्मी देवी पतिगताप्राण।
आनन्दे शचीर सेवा करय बिधान।।

पतिव्रता लक्ष्मीदेवीके पतिगत प्राण हैं और आनन्दपूर्वक शचीमाताकी सेवा करना उनका नियम है।

देवतार सज्ज करे गृह सम्मार्ज्जन।
धूप दीप नैवेद्यादि माल्य चन्दन।।

गृह सम्मार्जन करके देवपूजाकी सामग्री धूप, दीप, नैवेद्य, माला, चन्दन आदि तैयार करती हैं।

सब संस्करि देय देवतार घरे।
बहुर शिल्पताय शची आपना पासरे।।

और सबको सजाकर देव मन्दिरमें रखती हैं। बहूकी चतुरतासे शचीमाता आनन्दमें नहीं समातीं।

शचीमाताकी प्रसन्नता

शचीमाता पुत्रवधूके गुणसे इतना आकृष्ट हुई थीं कि वे उनको सामान्य कन्या नहीं मानती थीं। वे समझती थीं कि उनकी पुत्रवधू देवांश-सम्भूता है। श्रीपाद वल्लभाचार्य जब कन्याको देखनेके लिए आते हैं तो शचीमाता निःसङ्कोच होकर उनसे कहती हैं, "समधीजी! आपकी कन्यामें कमलाका अधिष्ठान है। जिस दिनसे बहू मेरे घरमें आयी है, उसी दिनसे मेरा घर लक्ष्मीका भण्डार हो गया है।" आचार्य प्रभु यह सुनकर कान पर हाथ रख कर कहते, "समधिनजी! आपके, और आपके पुत्रके गुणसे मेरी कन्याका इतना सुयश हो रहा है विश्वम्भर दीर्घजीवी होकर मेरी कन्याके साथ सुखसे गृहस्थी चलावें। इसकी अपेक्षा हमारे लिए और क्या सुख है?

शचीमाताके मनमें जो सन्देह होता है कि उनकी पुत्रवधू दवांश-सम्भूता है, उसमें एक कारण भी है। वे कभी-कभी देखती हैं कि जब उनकी पुत्रवधू निमाई-चाँदके पास बैठी रहती हैं, पुत्रके पदतलमें मानो महाज्योतिर्मय अग्निपुञ्जके समान कोई वस्तु सी दीखती है। कभी-कभी घरमें उनको पद्मगन्धके समान गन्ध प्राप्त होती है। यह सब अलौकिक चिह्न देखकर शचीमाताके मनमें सन्देह है कि उनकी पुत्रवधूके भीतर कोई दैवी शक्ति है। परन्तु यह बात वे किसीसे बोलती नहीं हैं—

कोन दिन सेइ लक्ष्मी प्रभुर चरण।
बसिया थाकेन पदमूले अनुक्षण ॥
अद्भूत देखेन शची पुत्र पदतले।
महाजोतिर्म्मय अग्निपुञ्ज शिखाज्वले ॥
कोन दिन महा पद्मगन्ध शची आइ।
घरे द्वारे सर्व्वत्र पायेन अन्त नाइ ॥
(चै० भा०)

इस प्रकार गौर-लक्ष्मी नदिया धाममें प्रच्छन्न लीला कर रहे हैं, कोई उनको पहचान नहीं पाता।

हेनमते लक्ष्मीनारायण नवद्वीपे।
केहो नाहिं चिनेन आछेन गूढ़रूपे ॥
(चै० भा०)

प्रच्छन्न अवतारकी प्रच्छन्न लीला समझनेकी शक्ति हर किसी मनुष्यमें नहीं होती। वे जिसको अपनी लीला समझने और समझाने शक्ति प्रदान करते हैं, वही इसे जान सकता है।

'के जाने जानिते पारे यदि ना जानाय।"

श्रीगौरभगवान अब विद्यारसमें तल्लीन रहते हैं और पक्के गृहस्थ हैं। नदियाके ब्राह्मण बालककी गृहस्थी देखकर बड़े-बड़े वंशपरम्परागत धनी गृहस्थ अवाक् हो रहे हैं। श्रीपाद वल्लभाचार्यकी चतुर्दश वर्षीया बालिका कन्याके गृहिणी-पनको देखकर नवद्वीपकी बड़ी-बड़ी पक्की गृहिणी नारियोंको विस्मय हो रहा है। यहाँ तक कि श्री अद्वैत-गृहिणी सीता देवी और श्रीवास पण्डितकी गृहिणी मालिनी देवी तक गौर-लक्ष्मीकी गृहस्थी देखकर विस्मित हो उठी हैं। शचीमाता वृद्धा हो गयी हैं। ऐसी पक्की गृहिणी सारी नदियामें दूसरी नहीं है। जिसके घर जो कार्य होता है, सबसे पहले लोग शचीमाताके घर आकर परामर्श कर जाते हैं। वे इस समय सारे कार्य पुत्रवधूको सौंप कर निश्चिन्त हो गयी हैं। यदि कोई गृहस्थीके सम्बन्धमें कोई बात पूछता है, तो वे कहतीं हैं, "बहूसे जाकर पूछो, वे सब बात जानती हैं।" शचीमाताको विश्वास है कि उनकी पुत्रवधू गृहस्थीके सम्बन्धमें उनसे अधिक ज्ञान रखती हैं। वस्तुतः शचीमाताका अनुभव भ्रान्तिपूर्ण नहीं है। क्योंकि बहुधा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी जटिल सांसारिक विषयोंकी सुन्दर मीमांसा कर देती हैं। यह देखकर शचीमाता पुत्रवधूके ऊपर सब भार देकर निश्चिन्त हो गयी हैं।

शचीनन्दन नदियावासी सब लोगोंके सम्मानके पात्र बन गये हैं। निमाई पण्डितकी पाडित्य-प्रतिभा विद्वानमण्डलीको विशेषरूपसे परिज्ञात हो गयी है। उनका यश-सौरभ सारी नदियामें फैल गया है। नदियाकी प्रत्येक पाठशालामें सब लोग

कहते हैं कि अध्यापक-शिरोमणि निमाई पण्डितके समान सर्वविद्याविशारद पण्डित अब तक नवद्वीपमें नहीं जन्मा है। इसी समय उन्होंने दिग्विजयी पण्डितको पराजित किया था।

सर्व्व नवद्वीपे सर्व्वलोके हैल ध्वनि।
निमाइ पण्डित अध्यापक-शिरोमणि॥
(चै० भा०)

नवद्वीपके बड़े बड़े सम्भ्रान्त लोग नदियाके मार्गमें निमाई पण्डितको देखकर पालकीसे उतर कर नमस्कार करते हैं। नवद्वीपमें ऐसा कोई नहीं है, जो प्रभुके वशीभूत न हो। जैसी अपरूप रूपराशि है, वैसा ही सरल स्वभाव है। प्रभुके श्रीमुख वचनोंसे मानो अमृतकी वर्षा होती है। उनके रूप और गुणसे नदिया वासी नर-नारी मुग्ध हैं।

बड़ बड़ विषयी सकल दोला हइते।
नामिया करेन नमस्कार बहुमते॥
प्रभु देखिवा मात्र जन्मे सभार साध्वस।
नवद्वीपे हेन नाहि, जे ना हय वश॥
(चै० भा०)

इधर जैसे प्रभु विद्यारसमें मत्त हैं उसी प्रकार उधर संसार-रसमें भी उन्मत्त हो रहे हैं। घरमें नव-युवती सुन्दरी सर्वगुणान्विता भार्या, दयामयी स्नेहवती जननी, स्वच्छन्द और स्वच्छल गृहस्थी, सदा आनन्दप्रिय वयस्यगण, देशके समस्त लोगोंमें अत्यन्त सम्मान—गार्हस्थ्य सुखकी पूर्ण परितृप्ति प्राप्तकर हमारे प्रभु बड़े ही आनन्दमें हैं। प्रभुके सोनेके संसारमें किसी वस्तुका अभाव नहीं है। शचीमाताकी चिरजीवनकी साध मिट गयी है, श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी आनन्दित मनसे गृहस्थी चला रही हैं। उनके माता-पिता को भी बड़ा आनन्द है। आनन्द धाम नदियामें आनन्दमय शचीनन्दन आनन्दमयी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ युगल-विलासमें रसिक भक्तवृन्दका मनोरञ्जन कर रहे हैं। श्रीगौर भगवानकी गृहस्थ लीला बड़ी मधुमय है। गृहस्थ लोगोंके लिये यह मधुरसे मधुर है। कृपालु पाठक वृन्द इस लीला मधुका पान करके प्राणोंको परितृप्त करें। मैं गौर-लक्ष्मी-विलास-लीलारस-समुद्रके एक विन्दुका भी स्पर्श न कर सका। मेरे जैसे अकृती अधम लेखकका इस दुःसाहसके कार्यमें प्रवृत्त होना ही धृष्टता है। कृपालु पाठक वृन्द इसे सूत्ररूपमें समझ कर पाठ करके कृतार्थ होंगे। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि—

आत्म शोधिवार तरे दुःसाहस कैनु।
लीला-सिन्धुर एक विन्दु छुंइते नारिनु॥
(अ० प्र०)

आत्म शोधनके लिये ही मैंने यह दुःसाहसका काम किया। लीला सिन्धुका एक बिन्दु भी स्पर्श नहीं कर पाया।

अष्टम अध्याय

प्रभुकी वङ्गदेश-यात्रा और श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका विरहोद्दीपन

●

एक दिन मने मने कैल आचम्बित।
पूर्व्वदेशे जाब आमि सर्व्व जनहित ।।

पाण्डव वर्ज्जित देश सर्व्वलोके गाय।
गङ्गा हइया गङ्गा नहे एइ साक्षी ताय ।।

आमार प्रसादे पद्मावती हइब धन्य।
सर्व्वलोक आमा बहि ना जानिबे अन्य ।।
(चै० मं०)

एक दिन मन ही मनमें अचानक विचार किया कि सर्वजनके हित मैं पूर्व देश जाऊँगा।

सब लोग उसको पाण्डव-वर्जित देश कहते हैं। गङ्गा होकर भी वहाँ गङ्गा नहीं—यही इसका साक्षी है।

मेरी कृपासे पद्मावती धन्य होगी। सब लोग मेरे सिवाय अन्य किसीको नहीं जानेंगे।

पूर्वबङ्गालकी यात्राका आयोजन

प्रभु एक दिन स्वजन-गणसे परिवेष्टित होकर अपने गृहमें बैठे हैं। आनन्द कौतुक और आमोद-प्रमोदके रसमें सबको तुष्ट कर रहे हैं। इसी समय उनके मनमें उपयुक्त कविताका भाव उदय हुआ। नदियाके अवतार केवल नदियावासियोंका उद्धार करनेके लिए नदियामें अवतीर्ण नहीं हुए। पाण्डव-वर्जित पूर्वबङ्ग देशके लोग प्रभुके अत्यन्त कृपापात्र थे। प्रभुके प्रधान-प्रधान पार्षदगणमें बहुतोंका निवास पूर्वबङ्गमें था। प्रभुके पूर्वजोंका आदि निवास भी इस पाण्डव वर्जित पूर्वबङ्गके श्रीहट्ट जिलेमें था। उनकी पितामही शोभा देवी, पितामह श्रीपाद उपेन्द्रमिश्र श्रीहट्ट जिलेके ढाका दक्षिण गाँवमें उस समय भी वर्तमान थे। वे अत्यन्त वृद्ध हो गये थे। नवद्वीप बहुत दूर था। वे इस वृद्धावस्थामें यहाँ आ नहीं सकते थे।

शचीमाताके श्रीगर्भसे जिस समय श्रीगौर भगवानका आविर्भाव हुआ, उस समय उन्होंने अपनी साससे वादा किया था कि पुत्र होने पर उनको दिखलानेके लिए जायेंगी, परन्तु शचीमातासे यह काम हो न सका। यथार्थ यह है कि प्रभुकी यह इच्छा न थी। अब दो कारणोंसे प्रभुके मनमें पूर्ववङ्गकी यात्राका भाव उदय हुआ। प्रथम पाण्डव वर्जित देशके जीवोंका उद्धार, दूसरा वृद्ध पितामह और पितामहीको दर्शन दान। इसके साथ ही एक और इच्छा थी, पूर्वजोंके आदि जन्म-स्थानका दर्शन करना। इनमें मूल कारण जीवोद्धार करना था। ये सारी बातें तो प्रभु किसीको कह नहीं सकते थे। वे कलिके प्रच्छन्न अवतार जो थे। उनकी सारी लीलाएँ गुप्त थीं। वे चतुर चूड़ामणि, शठ-शिरोमणि थे। उन्होंने एक बहाना ढूंढ़ लिया। वे गृहस्थ थे, गृहस्थीमें धनकी आवश्यकता होती है। धनोपार्जन गृहस्थका प्रधान कर्म है। प्रभु गृहस्थ ब्राह्मण थे। अतएव उनको गृहस्थधर्मके लिए धनोपार्जन करना आवश्यक था। उन्होंने गृहस्थ धर्मके सब कर्मोंका अनुष्ठान किया था। इस कार्यको कैसे छोड़ते? अतएव उन्होंने सर्व प्रथम अपने मनके भावको अपने आत्मीय स्वजन तथा वयस्य-गणके सामने प्रकट किया। इस समय प्रभुके घर ये सब उपस्थित थे। प्रभुने गदाधर पण्डितकी ओर देखकर हँसते हुए कहा, 'अरे मैं विवाह करके सांसारिक बन्धनमें बँध गया हूँ। धनोपार्जन किये बिना गृहस्थी नहीं चलेगी। बाल्यकालमें पितृ-वियोग होगया। गृहस्थीका सारा भार मेरे सिर पर है। मैं मायाजालमें फँसकर गृहस्थीमें लग गया हूँ। अतएव मुझे विदेश जाना ही पड़ेगा। मैं धनोपार्जनके लिए पूर्ववङ्ग देश जाऊँगा।" जैसे ठाकुर जयानन्द श्रीचैतन्य मङ्गल में लिखते हैं।

एक दिन गौरचन्द्र मन्दिरे बसिया।
गदाधर पण्डितेरे कहिल हासिया॥

× × × ×

हासिया हासिया गौराङ्ग सभारे कहिल।
लक्ष्मी बिभा करि आमि संसारे पड़िल॥
इष्ट मित्र कुटुम्ब रमणी दास दासी।
रक्षण पोषण करि इहा भाल वासी॥
अर्थ उपार्जन बिनु संसार ना चले।
वङ्गदेशे जाब आमि अर्थेर छले॥
अर्थ विना संसार कभू नाहि चले।
अर्थविद्या अर्थरूप सर्वलोके बले॥
बाप आमार बैकुण्ठ चलिला जेइ काले।
सेइ हइते प्रवेश करिल माया जाले॥

प्रभुके सब निजजन प्रभुके पास हैं। इनमें श्रीअद्वैतप्रभु और ठाकुर हरिदास भी हैं। प्रभुका सङ्कल्प सुनकर उनके मनमें भावी विरह उद्दीप्त हो उठा। सबने दुःखित अन्तःकरणसे प्रभुकी बातें सुनी। इनमें वनमाली आचार्य भी हैं। प्रभु नवद्वीप छोड़कर विदेश जायेंगें, यह सुनकर वनमाली आचार्य सबके सामने उच्च स्वरसे क्रन्दन करने लगे। सबकी दृष्टि उनके ऊपर पड़ी। प्रभु हँसते-हँसते बोले—"पण्डित ! तुम रोते क्यों हो ? मैं तुमको साथ ले जाऊँगा।" यह सुनकर वनमाली आचार्यकी जानमें जान आयी। यह सुनकर दूसरे सब लोग बोल उठे, हम भी जायेंगे।" प्रभुने हँसकर उत्तर दिया, "वनमाली आचार्यके समान आप लोग भी पागल हो गये क्या ? सबके चले जाने पर हमारे घरके परिवारके लोगोंकी देख-रेख कौन करेगा ?" अब किसीको कुछ बोलनेका साहस न हुआ। निमाई पण्डितकी बातका सहज ही कोई उत्तर देनेका साहस नहीं करता था।

प्रभु जो कहते हैं, वहीं करते हैं। प्रभुके निज जन और वयस्यगणने समझा कि निमाई पण्डित शीघ्र ही वङ्गदेशकी यात्रा करेंगे। अपने साथ किस किसको ले जायेंगे, इसी विचारसे वे कातर हो उठें। प्रभुने इस सम्बन्धमें और किसीसे कुछ न कहा। केवल वनमाली आचार्यको प्रभुने कृपा करके आश्वासन दिया। यह सुनकर वे आपसमें एक दूसरेको उकसाते हुए गुपचुप बोलने लगे, "वे विवाहके घटक जो हैं इसीसे प्रभुकी इतनी उन पर कृपा है।" सर्वज्ञ और सतर्क प्रभुके कानोंमें उनकी बात पहुंच गयी, वे कुछ मुस्कराते हुए बोले, "आप लोगोंकी ईर्ष्या प्रवृत्ति कुछ बलवती देख रहा हूँ। प्रभुकी बातसे सबके सिर झुक गये।"

अब अपराह्ण काल हो गया। प्रभु गङ्गा-दर्शनके लिए चले। सभी निजजन साथ हैं। प्रभु फिर घरके भीतर नहीं गये। बाहरी बैठकसे ही रास्ते पर बाहर निकले।

माता एवं पत्नीको सूचना और उनकी हालत

ईशान प्रभुका पुराना नौकर था। प्रभुने चण्डी-मण्डपमें बैठकर जो परामर्श किया, ईशानने उसे सुनकर घरमें जाकर शचीमातासे कहा। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने भी इसे सुना। प्रभु पूर्ववङ्ग देशमें जायेंगें, यह सुनकर सास और बहू दोनों ही विषण्ण और दुःखित हो उठीं। शचीमाताने पुत्रवधूके मुंहको देखकर ही समझ लिया कि पुत्रके प्रवास-गमनके संवादको सुनकर उनके मनमें बड़ा दुःख हुआ है। यह समझकर उन्होंने अपने दुःखको दबाकर पुत्रवधूसे कहा, "बहू ! ये सब कामकी बातें नहीं हैं। मेरे निमाईको अभाव किस बातका है ? जो वह विदेशमें धन उपार्जनके लिए जायेगा।" श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने कोई उत्तर नहीं दिया। वे अन्यमनस्क होकर गृहकार्यमें लग गयीं।

वे गृह मार्जन करके गृहके द्वार पर सन्ध्याकालमें जल सिञ्चन करती थीं, उनके हाथसे छूटकर जलपात्र पैरके ऊपर जा गिरा। पैरमें कुछ चोट लगी। शचीमाताने यह देखकर दौड़कर आकर स्नेहपूर्वक पुत्रवधूसे पूछा—"बहू ! तुम्हारे पैरमें चोट लग गयी ?" श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने सम्मानपूर्वक उत्तर दिया—"माँ ! हाथसे छूटकर लोटा गिर गया।" शचीमाता बड़ी चतुर हैं। पुत्रवधूके मनका भाव समझना बाकी न रहा, उन्होंने मन ही मन सोचा, "यदि निमाई क्षण भर भी आँखसे ओझल हो जाय तो मेरी बहूको चारों ओर अन्धकार दीखने लगता है। अहा ! पतिके विदेश जानेकी बात सुनकर मेरी बच्ची बहुत अन्यमनस्क हो रही है।" सन्ध्या हो गयी है, श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सब घरोंमें दीपक दिखला रही हैं। एक घरसे दूसरे घरमें जाते समय घरकी द्वारके चौखठसे पुनः एक बार ठोकर लगी। वे सँभल गयीं। शचीमाता दूसरे घरमें थीं, इसबार कुछ भी जान न सकीं।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी मन ही मन सोचने लगीं, "लोगोंका पति तो विदेश जाता है। पुरुषको घरमें बैठे रहनेसे क्या चल सकता है ? मेरा यह मुँहजला मन इतना चञ्चल क्यों हुआ ?" यह सोचते-सोचते वे गलेमें वस्त्र डालकर देवगृहके द्वार पर प्रणाम करके कहने लगीं, "भगवान ! मेरे मनको शुद्ध कर दो। मैं बड़ी अभागिनी हूँ। ऐसा सर्वगुणसम्पन्न पति पाकर मैं उनकी मनचाही सेवा नहीं कर पाती, क्या इसी कारण वे इस दुःखिनी दासीको छोड़कर विदेश जा रहे हैं ? उनकी पद-सेवासे वञ्चित होकर यह अभागिनी कैसे घरमें रहेगी ? किसको लेकर मैं गृहस्थी चलाऊँगी? मनुष्य क्यों विदेश जाता है। मैं तो उनसे कभी कुछ माँगती नहीं। धनकी मुझे क्या आवश्यकता है ? मैंने जो पतिरूप धन पाया है, उनके साथ अन्य किसी धनकी तुलना नहीं हो सकती ! भगवान ! मैं कुछ भी नहीं चाहती, चाहती हूँ केवल अपने प्राण वल्लभकी चरण-सेवा। इससे मुझे वञ्चित न करो। भगवान ! तुम्हारे चरणोंमें यही मेरी एक प्रार्थना है।" इतना कहकर उन्होंने ठाकुरजीके द्वार पर कितनी बार सिर पटका, इसे कोई देख न सका। शचीमाता गङ्गाके घाट पर गयीं थीं। प्रभु घर पर नहीं थे। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी गलेमें वस्त्र डालकर ठाकुरजीके घरके द्वार पर बैठी हैं। उनके कर-कमलमें हरिनामकी जपमाला है। प्रभुने स्वयं उनको हरिनाम महामन्त्र प्रदान किया है।

शचीमाताने गङ्गाके घाटसे घर आकर देखा कि बहू उदास भावसे बैठी हुई है। वे झटपट पुत्रवधूके पास जाकर जपमाला लेकर बैठ गयीं। शचीमाता दाहिने हाथसे माला जप कर रही हैं और अपने बाँये हाथसे स्नेहपूर्वक पुत्रवधूकी पीठ सहला रही हैं। किसीके मुँहसे कोई बात नहीं निकल रही हैं। चुपचाप दोनों अपना कार्य कर रही हैं। शचीमाताने पुत्रवधूके मनके भाव समझ कर उनको प्रेमपूर्वक खींचकर

अपनी गोदमें ले लिया। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अपने दैनिक सन्ध्याकालीन जपको समाप्त करके वहाँसे उठ गयीं। शचीमाता वहाँ बैठी रहीं।

श्रीमती और उनकी सखी

उसी समय श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी प्रियसखी चित्रलेखा प्रभुके घर आयीं। श्रीमतीजीने अपनी प्रियसखीको देखा और उसका हाथ पकड़कर घरके भीतर ले गयीं। शचीमाताने सोचा, "अच्छा हुआ, बहूका मन आज अच्छा नहीं है। चित्रलेखा उसकी प्रिय सङ्गिनी है, उसको पाकर मनकी बात कहकर कुछ सुस्थिर होगी।"

रात दो घड़ी कुल बीती है। प्रभुके घर आनेका अभी समय नहीं हुआ है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी और उनकी सखी चित्रलेखा गृहके कोनेमें बैठकर धीरे-धीरे क्या बातें कर रही हैं, यह सुननेके लिए कृपालु पाठकवृन्दके मनमें अवश्य ही कौतूहल पैदा हुआ होगा। पतिप्राणा रमणीके लिए पतिके सिवा और क्या बात हो सकती है? पति-देवताकी ही बात देवी प्रियसखीसे कह रही थीं। प्रिय पाठकवृन्द इसे श्रवण करके अपने कानोंको पवित्र करें।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके म्लान मुखको देखते ही उनकी चित्रलेखा सखी समझ गयी कि इसका कारण श्रीगौराङ्गका विरह ही है; क्योंकि वह जानती थीं कि अन्य किसी कारणसे उनकी पतिगत-प्राणा सखीका मन विचलित नहीं होता, मुख मलिन नहीं होता। चित्रलेखाने श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीसे कहा, "सखि! आज तुम्हारा मुँह उदास देख रही हूँ, क्यों? तुमको तो मैंने ऐसा उदास कभी नहीं देखा। आज अकस्मात तुम्हारा ऐसा भाव क्यों हुआ?"

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अपनी प्रियसखीके गले लिपट कर रोने लगीं। वे मुँहसे कुछ कहकर उत्तर न दे सकीं। पतिका भावी विरह-दुःख उनके मनमें अकस्मात उदय होनेके कारण वे एक बारगी विह्वल हो उठीं। चित्रलेखा अत्यन्त ही चतुर हैं। वे श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी अपेक्षा उम्रमें कुछ बड़ी हैं। प्रभु विदेश जायेंगे, यह बात उन्होंने अब तक किसीके मुँहसे नहीं सुनी। प्रियसखीके दुःखके मर्मको न समझ कर वे बोलीं, "सखि! तुम्हारे पण्डित महाराजने तुमको कुछ कहा है क्या?" चित्रलेखा प्रभुको पण्डित महाराज कहा करती थीं। श्रीमतीलक्ष्मीप्रिया देवीने रोते-रोते उत्तर दिया, "सखि! मैंने ऐसे वरके गलेमें जयमाला नहीं डाली है जो वे अकारण मुझे कुछ कहेंगे। मुझे बहुत भाग्यसे पतिधन प्राप्त हुआ है। जन्म-जन्मातरके उपार्जित पुण्य और तपस्याके बलसे जो पति-पद-सेवाका अवसर मिला है जान पड़ता है अदृष्टके कारण मैं उससे वञ्चित हो जाऊँगी। तुम्हारे पण्डित महाराज धनोपार्जनके लिए परदेश जा रहे हैं।" चित्रलेखा देवीने अब समझा कि उनकी सखी किस व्याधिसे ग्रस्त है। वैद्यराज न होने पर भी इस व्याधिकी चिकित्सा उनको कुछ-कुछ

ज्ञात है । चित्रलेखाने हँसकर सखीके दोनों हाथ पकड़कर कहा, "सखि ! इस सामान्य बातको लेकर तुम इतनी चिन्ता करती हो ? पण्डित महाराजको मैं विदेश न जाने दूँगी । मेरे पिताके पास बहुत धन है । उन्होंने कहा है कि पण्डित महाराजको सब दे दूंगा । तुच्छ धनके लिए उन्हें कष्ट उठा कर विदेश नहीं जाना पड़ेगा । तुम रोओ मत ।" चित्रलेखा नवद्वीपवासी एक धनी ब्राह्मणकी कन्या है ।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी बालिका होते हुए भी बड़ी दूरदर्शी हैं । पति जगन्मान्य पण्डित हैं । वे धन और यश उपार्जन करनेके लिए विदेश जायेंगे, । उनकी महत्त्वाकांक्षा है कि वे भली-भाँति गृहस्थी चलावेंगे, दूसरेका धन वे क्यों लेंगें ? इस बात को वे भूलने वाली नहीं हैं । उन्होंने उत्तर दिया, "सखि ! पुरुष लोग धनोपार्जनके लिए जो विदेश जाते हैं—स्त्री-परिवारके सुखके निमित्त । मेरी तो सुखकी सीमा नहीं है । बहुत युग-युगान्तरकी तपस्याके बलसे, पूर्वपुरुषोंके अर्जित पुण्यके बलसे मेरे समान अभागिनी नारीको जो पतिधन प्राप्त हुआ है, उसकी तुलनामें अन्य सब धन-सम्पत्ति तुच्छ है । तुम्हारे पण्डित महाराजके समान पति पाकर मुझे सब धन मिल गया है । अब दिन-रात उनकी चरण-सेवा कर पानेसे ही मेरे सुखकी चरम सीमा प्राप्त होगी । उसी सुखसे यदि मैं वञ्चित होती हूँ, तो सखि ! मैं जीवित न रहूँगी ।"

चित्रलेखा सखीकी अन्तिम बात सुनकर चौंक पड़ी । यह बात उसको अच्छी न लगी । वह कातर भावसे पुन: सखीसे बोली, "सखि ! यह बात मुँह पर मत लाओ । तुम किस दु:खसे प्राण त्यागना चाहती हो ? क्या कहीं किसीका पति विदेश नहीं जाता ? दो दिनके बाद फिर घर आ जायेंगे । उनके लिए इतनी चिन्ता क्या है ?"

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी कातर होकर प्रिय सखीके वक्ष:स्थलमें चन्द्रमुखको छिपाकर पुन: रोनेके स्वरमें बोलीं—"सखी ! मेरे प्राणवल्लभके साथ दूसरेकी तुलना मत करो । उनकी उपमा एकमात्र वे ही हैं । सखी ! तुम कहती हो कि दो दिन के बाद वे आ जाएँगे । पूर्ववङ्ग देश बहुत दूर है । आने जानेमें छ: महीनेसे कम न लगेगा । इतने दीर्घकाल तक मैं उनकी पदसेवासे वञ्चित रहूँगी । यदि एक दण्ड भी उनके श्रीचरणोंका दर्शन नहीं पाती हूँ तो ऐसा लगता है, मानो मेरे प्राण अब बाहर निकल जाएँगे । कैसे मैं अपने प्राणवल्लभके इस दीर्घ अदर्शन जनित विरहको सहन करके प्राणोंकी रक्षा करूँगी—यह मेरी समझमें नहीं आता । क्षणमात्रभी जिनके मुखचन्द्रको बिना देखे, जिनकी बचन सुधाका पान बिना किये, मुझे एक पल प्रलय समान जान पड़ता है, उनके अदर्शन-जनित इस सुदीर्घ विरह ज्वालाको मैं सहन न कर सकूँगी । इसी कारण तुमसे कह रही हूँ कि मेरे प्राण नहीं बचेंगे ।

चित्रलेखाने देखा कि विरहकी बातें करते-करते सखीके भावी-विरहकी ज्वाला क्रमशः बढ़ती जा रही है। इसके प्रशमनका उपाय न देखकर उन्होंने दूसरा प्रसङ्ग छेड़ दिया। वे बोलीं, "सखी ! पण्डित महाराजके घरपर आनेका समय हो गया है। तुमने ठाकुरजीकी आरतीका सब प्रबन्ध कर रक्खा है न ?" श्रीमती लक्ष्मी-प्रिया देवीको तब होश आया। वे झट-पट वहाँसे उठकर देवमन्दिरकी ओर चलीं। और वहाँ देखा कि सास द्वारपर बैठीं अभी माला-जप कर रहीं हैं। बहूको देखकर उन्होंने भी इशारेसे ठाकुरजीकी आरतीका समान प्रस्तुत करनेके लिए कहा। क्योंकि, निमाई-चाँदके घर आनेका समय हो गया था। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने झटपट सब जोगाड़ कर दिया।

प्रभुका गृहागमन और मातासे वार्तालाप

गङ्गातीरसे सन्ध्योपरान्त नियम पूर्वक घर आकर सन्ध्या-वन्दन आदि नित्यकर्मसे निवृत्त होकर प्रभु ठाकुरजीकी आरती-भोगादिमें जुट गये। प्रभुके सखावृन्दमें गदाधर पण्डित आदि कोई-कोई प्रभुके साथ आये हैं। शचीमाताने पुत्रके साथ उनको प्रसाद दिया। प्रभु उस दिन फिर घरसे बाहर नहीं गये। अन्य दिन वे रातमें एकबार और घरसे बाहर निकला करते थे। रातमें भोजनके समय घर लौटते थे। उस दिन प्रभुका नियम भङ्ग होगया।

सर्वज्ञ श्रीगौरभगवानने भक्तके मनके दुःखको जान लिया है। वे अन्त-र्यामी हैं। जाननेमें उनको कुछ बाकी नहीं रह गया है। उस दिन प्रिय सखा गदाधरको भी प्रभुने विदाकर दिया। वे देवगृहके द्वार पर माताके पास बैठ गये। शचीमाताको मानो आकाशका चाँद हाथमें आगया। उन्होंने जपमालाको सिरसे लगा लिया। निमाईचाँदके मुखचन्द्रको हृदयमें धारण कर उनके मस्तकको सूँघकर उन्हें जो आनन्द प्राप्त हुआ, वह लाख माला जप करने पर भी उस प्रेमानन्दके कोटि अंशका एक अंशभी प्राप्त नहीं होता। उस आनन्दके सामने ब्रह्मानन्द तुच्छ पदार्थ जान पड़ता है। शचीमाता आनन्दसे विह्वल होकर पुत्रके प्रवास गमनकी बात भूल गयीं। उनके मुँहसे कोई बात निकलनेके पहले ही श्री गौराङ्ग सुन्दरने जननीको सम्बोधन करके कहा "माँ ! मुझे कुछ दिन परदेश जानेकी इच्छा हो रही है। मैं गृहस्थ हूँ, सदा रुपये पैसे की आवश्यकता होती है। मेरी इच्छा है कि मैं अच्छी तरह गृहस्थी चलाऊँ। बिना धनोपार्जन किये वह कैसे होगा ? तुम्हारी बहू तुम्हारे पास रहकर तुम्हारी सेवा करेगी। किसीको कोई दुःख न होने पावे। भिक्षुक, दरिद्र, वैष्णव हमारे घरसे अन्न-जल पाते रहें। ठाकुरजीके कीर्त्तन-महोत्सवमें श्रीवृन्दा देवीकी यथाविधि पूजा होती रहे। श्रीवास पण्डित आदि मेरे परम आत्मीय स्वजन तुम लोगोंके तत्वावधानमें रहेंगे। मैं शीघ्र जाऊँगा और अधिक दिन विदेशमें नहीं रहूँगा।"

ठाकुर पण्डित तुमि थाक नवद्वीपे।
मा! समर्पिलुं लक्ष्मी तोमार समीपे।।
दास दासी सभाकार दुःख जेन नहे।
भालमन्द कथा पाछे केहो नाहि कहे।।
अन्न जल दिह माता वैष्णव सकले।
वृन्दा पूजा करिह कीर्तन महोत्सवे।।
(ज० चै० मं०)

पुत्रकी बात सुनकर शचीमाताके सिर पर मानो वज्रपात हो गया। उनका सारा आनन्द क्षण भरमें निरानन्दमें परिणत हो गया। वे निराश होकर पुत्रके मुखचन्द्रकी ओर एक टक देखने लगीं। वे अब वृद्धा हो गयी हैं। उनके पुत्रने कभी एक दिनके लिए भी घर नहीं छोड़ा। एक पलके लिये भी उनको पुत्र-विरह दुःख कभी सहना नहीं पड़ा। निमाई उनका घर-बोला पुत्र है, कभी घरसे बाहर हुआ नहीं। वह परदेश जायेगा, और वह भी बहुत दूरदेश। कौन उसे खिलायेगा ? कौन देख भाल करेगा ? शचीमाताके मनमें ये सारी चिन्ता एकके बाद एक आकर उनके चित्तको व्याकुल करने लगीं। इस वृद्धअवस्थामें निमाईचाँदके चन्द्रमुखको बिना देखे उनसे कैसे रहा जायेगा ? यह सोचकर वे दुःखसे विह्वल हो उठीं। शचीमाता जानती थीं कि निमाई जो कहता है वही करता है। अतएव उसको समझाने बुझानेसे कुछ लाभ न होगा। तथापि माताके हृदयमें चैन नहीं है, अतएव बहुत कष्टसे प्रकृतिस्थ होकर रोते-रोते उन्होंने पुत्रसे कहा—

धन-उपार्ज्जने परदेश जाबे तुमि।
तोमारे ना देखि एथा मरिजाब आमि।।

धन उपार्जन करनेके लिए तुम परदेश जाओगे। तुम्हें न देखकर मैं तो यहाँ मर जाऊँगी।

जल बिनु जेन मीन ना धरे पराण।
तोमा बिनु आमार तेमन समाधान।।

जिस तरह जलके बिना मछली जीवित नहीं रहती। तुम्हारे बिना मेरा वही हाल होगा।

तोमार पिरीति मने भाबिया भाबिया।
मरि जाब ओहे बाप तोमा ना देखिया।।
(चै० मं०)

हे तात ! तुम्हारी प्रीतिको मनमें याद कर करके तुम्हें न देख पाकर मैं मर जाऊँगी।

प्रभु माताके आर्त्त वचनको सुनकर मनमें दुःखित हुए। किन्तु मुखसे उसे प्रकट नहीं किया। मेरे प्रभु अधिक बातें करने वाले व्यक्ति नहीं हैं, अपने सङ्कल्पित कर्मको सिद्ध करनेके समय उनका कुसुम-कोमल हृदय वज्रके समान कठिन हो जाता है। उन्होंने मातासे कहा, "माँ ! तुम मेरे लिए अधिक चिन्ता न करो। मैं शीघ्र ही

तुम्हारे पास लौट आऊंगा। माँ ! तुमको छोड़कर मैं विदेशमें अधिक दिन रह नहीं सकता। तुम रोना मत।"

आमार विच्छेदे बड़ ना भाविह तुमि।
निकटे तोमार ठाञि आसिव से आमि।।
(चै० मं०)

शचीमाता पुत्रको गोदमें लेकर बैठी हैं। उन्होंने उनके मुख पर बार-बार चुम्बन देकर-रोते रोते कहा—"बेटा निमाई। तुझको देखे बिना मैं क्षणभर भी नहीं रह सकती। अबोध कन्या मेरी बहू प्राण त्याग देगी।"

माताकी बातसे प्रभुका दृढ़ सङ्कल्प और अटल मन चलायमान नहीं हुआ। माँ जो कुछ कहती हैं, प्रभु उसे एक बातमें उड़ा देते हैं। वह बात यह है—"मैं तो स्त्री नहीं हूँ जो घरमें बैठा रहूँगा।" प्रभु मातासे यही बात कहते हैं और मन्द-मन्द मुस्काते हैं, और उनकी कोई बात सुनना नहीं चाहते।

माये जत बैले किछु ना शुनिल पँहू।
केवल हासे लहु लहु ।।

अब प्रभुने माताको भुलावेमें डालनेका एक जाल रचा। वे माँका गला जकड़ कर बालकके समान दुलारसे कहने लगे—"माँ! मुझे बड़ी भूख लगी है। रसोई हो गयी क्या ?" शचीमाताने, पुत्रको भूख लगी है, यह सुनकर सारे दुःख भूलकर उत्कण्ठित चित्तसे रसोई घरकी ओर देखा। देखा कि रसोई घरमें प्रकाश नहीं है। किसीका कुछ पता-सुराग न पाकर वे वहाँसे उठनेकी चेष्टा करने लगीं।उसी समय श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने झटपट रसोई घरमें प्रवेश किया। वे पासके घरके द्वारपर खड़ी होकर यह सब बातें सुन रही थीं, यह शचीमाताको मालूम न था। उस ओर उनकी दृष्टि न थी। अब समझीं कि उनकी पुत्रवधू भी उनके साथ वहाँ थी और रसोईका कोई प्रबन्ध ही नहीं हुआ। वे झटपट रसोई घरमें गयीं। सास और पुत्रवधू दोनोंने मिलकर आँखोंके आँसू पोंछकर बहुत थोड़े समयमें प्रभुके भोजनकी सारी सामग्री तैयार करदी। रसोई घरमें बैठकर सास और पुत्रवधूमें एकान्तमें बहुत सी बातें हुई। प्रभु पुस्तक लेकर पाठ करने बैठे।

शयन मंदिरमें प्रभु व प्रिया

यथा समय प्रभु भोजन करके शयन-गृहमें गये। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी गृहस्थीके सारे काम समाप्त करके प्रभु अधरामृत प्रसादको पाकर पतिकी चरण सेवा करनेके लिये शयन-गृहमें आयीं। श्रीमतीजीके मनमें बड़ा दुःख है। वे आज भोजन न कर सकीं। पानका डब्बा हाथमें लेकर देवीने पतिकी चरण-सेवा करने लिए प्रभुके शयन-मन्दिरमें प्रवेश किया। हमारे रंगीले प्रभु दिव्य पलङ्कके ऊपर सोये पड़े

हैं। उनको निद्रा नहीं आयी है। उनका मन भी आज खूब अच्छा नहीं है। झूठ-मूठ नींदका बहाना करके वे सोये-सोये न जाने क्या-क्या विचार कर रहे हैं।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने बहुत धीरे धीरे निःशब्द पतिके शयन-गृहमें प्रवेश किया। उन्होंने सोचा कि उनके प्राणवल्लभ सुखसे सो रहे हैं। पीछे कहीं उनकी नींदमें बाधा न पड़े—यह सोचकर पतिप्राणा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने प्रभुके पलङ्ग पर चढ़नेका साहस न किया। पलङ्गके पैताने जहाँ प्रभुके दो लाल चरण-कमल सुशोभित हो रहे थे, श्रीमतीजी वहीं बहुत सावधानी पूर्वक खड़ी होकर अपने प्राणवल्लभके शिव-विरञ्चि-वन्दित पाद-पद्मका दर्शन करके सन्तप्त प्राणको शीतल कर रही थीं। रंगीले प्रभु अर्ध निद्रित नेत्रोंसे सब कुछ देख रहे थे, परन्तु नींदके बहाने पड़े थे। श्रीगौर भगवान भक्तकी परीक्षा करते हैं। परन्तु है यह विषम परीक्षा। रोरुद्यमाना म्लान-मुखी विरह सन्तप्ता प्रियतमा पादमूलमें खड़ी दारुण मनःकष्टसे मनकी व्यथा मन ही में सहन कर रही हैं, प्रभु यह जानकर भी निश्चिन्त रूपसे नींदका बहाना करके सोये पड़े हैं। इसको विषम परीक्षा न कहेंगे तो और क्या कहेंगे? भक्त-वत्सल श्रीभगवान जब भक्तकी परीक्षा करते हैं, तब उसकी विशेष रूपसे परीक्षा करते हैं। सोनेको गलाये बिना उसके द्वारा अलङ्कार तैयार नहीं किया जा सकता। यहाँ श्रीगौर भगवान भक्तरूपी स्वर्णको भावी विरह दुःखके तापमें गला रहे हैं, इसके द्वारा वे उत्तम अलङ्कार प्रस्तुत करके अपने गलेमें धारण करेंगे। उस अलङ्कारकी शोभासे श्रीभगवानकी शोभा वर्द्धित होगी। इसीलिए भक्तकी परीक्षा हो रही है। इस विषम परीक्षाका स्थल दुःखमय भवसागर है। दुःखरूप भवसागरमें डूबता हुआ जीव त्रितापकी ज्वालासे दग्ध होकर श्रीभगवत-विरह-अग्निमें जब कूद पड़ता है, तभीसे उसकी यह परीक्षा प्रारम्भ होती है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका अभिनव संसार है। दुःख क्या वस्तु है, वे जानती ही नहीं। संसार दुःखका समुद्र है, इसका उनको बिल्कुल ही भान नहीं था। वे इस समय देख रही हैं कि सांसारिक जीवके लिए सांसारिक दुःख होना अनिवार्य है। वे देखती हैं कि संसार-दुःखसागरका प्रथम तरङ्गाघात भी सामान्य नहीं है। पति परदेश जायेंगे, धन उपार्जन करेंगे—इसमें फिर दुःख क्या है? वास्तविक दुःख इसमें नहीं है। दुःख केवल उनके अदर्शन-जनित विरहमें है। भगवद्भक्तको श्रीभगवानके विरह दुःखके सिवा और कोई दुःख नहीं होता। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको वही विषम दुःख उपस्थित है। यह उनकी प्रथम परीक्षाका समय है। वे भगवानकी परीक्षाकी नवीन परीक्षार्थिनी हैं।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने जब देखा कि प्रभु निद्रा-ग्रस्त हैं, कोई हलचल नहीं दिखलायी दे रही है, तो वे उनके पैरोंके पास पलङ्गके ऊपर धीरे-धीरे जा बैठीं। बहुत सावधानीसे धीरे-धीरे प्रभुके दोनों पाद-पद्मोंको दोनों हाथोंसे धारण करके अपने जंघे पर रक्खा। निद्रित पतिकी चरण-धूलि नहीं ली जाती, इसलिए देवीने पति-

देवताके दोनों रक्त चरणोंको एक बार अपने वक्षःस्थलमें धारण करके अपने हृदयको शीतल किया। इससे उनके सन्तप्त प्राण मानो शीतल हो गये। उनके मनका दुःख बहुत कुछ हल्का हो गया। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्रभुकी चरण-सेवा कर रही हैं, और एक-एक बार पतिके अतिशय सुन्दर आनन्दित मुखचन्द्रकी ओर अतृप्त नेत्रोंसे देखती हैं। प्रभुकी कपट निद्रा भङ्ग हो गयी। कर-कमलोंसे अपने कमलनयनोंको पोंछते हुए शैयासे उठकर बैठ गये।

प्रभु व प्रियाजीमें वार्तालाप

प्राणवल्लभको उठते देखकर देवी शत-अपराधिनीके समान कुछ दूर सरककर बैठ गयीं, और कातर स्वरसे डरते-डरते पूछा—"नाथ ! तुम्हारी निद्रा भङ्ग करके मैंने तुमको कितना कष्ट दिया। यह दासी प्रतिक्षण तुम्हारे सामने अपराधिनी है। तुमने दया करके मुझे दासीका पद दिया है, इसीकारण मैं साहस करके तुम्हारी पद-सेवा करने आती हूँ. मैं इतनी अभागिनी हूँ कि सेवा करके स्वामीको सुख देना तो दूर, उनके असुखका कारण बन गयी। तुम्हारी कच्ची नींद टूट गयी। अब मैं क्या करूँ ?"

प्रभु प्रियतमाके कातर वचन तथा निष्कपट प्रेमसे एकबारगी द्रवित हो उठे। उन्होंने अपनी सुवलित दोनों भुजाओंको फैलाकर प्रियाको गोदमें लेकर प्रगाढ़ प्रेमालिङ्गन तथा बारम्बार मुख चुम्बन करके उसे सन्तुष्ट किया। प्रभु जानते थे कि आज प्रियतमा लक्ष्मीप्रियाके मनमें दारुण कष्ट हुआ है। वे जानते थे कि प्रियाके इस मनःकष्टका कारण एकमात्र वे ही हैं। प्रभु यह भी जानते थे कि इस कष्टके निवारणका कोई उपाय नहीं है। सर्वज्ञ प्रभु मन ही मन सब जानते थे। वे विशेषरूपसे जानते हैं, कि उनकी पतिप्राणा रमणी पति-विरह-दुःखको सहन नहीं कर सकती। इस विरह-काल-सर्पके दंशसे उनकी प्रियतमा भार्याके प्राणवायु निकल जायेंगे। यही उसके साथ अन्तिम भेंट तथा अन्तिम प्रेमालिङ्गन, अन्तिम प्रणय-प्रकाश, अन्तिम मधुर सम्भाषण एवं अन्तिम युगल-विलास है। यह भाव प्रभुके मनमें उदय होते ही उनका हृदय उन्मादित हो उठा। इसी कारण उन्होंने प्रियाको प्यार करके उसके सन्तप्त प्राणोंको शीतल किया, उन्मादित हृदयको शान्त किया। यह बात, यह विषय प्रसङ्ग, यह गुप्तलीला कहानी प्रकट करनेकी वस्तु नहीं है। इसी कारण प्रभुने मनकी अग्निको मनमें ही शान्त किया। श्रीगौरभगवान चतुर-चूड़ामणि हैं, उनकी चतुरता समझनेकी शक्ति सरल अबला बाला लक्ष्मीप्रियामें नहीं है। योगी, ऋषि,, महामुनीगण, ब्रह्मा आदि देवतागण श्रीभगवानकी चतुरताका अन्त नहीं पाते, चौदह वर्षकी बालिका उसको क्या समझेगी ?

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्रभुके वक्षःस्थल पर अपना मुंह छिपाकर अजस्र आँसू बहा रही हैं। आज उनके हर्षमें विषाद उपस्थित है। स्वामी-सोहागिनी स्वामीके प्यारमें द्रवित होकर सारे दुःख भूल गयी हैं। परन्तु रह-रह कर उनका हृदय धड़कने लगता है। पतिके परदेश गमन, तथा उनकी भावी विरह ज्वालाकी बात याद आते ही देवीका सारा आनन्द निरानन्दमें परिणत हो जाता है। इसी कारण वे व्याकुल होकर रो रही हैं। प्रभुकी शत-शत प्रेमचेष्टासे भी उनका मन स्थिर नहीं हो रहा है। प्रेममय नदियाके अवतारकी प्रेमचेष्टा क्या विफल हो सकती है? नदियाके प्रेमिक ब्राह्मण बालकने बड़ी विपदमें पड़कर प्रेममयी प्रियतमाकी शरण ली। उन्होंने प्रेम-विह्वल भावमें प्रणय-विस्फारित प्रेमाश्रुपूर्ण नयनोंसे अतिशय प्रणय-कातर कण्ठसे प्रियतमाका चिबुक स्पर्श करके प्रेमपूर्वक कहा, "प्रियतमे लक्ष्मीप्रिये ! तुम्हारे इस कातर भावको देखकर मैं अब स्थिर नहीं हो पाता हूँ; मुझे सूझ नहीं रहा है कि तुमको क्या कहकर समझाऊँ ? तुम्हारे प्रेमका प्रतिदान देनेके लिये मेरे पास कुछ भी नहीं है। मैं दरिद्र ब्राह्मण हूँ। तुम्हारे जैसे नारी रत्नको पाकर मैं धन्य हो गया हूँ। तुमको मेरी कोई भी वस्तु अदेय नहीं है। ये देह, मन और प्राण सब तुम्हारे हैं। मैं पूर्णतः तुम्हारे वशीभूत हूँ। तुम्हारे इस प्रकार रोनेसे मेरे हृदयमें बड़ी वेदना होती है। तुमको साथ लेकर मैं सुखसे गृहस्थी चलाऊँ— यही मेरी इच्छा है। इसी इच्छाके वशवर्ती होकर मैं परदेश जा रहा हूँ। तुम इसमें बाधक न होना। प्रियतमे ! तुम्हारे सुखके लिए ही मेरा परदेश-गमन हो रहा है। तुमको सुखी करने पर ही मेरे जीवनकी साध पूरी होगी। तुम इस साधमें बाधक न बनना।" श्रीगौरभगवानकी लीला समझनेकी शक्ति किसमें है ? इसीकारण श्रीवृन्दावन दास ठाकुर लिख गये हैं—

के बूझिते पारे गौर-सुन्दरेर लीला।
मने करे एक मुखे पाते आर खेला॥

गौर-सुन्दरकी लीला कौन समझ सकता है ? मनमें तो कुछ करते हैं और मुखसे कुछ और ही कहते हैं

इतना कहकर प्रभुने प्रियाको पुनः वक्षःस्थलमें धारण करके प्रगाढ़ प्रेमालिङ्गन प्रदान किया। श्रीगौराङ्ग-वक्ष-विलासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्राणवल्लभके एतादृश आदर और सोहागसे द्रवित होकर मानो स्वामीके साथ एकाङ्गीभूत होकर मिल गयीं। कुछ देरके बाद दोनों निःस्पन्द भावमें चुपचाप प्रेमालिङ्गनमें रत रहे। पश्चात् श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने प्राण-वल्लभके प्रेमालिङ्गनसे मुक्त होकर अपना वस्त्र सँभाला। इस समय मेरे प्रभु गम्भीर भावमें बैठकर कुछ सोचने लगे। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अपने प्राणवल्लभके मुखचन्द्रकी ओर देखकर मनमें दारुण दुःख अनुभव करने लगीं। उन्होंने व्याकुलतापूर्वक प्रभुके रक्त चरणोंको दोनों हाथोंसे धारण करके रोते-रोते कहा—"नाथ ! मेरे समान कठोर हृदयकी नारी जगतमें

दूसरी नहीं है। आज मैंने स्त्री-जन-सुलभ कुबुद्धिके वश होकर तुम्हारे मनको कितना कष्ट पहुँचाया। नारी जाति सदासे सामान्य बुद्धि-युक्त होती आयी है। मैं तुम्हारी अधम दासी हूँ। दासी-बुद्धिसे तुमको जो कहा है, उससे ही तुम्हारे मनमें इतना कष्ट हुआ है। मैं तुम्हारे इस दारुण मनःकष्टका कारण हूँ। तुम दयावान हो, बुद्धिमान हो। मैं कठिन हृदया और बुद्धिहीना हूँ। तुम्हारे चरणोंमें मैं शत-अपराधिनी हूँ। तुम्हारे सामने मैं पद-पद पर अपराध करती हूँ। अपराध करना ही मेरा काम है। तुम मेरे दयालु त्रिभुवन-पूज्य पति देवता हो। तुम कृपा करके इस अभागिनीके सारे अपराध क्षमा करो। तुम्हारे परदेश-गमनमें मैं बाधक न बनूंगी। परन्तु एक बात मैं तुमको कहे देती हूँ। तुम्हारे विरहको सहन करके जीवित रहना मेरे लिए बड़ा कठिन होगा।"

प्रभुकी सङ्कल्प च्युति

प्रभुने स्थिर होकर प्रियतमाकी सहज और सरल हृदयकी मर्मान्तिक और प्राणस्पर्शी बातें सुनीं। प्रियाकी अन्तिम बातसे उनके हृदयमें बड़ी चोट लगी। वे जानते हैं कि यह एक अति सत्य बात है, उनकी प्राणोंसे भी प्रियतमाके अन्तःकरणके अन्तस्तलकी मर्मकी बात है। पतिप्राणा रमणीके सरल मनका सरल तथा दृढ़ विश्वास श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी इस अन्तिम बातमें पूर्णतः प्रकट हो रहा है। मेरे सर्वज्ञ प्रभु जानते हैं कि उनकी शक्तिरूपा सहधर्मिणीकी शक्तिका बल कहाँ तक है, उनकी प्रियतमा भार्याकी साधनाका फल कैसा है, उनके प्रियभक्तका उनके प्रति ऐकान्तिक भक्तिबल कितना अधिक है। अन्तर्यामी श्रीगौरभगवान अपनी अङ्कलक्ष्मीकी दृढ़प्रेम-भक्ति तथा निष्कपट प्रीति-प्रेमसे बद्ध हो गए हैं। वे मायातीत होने पर भी नररूप ग्रहण करके संसारकी मायाके आधीन हो गये हैं। अपनी प्रियतमाके इस अपूर्व दास्य-भक्तिके साथ प्रेमभक्ति मिश्रित, प्रीतिपूर्ण प्रणयकातर भावसे पूर्ण विमुग्ध होकर उनके दोनों कोमल करपल्लवको अपने करकमलोंसे मृदु-मृदु मर्दन करते हुए उन्होंने अतिशय दैन्यभावसे कातर स्वरमें कहा, "प्रियतमे लक्ष्मीप्रिये! तुमको छोड़ अब मैं परदेश न जाऊँगा। तुम अब दुःख मत करो। मैं तुम्हारे कातर मुखको देखकर अतिशय कातर हो रहा हूँ।" श्रीभगवान पूर्णतः भक्तके आधीन हैं, वे भक्तकी इच्छाके विपरीत कोई कार्य नहीं कर सकते हैं—श्रीगौराङ्गसुन्दरने अपनी बातोंसे यही प्रकट किया है। निमाई पण्डितके परदेश जानेका सङ्कल्प रद्द हो गया। उनकी धनोपार्जनकी वासना पड़ी ही रह गयी। वे प्रणयिनीके प्रेम-भक्ति-पाशमें आबद्ध होकर अपने सङ्कल्पसे च्युत होकर प्रेमावेशमें बालकके समान चतुर्दश वर्षकी बालिका भार्याका आँचल पकड़कर रो पड़े। यह दृश्य बड़ा ही मधुर था।

भक्तके सामने भगवानकी पराजय सदासे ही होती आ रही है, परन्तु नदियामें मिश्रपुरन्दर भवनमें गम्भीर निशीथमें नदियाके ब्राह्मणकुमारने एक विप्र-

कुमारीको लेकर जो "**अहं भक्त-पराधीनः**" इस गीतोक्त भगवद्वाक्यकी सफलताको सूचित करनेवाला अपूर्व दृश्य उपस्थित किया, इसके समान करुण दृश्य अवतार-जगतमें विरले ही हैं। भक्तका मान बढ़ानेके लिए श्रीभगवान कहाँ तक आत्मत्याग करनेमें सक्षम हैं, यह श्रीश्रीगौरलक्ष्मीके इस विषादमय नैशविहार-चित्रमें पूर्णतः प्रतिफलित हुआ है। यह भक्तके सामने श्रीभगवानके आत्मसमर्पणका अति विचित्र चित्र है। श्रीभगवानके सृष्ट जीव श्रीभगवानको ही आत्मसमर्पण करके कृतार्थ होते हैं। श्रीभगवानका आत्मसमर्पण केवल भक्ति जगतमें ही संभव है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी भक्त-शिरोमणि हैं। दास्य भावके साथ मधुर भाव सम्मिश्रणमें देवीकी प्रेम-भक्तिका भाव सुन्दर परिस्फुट हुआ है। भाव-ग्राही श्रीगौरभगवानने इस प्रेमभाव-कुसुम-सौरभसे आकृष्ट होकर भक्त-भ्रमरोंके प्रेमजालमें पड़कर आत्मसमर्पण किया। इस जालसे उद्धार पानेकी शक्ति उनमें नहीं है। शक्तिमान अपनी शक्तिके फन्देमें पड़कर अशक्त होकर अन्तरङ्गा शक्तिके शरणापन्न हुए। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी भक्त-शिरोमणि हैं। उनकी ही विजय हुई। निमाई पण्डित श्रीभगवान हैं। उनकी पराजय हुई। भक्तके सामने भगवानकी पराजय सदासे होती आ रही है। इसमें कोई नयी बात नहीं है। इससे निमाई पण्डितके लज्जित होनेका कोई कारण नहीं है। वे निश्चिन्त रहें, इसके लिए उनको किसी प्रकार लाञ्छित या निन्दित नहीं होना पड़ेगा। उन्होंने भी मन ही मन प्रियाजीकी जय मनायी।

प्रियाजी द्वारा प्रभुको सान्त्वना

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने प्राणवल्लभके इस कातर भावको देखकर भीत-चकित नेत्रोंसे उनके मुँहकी ओर देखा। प्रभुको अधोवदन देखकर उनके मनमें दारुण वेदना हुई। उन्होंने देखा कि यह लज्जाका समय नहीं है। श्रीमतीजी प्राणवल्लभके अङ्गसे अङ्ग सटाकर बैठीं। अपने कुसुम कोमल कर-पल्लवको उन्होंने प्रभुके श्रीमुखचन्द्र पर धीरे-धीरे रखा। प्रभुने मुख उठाकर एकबार देखा, फिर सिर नीचा कर लिया। देवीने पुनः अपने सुकोमल बाहु-पाश द्वारा प्राणवल्लभके गलेको वेष्टन करके कोमल कर-पल्लव द्वारा सुन्दर मुखमण्डलको कुछ उठाया। इसबार देवी और प्रभुकी आँखें चार हुईं। दोनोंकी आँखोंसे प्रेमाश्रुधारा बह चली। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्राणवल्लभकी आँखोंमें अश्रुधारा देखकर अपने चित्तको स्थिर न रख सकीं। उनके दुःख दूर करनेका उपाय निश्चित न कर सकनेके कारण यौवन-सुलभ-चाञ्चल्यके वशीभूत होकर लज्जावनत मुखसे प्राणवल्लभके मुखचन्द्रमें चुपचाप एक प्रेम-चुम्बन प्रदान किया। तत्काल प्रभुके विषण्ण मुखमें प्रसन्नता आगयी। उनके मुँह पर हँसीकी रेखा दीख पड़ी। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके वदनमें प्राण आया, उनका सारा दुःख दूर हो गया।

तब उन्होंने मधुर मुस्कानके साथ प्राणवल्लभसे मधुर स्वरमें कहा, "नाथ ! तुम नर मानव हो। सुना है कि तुम बड़े पण्डित हो। नारीके समान तुम रोते क्यों हो ? तुम स्वच्छन्द परदेश जाओ, मैं तुम्हारी माताकी सेवा करके तुम्हारे विरह-जनित दुःखको दूर करूँगी। तुमने कहा ही है कि शीघ्र घर लौटोगे। किसी प्रकारसे ये कुछ दिन कट जायेंगें।" इतना कहकर श्रीमतीजीने हँसते-हँसते प्राणवल्लभको प्रेमानन्दसे अपनी गोदमें खींच लिया। भक्त और भगवानका प्रेम-सम्मिलन हुआ। भक्तकी प्रेमचेष्टासे भगवानका मन-प्रसन्न हुआ। इससे प्रभुके मनमें बड़ा आनन्द हुआ। उन्होंने सोचा कि उनकी प्रेममन्त्रौषधि फलवती हो गयी। चतुर-शिरोमणि हमारे प्रभु केवल चतुर ही नहीं हैं, वे शठ-शिरोमणि भी हैं। अपनी अबला, सरला बालिका भार्याके साथ भी चतुरता और शठता करते उनकी आँखोंमें लज्जा नहीं आयी।

भगवानकी आँखोंमें लज्जा हो तो उनकी सृष्टि नहीं चल सकती। इसीसे उनकी आँखोंमें लज्जा नहीं आती। वे सदाके रंगीले हैं, रङ्गबाजीमें ही उनका दुनियाका कारोबार चलता है। इसी कारण उनका एक नाम रङ्गबाज है। रङ्गबाजी उनको बहुत अच्छी लगती है। यह उनकी लीलामें प्रमुख सहायक है। इसी कारण उनका एक नाम रसराज है। रङ्गबाजने रसराज रूपमें आज शचीके घरमें अद्भुत रङ्गबाजी की।

शेष युगल विलास

निमाई पण्डित गृहिणीके प्रेमसे गद्-गद् होकर अब अपने घरमें विलास-शैयाके ऊपर शयन करके सुखके समुद्रमें मग्न हो रहे हैं। आज उनकी प्रियतमा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ अन्तिम युगलविलास है। इसको वे खूब जानते हैं।

अपनी द्वितीय गृहिणी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको संन्यासके पूर्व दिवस रात्रिमें उन्होंने जिस प्रकार अपने हाथों सजाकर मनकी साधसे नदियामें युगल-विलास लीला की थी, आज भी उन्होंने यही किया।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अतिशय लज्जाशीला हैं। प्रभु अतिशय चतुर-शिरोमणि हैं। देवीका भाव दास्यभाव है। रसिक नायिकाका भाव उनके चरितमें परिस्फुट होते नहीं देखा जाता। तथापि यह भी नहीं कह सकते कि यह भाव उनमें नहीं है। क्योंकि इसके कुछ पहले उन्होंने अपने प्राणवल्लभके चित्त-विनोदार्थ रसिक नायिकाका भाव प्रकट किया था। वह भी विवश होकर अपने प्राणवल्लभके प्रीत्यर्थ देवी प्रभुके दासीत्व-पदकी प्राप्तिमें अपनेको सम्मानिता समझती हैं। प्राण-वल्लभका दासीत्व कर सकने पर वे अपनेको गर्विणी समझती हैं। इससे बढ़कर कोई दूसरी उच्चाभिलाषा उनको नहीं है। तथापि प्रभुकी इच्छासे प्राणवल्लभको प्रणय-

पिपासा तृप्त करनेके लिए देवीको प्राणवल्लभके हाथोंसे सज्जित होना पड़ता है। प्रभुने उनको अपने हाथों वस्त्र, अलङ्कार, पुष्पमालिका, कस्तूरी, कुङ्कमसे मनकी साधसे सज्जित किया। देवी लज्जासे सिकुड़ी जा रही हैं और प्राणवल्लभ जो कह रहे हैं, वही कर रही हैं। वे मानो कठपुतलीके समान सब कार्य करती हैं।

उनके लिए यही अन्तिम पति-सङ्ग-सुखकी प्राप्ति है। दम्पति युगलके प्रणय संभाषणका आज अन्तिम दिन है, इसको श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी जानकर भी अनजानी हो रही हैं। वह अबोधिनी बाला यह नहीं जानती कि पति-विरह-दुःख सागरमें डूबकर वह फिर निकल न सकेगी। गौर-वक्ष-विलासिनी प्राणवल्लभके वक्षः-स्थल पर विराज रही हैं, युगल-विलास-सम्भोग रसमें दोनोंके चित्त एकबारगी निमज्जित हो गये हैं। दो प्राण एक होकर, दो देह एकीभूत होकर, दोनों एकात्मा होकर श्रीश्रीगौर-लक्ष्मीप्रिया अपने भवनमें सुखसे नींद ले रहे हैं।

कृपालु प्रिय रसिक पाठकवृन्द गौर-लक्ष्मीके इस युगलविलास चित्रको मन ही मन अङ्कित करके व्रजके रसका आस्वादन करें। व्रजरस और नवद्वीपरस अनुरूप हैं। श्रीगौराङ्ग प्रभुकी नवद्वीप लीलाके श्रीश्रीनवद्वीपचन्द्रका युगल-विलास-सुख व्रज-लीलाके श्रीश्रीराधाकृष्णके युगल-विलासानन्दकी अपेक्षा किसी भी अंशमें न्यून नहीं है। रसिक भक्तोंमें जिनकी जहाँ प्रीति होती है, वे उसी रसका आस्वादन करते हैं। रसमय गौरचन्द्रने रसराज रूपमें अपने गृहमें नदियामें युगल-विलास किया। इसमें उन्होंने दिखलाया कि यह भी गार्हस्थ्य धर्मका अङ्ग है। हमारे प्रभु सर्वरसकी अवधि हैं। एक पदमें इस अधम गृन्थकारने उनको इसी नामसे सन्बोधन करके बड़ा सुख पाया था। वह पद है—

रसेर अवधि मोर पहुँ।	मेरे प्यारे रसकी अवधि (सीमा) हैं।
रसराज रूप धरि, पात्रापात्र ना विचारि, प्रेमरस दान कैला बहू॥	जिसने रसराज रूप धारण कर पात्र और अपात्रका विचार किए बिना बहुत प्रेम-रसदान किया है—
रसिक नागर वर, गोरा राय नटवर, रसेर सागर तिहों मोर।	गोरा राय नटवर श्रेष्ठ रसिक नागर हैं और वे मेरे, रसके सागर हैं।
रसमय रसे भरा, रसेर निर्य्यासे गड़ा, पहूँ मोर गौर किशोर॥	मेरे प्यारे गौरकिशोर परम रसमय, रससे परिपूर्ण तथा रसके सार भाग (अर्क)से गठित हैं।
रसतत्त्व-अवतार, रसार्णव पद ताँर, रस-सिन्धु प्राणबँधु तिनि।	वे रस तत्वके अवतार हैं। उनके चरण रसके समुद्र हैं। वे रस-सिन्धु और प्राणबन्धु है।

नव नव रस दिया, गड़ि गोरा विनोदिया, कोन विधि जुड़ाल पराणि ।।	गौर विनोदियाका नये-नये रससे निर्माण कर किसी प्रकार प्राणोंको शीतल किया ।
सर्व्वरस सार गोरा, सर्व्व मन चितचोरा, रसेर आगार सुधावाणी ।	सर्व रसके सार गौरचन्द्र सबका मन और चित्त चुराने वाले हैं और उनकी अमृत-सी वाणी रसका आगार है ।
रस-शास्त्र प्रचारक, व्रजरस-नायक, निखिल-भुवन-प्रिय स्वामी ।।	रस-शास्त्रके प्रचारक, व्रज-रसके नायक और अखिल ब्रह्माण्डके वे प्रिय स्वामी हैं ।
रसेर तरङ्ग तुलि, हरिनाम मुखे बूलि, रसिक-चन्द्र गोरा चाँद ।	रसके तरङ्ग तरङ्गायित करके, मुखसे हरिनाम बोलकर, रसिक चन्द्र गौर-चाँद,
रसमय रसाश्रय, आमार गौराङ्ग हय रास-रसिक रस-फाँद ।।	रसमय, रसाश्रय, रास रसिक, रसका फन्दा डालने वाले मेरे गौराङ्ग हैं ।
रसिकेर चूड़ामणि, रसे भरा मुख खानि रसावेशे डगमग तनु ।	वे रसिक चूड़ामणि हैं, उनका मुख रससे भरा है तथा उनका शरीर रसा-वेशसे डगमगाता रहता है ।
हेन लीलारसगान, ना द्रविल शिलाप्राण ताइ भावि जीयन्ते मनु ।।	ऐसे लीला-रस-गानसे भी मेरे पाषाण प्राण द्रवित नहीं होते, यही सोचकर मैं जीवित भी मरेके समान हूँ ।
गौर-कथा रसमय, ताते नाहि चित्त धाय शुष्क चित्ते नाहि रसविन्दु ।	गौर-कथा रसमय है, उसमें मेरा चित्त नहीं जाता । मेरे शुष्क चित्तमें रसका एक विन्दु भी नहीं है ।
अरसिक हरिदासे, रसतत्त्व केवा भाषे दूरे रहि हेरि रस-सिन्धु ।।	इस अरसिक हरिदासको, रस-तत्व कैसे समझमें आवे ? अतएव दूर रहकर रस-सिन्धुको निहारता मात्र है ।

बहुत तड़के श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने शैयासे उठकर गलेमें वस्त्र डाल अपने प्राणवल्लभको साष्टाङ्ग प्रणाम किया । सासके उठनेके पहले ही उन्होंने गृहकार्य प्रारम्भ कर दिया ।

विदेश-यात्राकी तैयारी

कुछ देरके बाद प्रभुने शैयासे उठकर प्रातःकृत्य समाप्त करके माताको पुकार कर कहा—"माँ ! आज बड़ा शुभ दिन है। आज अपराह्नमें मैं परदेशके लिए यात्रा करूँगा।" शचीमाता पुत्रके मुँहकी ओर ताक कर बोलीं, "बेटा निमाई ! नदियामें ऐसा कोई नहीं है जो तुमको सङ्कल्प-च्युत करनेकी क्षमता रखता हो। बेटा ! तुम विदेश जाओगे, परन्तु मेरे प्राण तुम्हारे साथ-साथ रहेंगे। केवल देह यहाँ रहेगी। जितना शीघ्र हो सके तुम घर लौटनेकी चेष्टा करना।" जननीको सान्त्वना देकर प्रभु नदिया-भ्रमणके लिए बाहर निकले। उद्देश्य यह था कि एक बार सबसे भेंट करलें।

नदियाके सब लोग जानते हैं कि निमाई पण्डित पूर्व बङ्ग देशकी यात्रा करेंगे। प्रभुके साथ वनमाली आचार्य आदि दो-तीन पण्डित जायेंगे। कुछ छात्र भी जायेंगे। प्रभुके दो-एक सङ्गी साथी भी जायेंगे। सभी तैयार हो गये हैं। प्रभु सबके घर जाकर सादर सम्भाषण और प्रेमालिङ्गन प्रदान कर सबको सन्तुष्ट कर, विदा लेकर मध्याह्नमें घर लौटे और माताके पास भोजन करने बैठे। उन्होंने हँसते-हँसते नाना प्रकारकी बातें करके माताको सन्तुष्ट किया।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्रभुको भोजन परोस रही हैं। उनको लक्ष्य करके प्रभुने मधुर वचनसे माताको कहा, "माँ ! तुम्हारी बहू तुम्हारी सेवा करेगी। उसका बड़ा सौभाग्य है। मैं अभागा हूँ, इसी कारण तुम्हारी सेवासे वञ्चित होकर परदेश जा रहा हूँ। माँ क्या करूँ ? गृहस्थी चलानी है, अर्थोपार्जन बिना किये यह गृहस्थी कैसे चलेगी ? तुम्हारी बहूके लिए अलङ्कार-वस्त्र लाऊँगा, तुम्हारे लिए रेशमी वस्त्र लाऊँगा। घरमें धातुके वर्तन नहीं हैं, वह भी प्रचुर परिमाणमें लाऊँगा। माँ ! तुम लोग अच्छे मनसे मुझको विदा करो।" वृद्धा शचीमाता पुत्रको और क्या कहतीं ? उन्होंने कातर स्वरसे उत्तर दिया, "बेटा निमाई ! तुम मेरे सात राजाके धन एक माणिक हो। बहुत सुकृतिके फलस्वरूप मैंने तुमको प्राप्त किया है। तुम जहाँ ही रहो, सुख-स्वच्छन्दता पूर्वक रहो। तुम्हारे सुखी रहनेसे ही हमको सुख है। मेरी सोनेकी बहूको लेकर तुम सुखसे गृहस्थी चलाओ जिससे मैं तुमको सुखी देखकर तुम्हारे सामने मर सकूं।"

प्रभुने हँसकर कहा, "माँ ! तुम चिन्ता मत करना। मैं अतिशीघ्र आऊँगा।" तब शचीमाताको याद आया कि बहुत दिन पहले उन्होंने अपनी सासको वचन दिया था कि एक बार अपने पुत्रको उन्हें दिखायेंगी। प्रभुको गर्भमें लेकर वे ढाका दक्षिणसे नवद्वीपमें आयी थीं।*उनके सास-सुसर पौत्रका मुँह नहीं देखने

* इस बातकी मीमांसा प्रभुकी "नवद्वीप लीला" श्रीग्रन्थमें की गई है।

पाये थे। अब वे लोग अति वृद्ध और अशक्त हो गये थे। शचीमाताने पुत्रसे कहा, "बेटा निमाई ! तुम जब पूर्ववङ्ग देश जा रहे हो, तो एक बार अपनी पितामहीसे भेंट करते आना।" प्रभुने हँसकर उत्तर दिया, "माँ ! इसीलिए तो मैं उस देशमें जा रहा हूँ।"

प्रियाजीका मिलन और उनको आदेश

मध्याह्न कालका भोजन करके प्रभुने शयन-गृहमें जाकर कुछ विश्राम किया। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी पानकी डब्बी लेकर प्रभुके पास गयीं। प्रभु पलङ्गके ऊपर बैठे थे। अपनी प्रियतमाको देखते ही प्रेमपूर्वक हाथ पकड़कर पास बैठाया। दिनमें कभी-कभी प्रभु माताको सन्तुष्ट करनेके उद्देश्यसे अपने घरमें श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ युगलरूपमें बैठा करते। आज भी वही किया। प्रभुका उद्देश्य था जननी और गृहिणी दोनोंको इस प्रकार मनमें सुख प्रदान करना। शचीमाता बहूको पुत्रके घरमें जाते देखकर बहुत प्रसन्न होती थीं। विशेषतः आज वे परदेश जाने वाले थे। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्राणवल्लभके साथ मिली हैं। जितनी देर प्रभुके सङ्ग-सुखकी प्राप्ति हो उतना ही अच्छा !

प्रभुने प्रियतमाको आदरपूर्वक पास बैठाकर प्रेमपूर्ण मधुर वचनोंसे कहा, "प्रियतमे ! लक्ष्मीप्रिये ! तुम सदा मेरी माँकी सेवा करना। वे वृद्ध हो गयी हैं, मैं परदेश जा रहा हूँ, तुमको उनके पुत्र और पुत्रवधू दोनोंका कार्य सम्पादन करना है। इससे तुम्हारी मेरे विरह जनित पीड़ा दूर होगी।" इतना कहकर प्रभुने अपना एक पुराना यज्ञसूत्र प्रियतमाके हाथमें देकर पुनः कहा, "यह मेरा यज्ञसूत्र तुम्हारे द्वारा नित्य पूजित होना चाहिए। तुम इसे खूब यत्नपूर्वक रखना। मेरी कुछ चरणधूलि सम्पुटमें भरकर रखो। नित्य अपने ललाटमें मेरी चरणधूलिका तिलक लगाना और नित्य लक्ष हरिनाम महामन्त्रका जप करना।" जैसा जयानन्द ठाकुरने श्रीचैतन्य-मङ्गलमें लिखा है—

> बङ्गयात्रा शुनि कान्दे लक्ष्मी ठाकुरानी।
> प्रवोधिल ताँके गौरचन्द्र द्विजमणि॥
> आमार मायेर सेवा करिह निरवधि।
> काँवेर यज्ञसूत्र ताँरे दिल गुणनिधि॥
> आमार चरणधूलि राख कटुया भरि।
> कपाले तिलक निह मन्त्र जप करि॥

अन्तरङ्ग भक्तके प्रति श्रीभगवानकी कितनी कृपा होती है, देखिये। सरल तथा निष्कपट प्रेम और निष्काम प्रीतिके बन्धनसे श्रीभगवान् जितने वशीभूत होते हैं; उतने और किसी बातसे नहीं होते। प्रेमभक्तिके डोरेसे श्रीमती लक्ष्मीप्रिया

देवीने प्रभुको बाँध रक्खा है। उसका प्रतिदान ऐश्वर्य नहीं है। श्रीगौरभगवान अपनी प्रियतमाको ऐश्वर्य दिखाकर विश्व-ब्रह्माण्डका धनरत्न लाकर उन्हें देकर भुलावेमें डाल सकते थे। परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। इसका कारण, प्रभु जानते हैं कि श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी यह सब कुछ नहीं चाहती हैं। भक्तवत्सल श्रीगौराङ्ग प्रभु, भक्त जो चाहता है वही उसे देकर कृतार्थ करते हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी चाहती हैं अपने प्राणवल्लभकी पद-रज। वह उनको मिल गयी। देवी और चाहती हैं प्रभुकी प्रसादी त्याज्य वस्तु। वह भी उनको मिल गयी है। उनके प्राणवल्लभका व्यवहृत यज्ञोपवीत देवीके लिए परम वस्तु है। उनकी पद-रज उसकी अपेक्षा भी बढ़ कर है।

भक्तके भगवान भक्तकी मनोवाञ्छा पूर्ण करनेके लिए किस प्रकार तत्पर रहते हैं, भक्तके मनको जानकर प्रसाद प्रदान करनेमें प्रभु कैसे सिद्धहस्त हैं, अपने इस कार्यके द्वारा यह बात प्रभुने जगतके जीवोंको समझायी है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने इस दुःखके बीच प्रभुके इस अयाचित कृपा प्रसादको प्राप्त कर आनन्दानुभव किया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैं जो चाहती हूँ, वह तो मुझे मिलता है। मैं चाहती हूँ अपने हृदय-सर्वस्वको सर्वदा अपने हृदय-मन्दिरमें धर कर रखना। जिससे एक क्षण मात्रके लिए भी उनकी मधुर मनमोहन मूर्ति मेरे हृदयदर्पणसे अन्तर्द्धान न हो। मैं चाहती हूँ कि मेरे प्राणवल्लभ मेरे प्राणोंमें नित्य विराजमान हों, मेरे हृदय-मन्दिरमें बैठकर मेरे अन्धकारमय हृदयको आलोकित करें, मेरे वक्षःस्थलमें स्थित होकर मधुर मनमोहन नृत्य करें, उनकी पवित्र पदरज मेरे अङ्गोंका आभूषण बने। मेरी वासनाको मेरे हृदय-वल्लभ अवश्य जानते हैं। इसको वे अवश्य पूर्ण करेंगे।"

भक्तहृदयमें श्रीभगवानकी दयाकी प्राप्तिकी सुख-आशा कैसी बलवती होती है, उनकी करुणाकी प्राप्तिका सुदृढ़ विश्वास कैसा अटल और अचल होता है, यह श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके इस मनोभावमें पूर्णतः प्रस्फुटित हुआ है। भक्त और भगवानका प्रेम-सम्बन्ध अति गूढ़ विषय है। प्रेमिक भक्त प्रेममय भगवानके साथ प्रेम-सम्बन्ध डालकर किस प्रकार प्रेम-भजनसे उनको तुष्ट करते हैं, यह बात श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका चरित अनुशीलन करनेसे विशेषरूपसे समझमें आ जाती है।

देवीका अन्तिम वरदान

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने प्राणवल्लभके उपदेशोंको मालासूत्रके समान हृदयमें गाँथ लिया। उनके लिए प्रभुके ये उपदेश वेदवाणीकी अपेक्षा भी श्रेष्ठ हैं। उन्होंने प्रभुका दिया हुआ प्रसादी-यज्ञोपवीत-सूत्र मस्तक पर धारण करके प्राणवल्लभको दण्डवत प्रणाम करके उनकी चरणधूलि लेकर कहा, "नाथ! तुमने दया करके मुझे आज जो कुछ दिया है, इसकी अपेक्षा परम धन मेरे लिए जगतमें और कुछ नहीं है।

दासीको अन्तमें श्रीचरणोंमें स्थान देना, तुम्हारे चरणोंमें मेरी यही अन्तिम भिक्षा है। तुम्हारी इस पदरजको वक्ष:स्थलमें धारण करके तुम्हारा मधुमय नाम लेते हुए और तुम्हारी इस चिरसुन्दर मधुर मूर्तिका ध्यान करते-करते मेरे प्राण इस शरीरसे निकलें—इसके सिवा और कुछ मैं तुमसे नहीं चाहती।" अधम ग्रन्थकार रचित देवीके मनोभावको व्यञ्जित करने वाला एक पद्यांश यहाँ उद्धृत किया जाता है।

गौराङ्ग बलिया, प्राण त्यजिब, **चिरजीवनेर आश।**	गौराङ्ग बोलकर, प्राण छोड़ूँ, यही मेरी चिरजीवनकी आशा है।
मिटाबे कि ताहा, गौर भगवन् **पुराबे कि अभिलाष ?**	हे गौर भगवन्! क्या उस आशाको मिटायेंगे ? क्या उस अभिलाषाको पूरी करेंगे ?
कोन आशा नाइ, किछुइ ना चाइ, **चाइ एइ वरदान।** **गौराङ्ग बलिया, कान्दिते कान्दिते** **जाय जेन मोर प्राण॥**	और कोई आशा नहीं, और कुछ नहीं चाहती, केवल यही वरदान चाहती हूँ कि 'गौराङ्ग' कहकर रोते-रोते मेरे प्राण निकलें।
गौराङ्ग बलिया, जीवन त्यजिब, **ए बड़ उच्च आशा।**	'गौराङ्ग' बोलते हुए जीवन छोड़ूँ—यही बड़ी उच्च अभिलाषा है।
हबे कि कपाले, ए हेन सुदिन, **हरि जे करम नाशा॥**	क्या मेरे भाग्यमें ऐसा सुदिन होगा ? भगवान हरि कर्मोंका नाश करने वाले हैं।

इतना कहकर श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्रेमावेगसे रो पड़ीं। प्रभुने झटपट पलङ्गसे उठकर प्रियतमाको प्रगाढ़ आलिङ्गन प्रदान करके सन्तुष्ट किया। उन्होंने प्रेम-गद्गद भावसे कातर वचनोंसे मन ही मन कहा, "तुम्हारी मनोवाञ्छा पूर्ण होगी।"

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी घूँघटमें मुँह छिपाकर धीरे-धीरे स्वामीके घरसे बाहर निकलीं। प्रभु मुँह नीचा किए कुछ देर तक अपने घरमें बैठे-बैठे मन ही मन कुछ सोचते रहे। पश्चात् शैयाके ऊपर शयन करके कुछ समय विश्राम करके अपराह्नमें शुभक्षणमें परदेश यात्रा करनेकी तैयारीमें लग गये।

विदाईका दृश्य

निमाई पण्डित नदिया छोड़कर विदेशकी यात्रा करेंगे, यह जानकर प्रभुके घर नदियाके बड़े बड़े प्रतिष्ठावान् पण्डित उनसे विदा लेने तथा उनको विदा देनेके लिए आये। उनमें श्रीअद्वैतप्रभु, श्रीवास पण्डित, प्रभुके श्वसुर श्रीपाद वल्लभाचार्य आदि अनेक ही थे। प्रभुके वयस्यगण और छात्रगण भी थे।

शचीमाताके घर बहुत लोगोंका समागम हुआ है। परन्तु उनका ध्यान उस ओर नहीं है। वे अपनी पुत्रबधूको लेकर निमाईचाँदके साथ ले जानेके लिए परदेशके उपयुक्त वसन, पात्र और भोजन-सामग्री आदि बाँधनेके बन्दोबस्तमें हैं। कई पोटलियाँ बाँध रक्खी हैं। उस ओर प्रभुकी एकबार दृष्टि पड़ी। वे झटपट माताके पास जाकर बोले, "माँ ! इतनी पोटलियाँ क्यों दे रही हो ?" शचीमाताने कहा, "बेटा निमाई ! यह सब कुछ नहीं है। तुमको बडी बहुत अच्छी लगती हैं, इसीलिए भातके साथ खानेके लिए मैंने बाँध दी हैं। और कुछ मूँगकी दालका प्रबन्ध किया है। सोना मूंगकी दाल तुमको बहुत पसन्द है। और थोड़ी आमकी खटाई बाँध दी है, तुम्हारे खानेसे मुझे बड़ा सुख मिलेगा।" प्रभुने माँकी बात सुनकर मुस्कराते हुए कहा, "माँ ! तुम्हारे स्नेह और प्यारका ऋण मैं इस जन्ममें कदापि चुका न सकूँगा।"

इतना कहकर वे श्रीवास पण्डितके पास जाकर बोले, "पण्डित ! आप मेरी माताके ऊपर विशेष ध्यान रक्खेंगे। आपके ऊपर मेरे घरकी देखभालका भार रहा।" श्रीअद्वैत प्रभुसे कहा, "आचार्य ठाकुर आप नवद्वीप छोड़कर शान्तिपुर नहीं जायेंगे। यदि आप नवद्वीपमें रहते हैं तो मेरी माताको किसी बातकी चिन्ता न रहेगी।" प्रभुने अपने श्वसुर महाशयसे कहा, "आप नित्य आकर मेरी माताका समाचार लेते रहिएगा।"

इतना कहकर प्रभु सबसे यथायोग्य प्रणाम, नमस्कार, वन्दना करके पुनः माताके पास अन्तिम बिदाके लिए चले। शचीमाता मङ्गलघट स्थापन करके देव मन्दिरके द्वारपर पुत्रवधूको साथ लेकर बैठी थीं। उनके दोनों नेत्र जलसे भरे थे। बड़े कष्टसे आँखोंके आँसू सम्हाल रही हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी घूंघट काढ़े सासके निकट सिर झुकाकर बैठी हुई दक्षिण हाथकी अंगुलियोंके नखसे मृत्तिका खोद रही थीं। उनके दोनों नेत्रोंसे अश्रुधार प्रवाहित हो रही थी। परन्तु उसे कोई देख नहीं पा रहा था।

प्रभुने वहाँ जाकर गृहदेवताको अष्टाङ्ग प्रणाम करके निर्माल्य ग्रहण किया। माताको सात बार प्रदक्षिणा करके दण्डवत प्रणाम करके उनकी पदधूलि मस्तक पर धारण की। शचीमाताने 'दीर्घजीवी हो' कहकर आशीर्वाद दिया। और कोई बात उनके मुँहसे न निकली। प्रभु भी कोई बात न कह सके। दोनों ही मनके आवेगमें कुछ देर तक निस्तब्ध रहे।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्राणवल्लभको देखकर सासके पाससे हटकर द्वार-देशमें एक किनारे खड़ी हैं। उनके दोनों नेत्र इस समय अवनत नहीं है। उनके अत्यन्त सुन्दर गुलावी चेहरे पर दोनों कमल-नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बहकर वक्षः-स्थलके बस्त्राञ्चलको सिक्त कर रही है। उनकी दृष्टि अपने प्राणवल्लभके अङ्ग-

प्रत्यङ्ग पर पड़ रही है। प्रभु माताके सामने खड़े हैं। उनकी दृष्टि माताके चरणोंके ऊपर है। देवीकी दृष्टि प्रभुके चरण-कमल पर है। जब प्रभु माताके पाससे विदा होकर घरसे बाहर निकले, उसी समय उनकी सतर्क दृष्टि एकबार गृह-द्वारपर चित्र-पुत्तलिकाके समान स्थित प्रियतमाके रोरुद्यमान मुखमण्डल पर पड़ी। ठीक उसी समय एक घोर मर्मयातना-व्यञ्जक आर्तिपूर्ण कण्ठरव प्रभुके कर्ण-कुहरमें एक साथ प्रविष्ट हुआ। वे स्तम्भित होकर रुक गये। परन्तु पुनः तत्क्षण श्रीभगवानने सारी धैर्यशक्ति एकत्रित करके "श्रीहरि, श्रीहरि" बोलते हुए शुभ विदेशयात्रा प्रारम्भ की। जाते समय आँगनमें श्रीतुलसी देवीको प्रणाम किया।

शचीमाता जहाँ बैठी थीं, वहाँ ही बैठी रह गयीं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने उसी घरमें भूमि शैय्या ग्रहण की। शचीमाता गृहके प्राङ्गणसे जहाँ तक पुत्रको देख सकती थीं, सतृष्ण नेत्रोंसे उनको देखने लगीं। निमाईचाँद जब आँखसे ओझल हो गये, तो वृद्धा हृदय बाँधकर घरमें भूमिपर पड़ी पुत्रवधूके पास आकर बैठ गयीं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी चुपचाप रुदन कर रही थीं। सासको अपने पास देखकर वे संभल कर उठ बैठीं। दोनों जनी मिलकर कुछ देर तक चुपचाप रोती रहीं। सास और बहूको सान्त्वना देनेके लिए सीतादेवी, मालिनीदेवी आदि पड़ोसिन आत्मीयजन आयी हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी प्रिय सखी चित्रलेखा आकर सखीके पास बैठी हैं।

नवम अध्याय

श्रीमतीलक्ष्मीप्रिया देवीका विरह

●

प्रभु गियाछेन हैते नाहिक भोजन।
निरवधि करे देवी आइर सेवन॥

जबसे प्रभु गये हैं देवीका भोजन छूट गया और वे निरन्तर शचीमाताकी सेवा करती हैं।

नामेते से अन्न मात्र परिग्रह करे।
ईश्वर-विच्छेदे बड़ दुःखिता अन्तरे॥

वे केवल नाम मात्र अन्न ग्रहण करती हैं और ईश्वर (प्रभु) के विच्छेदसे अन्तरमें बड़ी दुखी रहती हैं।

एकेश्वर सर्व्वरात्रि करेन क्रन्दन।
चित्ते स्वास्थ्य लक्ष्मी ना पायेन कोन क्षण॥
(श्रीचैतन्य भागवत)

अकेली सारी रात क्रन्दन करती रहती हैं और किसी क्षण भी लक्ष्मी देवी चित्तको स्वस्थ नहीं कर पातीं।

श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीका विरह

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने अपने प्राणवल्लभके परदेश-गमनके दिनसे आहार निद्राका त्याग कर दिया है। नाम मात्रके लिए भोजन करने बैठती हैं। वह भी शचीमाताके नितान्त अनुरोधसे। शचीमाता विषम विपदमें पड़ गयी हैं। पुत्रवधूकी अवस्था देखकर वे अपना दुःख भूल गयी हैं, वे पुत्रवधूको बहुत समझाती हैं। बहुत आशाकी बातें करती हैं, अनेक पौराणिक कथाएँ सुनाकर उनके पति-विरहसे जर्जरित हृदयको शान्त करनेकी चेष्टा करती हैं। परन्तु कुछ भी कारगर नहीं होता। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी किसी बातका उत्तर नहीं देतीं, परन्तु सारे गृहकर्म जैसे करती थीं, वैसे ही कर रही हैं। आहार नहीं करतीं, रातको सोती नहीं, परन्तु फिर भी गृहकर्ममें कोई त्रुटि नहीं होती। सासकी सेवामें कोई कमी नहीं आती। श्री चैतन्य भागवतमें लिखा है—

"निरवधि करे देवी आइर सेवन।"

उनके प्राणवल्लभका आदेश माताकी सेवा करनेका है। उसका पालन वे प्राणपणसे कर रही हैं। प्राण चले जायें इसकी देवीको परवा नहीं है। परन्तु सासकी सेवामें वे किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं होने देतीं। वे दिन भर गृहकर्ममें लगी रहती हैं। रातमें सासके सो जानेपर देवी अजस्त्र आँसू बहाती हैं।

"एकेश्वर सर्व्वरात्रि करेन क्रन्दन।"

शचीमाता इसे जान नहीं पातीं। शचीमाताके सामने वे नहीं रोती हैं। क्योंकि इससे सासके मनमें दुःख होगा। साससे लुकछिपकर एकान्तमें बैठकर देवी पति-विरहके दुःखसे नेत्रोंके जलसे धरातलको सिक्त करती हैं। यह किसीको विदित नहीं होने पाता। इसे केवल उनकी प्रियसखी चित्रलेखा जानती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने सखीको विशेषरूपसे मना कर दिया है कि यह बात सासके कानोंमें न जाने पावे।

शचीमाता सोचती हैं कि पुत्रवधू जब अपनी सखी चित्रलेखाके साथ रहती है तो भली चङ्गी रहती है। यह सोचकर वे दिनमें दसबार चित्रलेखाके घर जाकर उनको बुलाकर पुत्रवधूके पास बैठनेके लिए कहती हैं। वृद्धा नहीं जानती कि उनकी पुत्रवधूका पति-विरह-दुःख-समुद्र सखीको देखतेही दूना उमड़ पड़ता है। मनके अनुसार आदमी मिलने पर ही मनकी बात बोलनेकी इच्छा होती है। और मनकी बात बोलनेसे उनका दुःख-सागर एक बारगी उमड़ उठता है।

शचीमाता पुत्रवधूके पास चित्रलेखाको रखकर कभी-कभी इस घरसे उस घर घूमने जाती हैं। उनका विश्वास है कि पुत्रवधू चित्रलेखासे मनकी बातें करेगी तो उसका दुःख कुछ हलका होगा। वे नहीं जानती हैं कि दुःखकी बात उठने पर दुःख बढ़ जाता है। विरहकी बात उठाने पर विरह ज्वाला दूनी बढ़ जाती है।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी जिस अवस्थामें पड़ी हैं, ऐसी अवस्थामें शचीमाता कभी पड़ी नहीं हैं। शचीमाताका दुःख एक प्रकारका है, श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीका दुःख दूसरे प्रकारका। पुत्र-वत्सला जननीके लिए पुत्र-विरह-दुःख अतिशय कष्टदायक होता है, इसमें सन्देह नहीं। परन्तु पतिप्राणा साध्वी रमणीका पति-विरह-दुःख तदपेक्षा बढ़कर जान पड़ता है। इस दुःखके मर्मको जिन्होंने भोगा है वे ही जानती हैं। भुक्तभोगीके सिवा और कोई इसे जान नहीं सकता।

देवीकी दिनचर्या

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अपने प्राणवल्लभके आदेश और उपदेशका प्राण-पणसे ठीक-ठीक पालन कर रही हैं। उनका सर्व प्रधान कर्म है वृद्धा सासकी सेवा करना। उसके साथ-साथ पतिदेवताका चरण-चिन्तन करना।

शाशुड़ीर सेवा वै आन नाहि मने।
गौराङ्ग चरण ध्यान करे रात्रिदिने॥
(ज० चै० मं०)

प्रभु उनको प्रसादीके रूपमें यज्ञसूत्र दे गये हैं। देवी उसको माला, चन्दन, पाद्य, अर्घ्य, धूप, दीप आदिके द्वारा विधिपूर्वक नित्य पूजती हैं।

गौराङ्गेर पैता पूजा माल्य चन्दने।
पाद्य अर्घ्य धूप दीप विविध विधाने॥
(ज० चै० मं०)

प्रभुकी आज्ञा एक लाख हरिनाम महामन्त्र जप-करनेकी है। श्रीमती लक्ष्मी-प्रिया देवी सासकी सेवा और गृह कार्य करके भी एक लाख हरिनाम जपनेका समय निकाल लेती हैं। प्राणवल्लभ घरमें नहीं हैं, परदेश गये हैं, उनकी सेवासे देवी वञ्चित हो गयी हैं। उनके पास इस समय समयकी कमी नहीं। जिस समय देवी प्रभुकी सेवा करती थीं, उसी समय वे एक लाख हरिनाम जप करके प्रभुका आदेश पालन करती हैं। तीनों सन्ध्याके समय प्राणवल्लभके श्रीचरणोंके उद्देश्यसे दण्डवत प्रणाम करती हैं।

हरिनाम नित्य लयेन एक लाख बार।
तीन सन्ध्या गौराङ्ग चरणे नमस्कार॥
(ज० चै० मं०)

प्रभुका एक और आदेश था कि उनकी चरणधूलिके द्वारा ललाटमें तिलक करके जप करना। देवीने प्राणवल्लभकी चरण-धूलि लेकर सम्पुटमें भर रखी है। ब्रह्मादि देवताओंके द्वारा अभिवाञ्छित प्रभुकी उस श्रीचरण-धूलिके द्वारा तिलक लगाकर देवी दर्पणमें मुँह देखती हैं और मनही मन सोचती हैं कि "इसकी अपेक्षा अधिक मूल्यवान् अलङ्कार नारी जातिके लिए और क्या हो सकता है? भगवान करे कि जन्म-जन्मान्तर पतिकी पद-धूलिके द्वारा रचित तिलकसे मेरे अङ्ग अलंकृत रहें। इससे बढ़कर वाञ्छनीय और प्रलोभनीय अलङ्कार स्त्रीजातिके लिए और क्या हो सकता है?"

प्रभुकी दो काष्ठ-पादुकाएँ लेकर देवीने अत्यन्त यत्नपूर्वक रखी हैं। इनकी भी वे नित्य पूजा करती हैं। प्राणवल्लभको देखे बिना जैसे देवीके प्राण छटपटाते थे, अब उनकी चरण-पादुकाको देखे बिना मानो देवीका हृदय विदीर्ण होने लगता है, प्राण व्याकुल हो उठते हैं।

प्रभुर चरण धूलि तिलक ललाटे।
दुगाछि पादुका ना देखिले प्राण फाटे॥
(ज० चै० मं०)

प्रभुने संन्यास लेनेके बाद अपनी द्वितीया गृहिणी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको काष्ठ-पादुका देकर कहा था, "इसके द्वारा मेरा-विरह-जनित दुःख तुम्हारा दूर हो

जायेगा।" श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको भी इसी हेतु उन्होंने अपनी पादुका प्रदान कर कृतार्थ किया था। देवी उसको वक्ष:स्थलमें धारण करके पति-विरह-ज्वालासे जर्जरित सन्तप्त हृदयको शीतल करती थीं।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी एक और कार्य करती थीं। वे अपने हाथसे प्राण-वल्लभकी प्रतिकृति चित्रण करके उसे वस्त्राभूषणसे सुसज्जित करके प्रभुका रूप दर्शन करके अपने प्राणको जुड़ाती थीं। पति-विरहके दुःखको शमन करनेके जो-जो उपाय हैं, वे उन सब उपायोंको करती थीं।

गौराङ्ग - विग्रह - चित्र काठनेते लिखि।
हरिद्रा वसन करि नित्य रूप देखि॥
(ज० चै० मं०)

इस प्रकार पतिप्राणा पति-विरह-विधुरा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी नाना प्रकारके उपायोंसे प्राण-वल्लभका चरण-स्मरण करके दिन काटती थीं। क्षण भरके लिए भी उनके मनसे प्रभुके रूप-ध्यान, गुण-गानकी वासना दूर नहीं होती थी।

देवी और उनकी सखी चित्रलेखा

उनकी प्रियसखी चित्रलेखा प्रतिदिन आकर उनके पास बैठती थीं। दोनों सखियाँ मिलकर प्रभुका गुण-गान करती थीं। चित्रलेखा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मधुर स्वभावसे विशेष परिचित थीं। वे बिल्कुल ही रस-रङ्ग-प्रिय न थीं। गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीगौराङ्गके रूप-गुणका वर्णन और श्रवण करके ही अपनेको गर्विणी समझती थीं। सखी चित्रलेखा जब उनके पास आती थीं, तब "पण्डित ठाकुर" की बात छोड़कर और कोई बात ही नहीं करती थीं। "पण्डित ठाकुर" श्रीगौराङ्ग उनकी भी साधनाके धन हैं। गौरविरह-वाणसे सखीके समान वे भी जर्जरित हैं। चित्रलेखा सखीके साथ रात्रिमें प्रभुके घर शयन करती थीं।

एक दिन रातके अवसानमें श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी एकान्तमें बैठकर अपने शयन-गृहमें **सखी चित्रलेखाके** साथ प्राणवल्लभके विरहकी कथा कहते-कहते रोकर कहने **लगीं, "सखी!** और कितने दिनोंमें मेरी यह दुर्जय पति-विरह-ज्वाला दूर होगी? एक-एक करके चार महीने बीत गये। प्राणवल्लभ तो घर लौटे नहीं? एक-एक दिन मेरे लिए एक-एक युग जैसा लग रहा है। जान पड़ता है अब प्राण-वल्लभसे फिर मेरी भेंट न होगी। जान पड़ता है कि उनके चरणोंका दर्शन इस अभागिनीके भाग्यमें बदा नहीं।"

इतना कहकर देवी अपनी सखीकी गोदमें मुँह छिपाकर फूट-फूटकर रोने लगीं। ठाकुर जयानन्द अपने श्रीचैतन्य मङ्गलमें लिखते हैं —

आर एक दिन ठाकुरानी रजनी अवशेषे ।
कान्दिया सखीरे सब कहिला विशेषे ।।
कत दिने सम्पात घूचिब चित्रलेखा ।
आमार ठाकुर सने ना हइल देखा ।।

चित्रलेखा भी देवीके गले लिपटकर रोने लगीं। सखीको कैसे समझावें, क्या कहनेसे सखीका यह दुर्जय विरह-सन्ताप दूर होगा--यह सोचकर वे व्याकुल हो उठीं। अति कष्ट पूर्वक अदम्य हृदयावेगको रोककर चित्रलेखाने सखीसे कहा, "सखी ! तुम रोओ मत। मैं प्रायः पण्डित ठाकुरको स्वप्नमें देखती हूँ। मैं प्रायः स्वप्नमें उनकी मधुर कण्ठध्वनि सुन पाती हूँ।" मानो वे कहते हैं "मैं अति शीघ्र घर लौट रहा हूँ।" मेरे इस स्वप्नको मिथ्या न मानना। वे अति शीघ्र परदेशसे घर लौटेंगे। उनके आते ही तुम्हारे सब दुःख दूर हो जायेंगे।"

चित्रलेखा सखी बले शुन ठाकुरानी।
निकटे आसिब ठाकुर कहेन प्राय शुनि ।।
स्वप्न मिथ्या मने किछु ना करिह आर।
ठाकुर आसिव दुःख घूचिब तोमार ।।

(ज० चै० मं०)

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको इस दुःखके मध्य भी सखीका स्वप्न-वृत्तान्त सुनकर मनमें क्षणिक आनन्दका उद्रेक हुआ। घन घटाच्छन्न अन्धकारमय गगनमें विद्युल्लताके प्रकाशके समान उस आनन्दके लेशकी प्राप्तिसे देवीके मलिन और शुष्क मुख मण्डल पर एक बार हास्यकी रेखा दीख पड़ी, उन्होंने मुस्करा कर एक लम्बी साँस ली।

"ईषत् हासिया लक्ष्मी छाड़िल निःश्वास।"

देवीके इस हास्यका मर्म था। इतने दुःखके बीच मुँह पर हँसी आ ही नहीं सकती। यह अस्वाभाविक है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सखीकी बात पर क्यों मुस्कराईं ? चित्रलेखाके स्वप्नकी बात सुनकर उनको हँसी आयी।

चित्रलेखाने कहा, उन्होंने स्वप्नमें प्रभुको देखा, प्रभुने स्वप्नमें उनके साथ बातें कीं। चित्रलेखा सुन्दरी हैं। चित्रलेखा युवती हैं, वे नदियानागरी भावमें विभावित होकर यह बात प्रियसखीसे कह रही हैं। सखीके पास ये सब बातें बोलनेमें लज्जा ही क्या है ? चित्रलेखा प्रेमानन्दमें विभोर होकर भूल रही हैं कि उनकी सखी श्रीगौराङ्गगृहिणी हैं, गौरवक्षः-विलासिनी हैं। सखी चित्रलेखाकी सरल और निष्कपट गौर-प्रेमकी बात सुनकर श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको हँसी आयी। परन्तु वह हँसी प्रकाशित न हो सकी। उनकी मुँहकी हँसी मुँहमें ही छिपी रह गयी।

उन्होंने एक लम्बी साँस ली। इससे चित्रलेखाके सन्तप्त प्राण कुछ शीतल हुए। चित्रलेखाने सखीके मनोभावको समझकर गौर-कथाका प्रसङ्ग छेड़ दिया। दोनों ही गौर-कथाकी तरङ्गोंमें डूबने लगीं। चित्रलेखाने कहा, "सखी ! पण्डित ठाकुरके लिए सारी नदियाके लोग व्याकुल हैं। जिसको देखती हूँ, राह-घाटमें केवल उनकी ही चर्चा करता है। पण्डित ठाकुरका गुणगान किये बिना वे जल-ग्रहण नहीं करते। सभी उनका आशापथ देख-देखकर जीवन धारण कर रहे हैं। यदि पण्डित ठाकुर कुछ और दिन परदेशमें रहे तो वे सब जीवित न रहेंगे।"

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने चुपचाप सखीकी सारी बातें सुनकर एक और लम्बी साँस छोड़ी। और अत्यन्त कष्ट पूर्वक रोते-रोते उत्तर दिया, "सखि ! मरने पर क्या प्राणवल्लभ मिलेंगे ?" वे और कोई बात बोल न सकीं।

माताकी चिन्ता और बहूकी चिकित्सा

अल्पाहारसे, अनिद्रासे, विषम उत्कण्ठासे देवी क्षीण हो गई हैं। उनका वर्ण कच्चे सोने जैसा अब नहीं रह गया है, वह अङ्गकी सर्वाङ्ग सौष्ठव दिव्य कान्ति अब नहीं रही। अति कष्टपूर्वक वे प्राणपणसे सासकी सेवा परिचर्या करती हैं। परन्तु उनके मुँहसे बात नहीं निकलती। शचीमाता पुत्रवधूके मलिन मुखकी ओर देख नहीं सकतीं। केवल "हाय-हाय" करती हैं। प्राणोंसे भी प्रियतमा स्वर्ण कमल सी बहूके म्लान मुखको देखते ही उनका पुत्र-विरह-दुःख-सागर उमड़ उठता है। वे मनके दुःखको मनहीमें दबाकर पुत्रवधूकी व्याधिकी चिकित्साके लिये व्याकुल चित्त होकर सबसे पूछताछ करती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी क्षीण होती जा रही हैं, उनका वर्ण मलिन होता जा रहा है, आहारकी आकांक्षा नहीं है। मुखमण्डल पाण्डुवर्ण धारण कर रहा है।

पुत्रवधूको कौनसी विषम-व्याधि हो गई, यह समझ न सकनेके कारण शची-माताने एक दिन वैद्यराज श्रीपाद मुरारी गुप्तको बुलाकर पूछा, "बेटा मुरारी ! मेरी बहूको कौन रोग हो गया है, मेरी सोनेकी बछिया दिन-दिन गलती जा रही है। कुछ खाती नहीं, सदा चिन्ता ग्रस्त रहती है। तुम एकबार उसकी नाड़ी देखकर औषधिकी व्यवस्था करो। मेरा निमाई परदेशमें है। वह तुम लोगोंके ऊपर सब भार दे गया है।

वैद्यराज श्रीगौराङ्ग प्रभुके अन्तरङ्ग भक्त और निज जन थे। गौर वक्ष-विलासिनीकी व्याधि समझनेमें उनको कुछ देर न लगी। उन्होंने शचीमाताको प्रणाम करके कहा, "ना, वह कुछ भी नहीं है। पित्तदोष हो गया है, मैं औषधि दूंगा। खानेसे शीघ्र आरोग्य होगा।"

शचीमाता उनको पकड़कर घरके भीतर ले आयीं और पुत्रवधूको दिखलाया। श्रीपाद मुरारीगुप्तने दूरसे ही गौरवक्ष-विलासिनीको मन ही मन कोटि-कोटि प्रणाम किया, उनके श्रीअङ्गको स्पर्श नहीं किया और शचीमातासे बोले, "माँ! मैंने देखते ही रोगको समझ लिया है। औषधिकी व्यवस्था आज ही करूँगा। आप चिन्ता न करें। आपकी पुत्रवधू शीघ्र ही निरोग हो जायेंगी।"

शचीमाताने वैद्यराजका हाथ पकड़कर स्नेहपूर्वक कातर वचनोंसे कहा, "बेटा मुरारी! तुम जो अच्छा समझो, वही करो। मैं तो बहूके रोगकी बात कुछ भी समझ नहीं पाती। वह कुछ बोलती भी नहीं। निमाईके परदेश जानेके बादसे ही मेरी बहूको यह रोग हो गया है। निमाईके घर आनेका समय हो गया है, और मेरी बहूकी दशा तो देखो! सब मेरा दुर्भाग्य है।"

श्रीपाद मुरारीगुप्तने "कुछ भय की बात नहीं है"। कहकर वहाँसे द्रुत वेगसे प्रस्थान किया। शचीमाता उनके मुँहका भाव न देख सकीं। वैद्यराजको गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी ऐसी अवस्था देखकर मर्मान्तक क्लेश हुआ। परन्तु यह बात कहनेकी नहीं थी। दारुण मन:कष्टसे वे देवीकी ओर ताक न सके और वहाँसे भागकर रास्तेमें खड़े होकर जी भरकर रोये। गौर-गृहिणीको क्या रोग है, इसे उन्होंने खूब समझ लिया। और यह भी उनकी समझमें आ गया कि इस यात्रा, इस विषम-पति-विरह व्याधिसे अब परित्राण नहीं है। यह सोचकर वैद्यराजके मनमें बड़ी अशान्ति पैदा हो गयी है, उनके प्राण व्याकुल हो गये हैं।

औषधि व्यवस्था

वैद्यराजने घर जाकर अपनी गृहिणी और वृद्धा माताको मनकी बात खोलकर कह दी, और उनसे विशेष अनुरोध किया कि प्रतिदिन दोनों बेला शचीमाताके घर जाकर गौर-विरहिणी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके पास बैठकर गौर-कथा और गौर-गुणगान करो। इस व्याधिकी इससे बढ़कर दूसरी कोई औषधि नहीं है—वैद्यराज इसे खूब समझते थे, परन्तु शचीमाताकी मनस्तुष्टिके लिए स्वयं जाकर उनके हाथमें उनकी बहूके लिए कुछ औषधि देकर कहा, "माँ! इस औषधिका अनुपान नारायणकी चरण-तुलसी है। प्रतिदिन दोनों बेला एक-एक वटिका तुलसीके साथ सेवन करें।" शचीमाता इसका कुछ भी अर्थ समझ न सकीं। वे सरल भावसे इसका सरल अर्थ ग्रहण करके बहूको नियमपूर्वक औषधि सेवन कराने लगीं। पहले श्रीमतीने औषधि सेवन करनेमें असहमति प्रकट की। तत्पश्चात् जब उन्होंने सुना कि इसका अनुपान नारायणकी चरण-तुलसी है, तो फिर कुछ न बोलीं।

शचीमाता अब बड़ी विपदमें पड़ गयी हैं। वे पुत्रवधूकी अवस्था देखकर व्याकुल हो गयीं। अब वे बीच-बीचमें उच्च स्वरसे करुण क्रन्दन कर उठती हैं।

उनके कातर-क्रन्दनसे नदियाके पशु-पक्षी तक विचलित हो उठे हैं। मालिनी देवी सर्वदा शचीमाताको समझाती बुझाती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सासकी ऐसी अवस्था देखकर जहाँ तक हो सकता है प्रफुल्लचित्तसे उनकी सेवा करती हैं। परन्तु उनका शरीर अब काम नहीं करता। उनको उठने बैठनेमें कष्ट होता है। श्रीगौराङ्ग-विरह-दुःख-राशिको सहन करके स्थिर रहना सहज बात नहीं है। जगत विख्यात पण्डित, सर्वशास्त्र-विशारद वृद्ध ब्राह्मण श्रीवासुदेव सार्वभौम भट्टाचार्यने श्रीगौराङ्ग-विरह-वाणसे जर्जरित होकर नीलाचलमें बैठकर एक दिन प्रभुसे कहा था—

शिरे वज्र पड़े यदि पुत्र मरि जाय।
ताहा सहि तोमार विच्छेद सहन ना हय।।
(चै० च०)

सिर पर वज्र गिर पड़े अथवा पुत्र मर जाय तो उसका विरह तो सहा जा सकता है, परन्तु तुम्हारा विछोह सहन नहीं हो सकता।

यह बात उस समय की है जब प्रभुने नीलाचलसे दक्षिण देशकी यात्राकी थी। जब तत्वदर्शी, शास्त्रज्ञान-सम्पन्न वृद्ध ब्राह्मण सार्वभौम भट्टाचार्यकी यह दशा है तो अबोधिनी सरला बाला श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके विषयमें तो फिर कहना ही क्या ?

प्रभुके अन्तरङ्ग भक्त वासुघोषके भ्राता गोविंद घोषने अपने एक प्राचीन पदमें लिखा है —

गौरा गेल पूर्व्व देश, निज जन पाइ क्लेश,
विलापये कत परकार।

गौरचन्द्रके पूर्वदेश चले जानेसे उनके निज जन क्लेश पा रहे हैं और नाना प्रकारसे विलाप कर रहे हैं।

काँदे देवी लक्ष्मीप्रिया, शुनिते विदरे हिया,
दिवसे मानये अन्धकार।।

देवी लक्ष्मीप्रिया क्रन्दन करती हैं जिसको सुनकर हृदय फटता है और दिन भी अन्धकारमय प्रतीत होता है।

हरि ! हरि ! गौराङ्ग-विच्छेद नाहि सहे।

हरि ! हरि !! गौरचन्द्रका विछोह सहा नहीं जाता।

पुनः सेह गोरा मुख, देखिये घूचिबे दुख,
एखन पराण यदि रहे।।

यदि प्राण बच रहे तो पुनः गौरचन्द्रका मुख देखने पर यह दुःख दूर हो जायेगा।

"**एखन पराण यदि रहे**" यही बात सब सिद्धान्तोंका सार है। यही गौराङ्ग-विरह-व्याधिका मूलमन्त्र है। इस मूलमन्त्रके रहस्यका उद्घाटन करनेके लिये एक पृथक् ग्रन्थ-प्रणयनकी आवश्यकता है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके सम्बन्धमें वैद्यराज श्रीपाद मुरारि गुप्तने इस मन्त्रका विचार करके ही औषधिकी व्यवस्थाकी है। कविराजजी शास्त्रके भीतर भी भक्ति तत्व है। अच्छा वैद्य होने पर ही यह समझमें

आता है। श्रीपाद मुरारी गुप्त वैद्यराज हैं। उन्होंने अवस्थाको समझ कर ही प्रकृत औषधिकी व्यवस्था की है।

पदकर्त्ता गोविन्दघोषके पदका शेषांश श्रवण कीजिए —

शचीर करुणा शुनि, काँदये अखिल प्राणी,
मालिनी प्रबोध करे ताय।

शचीमाताका करुण रुदन सुनकर सब प्राणी रो रहे हैं। मालिनी उनको सान्त्वना देती हैं।

नदीया-नागरीगण, काँदे तारा अनुक्षण,
वसन भूषण नाँहि भाय॥

नदिया नगरकी स्त्रियाँ (उनका रुदन देखकर) निरन्तर अश्रु बहाती रहती हैं और उन्हें वस्त्र एवं अलङ्कार नहीं भाते।

वे परस्पर चर्चा करती हैं —

सुरधुनि तीरे जाइते, देखिब गौराङ्ग पथे,
कत दिने हबे शुभ दिन।

गङ्गा तट पर जाते समय मार्गमें गौराङ्गको देखेंगी ऐसा शुभ दिन कितने दिनोंमें आवेगा ?

चाँद मुखेर वाणी शुनि, जुड़ाबे तापित प्राणी,
गोविन्द घोषेर देह क्षीण॥

चन्द्र-मुखकी वाणी सुनकर तापित प्राणी शीतल होंगे। गोविन्द घोषकी देह क्षीण हो रही है।

देवीका वर्णनातीत विरह

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका पति-विरह-दुःख वर्णनातीत है। इतने दुःखके ऊपर अब भी उनके मनमें क्षीण दीपालोकके समान प्राणवल्लभके चरण-दर्शनकी आशा जागती रहती है। प्राणवल्लभ आज आवेंगे, कल आवेंगे—करते-करते देवीके दिन कटते हैं। उनको एक दिन कोटि युगके समान जान पड़ता है।

"उद्वेगे दिवस ताँर हैल कोटि युग।"

दिनके बाद दिन बीतता जाता है, सप्ताह के बाद सप्ताह, और मासके बाद मास बीत जाता है, पर उनके प्राणवल्लभ नहीं आते। पूरे छः महीने बीत गये, तथापि प्रभुका दर्शन नहीं हुआ। पतिप्राणा स्वामी-सोहागिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी अवस्था दिन पर दिन शोचनीय होने लगी। अब वे अतिशय कातर हो गयी हैं। विरह दशाकी चरम सीमा पर पहुँच गयी हैं। निरन्तर उनके मनमें प्रभुकी विरह-दशाकी स्फूर्ति लक्षित होती है।

प्रभु ना देखिया लक्ष्मी कातर अन्तर।
प्रभुर विरह दशा स्फुरे निरन्तर।।
(चै० मं०)

प्रभुको न देख पाकर लक्ष्मीप्रिया अन्तरमें कातर होती हैं और प्रभुकी विरह दशा निरन्तर स्फुरती रहती है।

सखी चित्रलेखा दिन-रात देवीके निकट रहती हैं। अब श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके शरीरमें गृहकार्य करनेकी वह शक्ति नहीं रह गयी है। सासकी कुछ-कुछ सेवा बड़ी ही कठिनाईसे करती हैं। क्योंकि यही प्रभुका आदेश है। सारे गृहकार्य चित्रलेखा कर देती हैं। शचीमाता पुत्रवधूका साथ नहीं छोड़तीं। अपने हाथों उनको औषधि सेवन कराती हैं, उत्तम-उत्तम पदार्थ लाकर खानेके लिए देती हैं।

शचीमाताके सङ्ग देवी अब अपने प्राणवल्लभके सम्बन्धमें दो एक बातें करती हैं। जब कोई पास नहीं रहता, सास-बहू एक साथ रहती हैं तो दोनों जनी बैठकर प्रभुके सम्बन्धमें दो एक बातें करती हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी घूंघटमें मुंह छिपाकर सासके साथ स्वामीके सम्बन्धमें बातें करती हैं। पहले वे प्रभुके सम्बन्धमें कोई बात साससे नहीं कहती थीं। अब जब देखा कि कहे बिना काम नहीं चल सकता, तो प्रबल विरहानलकी तरङ्गोंमें देवीकी लज्जाका बाँध टूट गया। उन्होंने एक दिन शचीमाताको अत्यन्त सन्तप्त कर दिया, बहुत रुलाया। उस दिन वे पति-विरहोन्मादमें उन्मादिनीके समान स्वयं दग्ध होती रहीं और सासको भी सन्ताप दिया। प्रभुके घरमें दोनों जनी बैठकर एक भीषण हृदय-विदारक दृश्यकी अवतारणा करने लगीं, सौभाग्यवश किसी दूसरेकी दृष्टि उस पर नहीं पड़ी।

वैसा करुण दृश्य मनुष्य देख भी नहीं सकता। जीवाधम ग्रन्थकारका हृदय पाषाणकी अपेक्षा भी कठोर है, इसीसे वह इस भीषण दुःख-कहानीको भाषामें वर्णन करनेका प्रयास कर रहा है। श्रीगौराङ्ग प्रभुने जीवाधम पाषाण-हृदय इस ग्रन्थकारको इन सब हृदय-विदारक दुःखोंकी कहानी लिखनेके लिए इस जगतमें भेजा है। दुःख ही इसके जीवनका मूल है, दुःखमें ही यह सुखानुभव करता है, दुःखके ही कारण इसने श्रीगौराङ्ग-चरणोंका आश्रय लिया है। बड़े दुःखसे 'हा गौराङ्ग' बोलकर इसने गौरभक्तवृन्दके चरणोंमें शरण ली है। इसी कारण प्रभुने कृपा करके इसको दुःख-वर्णन करनेकी कुछ शक्ति दी है। गौरवक्षःविलासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका दुःख वर्णन करते-करते इसका हृदय फटा जाता है। तथापि कोई मानो केश पकड़ कर विषम ताड़ना देकर यह सब दुःख कहानी मेरे द्वारा लिखा रहा है। वे श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी स्वयं हैं, यह इस जीवाधाम ग्रन्थकारको कुछ-कुछ समझमें आ रहा है। इस बातका आभास मैंने इस ग्रन्थकी सूचनामें दिया है।

देवी और माता

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी और शचीमाता सन्ध्याकालमें घरमें बैठी हैं। शचीमाताके हाथमें जपकी माला है। देवी सासके पास घूँघट काढ़े, मुँह ढँके बैठी हैं। अचानक मुँह उठाकर सासके मुँहकी ओर देखकर उन्होंने रोते-रोते कहा। "माँ! घरके स्वामी घर कब आवेंगे? एक-एक करके छः महीने बीत गये, तब भी उनका दर्शन नहीं हुआ। वे कैसे हैं, यह संवाद भी नहीं मिल सका। माँ! अब मैं धैर्य धारण नहीं कर पा रही हूँ। उनके दोनों चरणोंको एक बार देखनेकी आशामें मैं इतने दिनों तक इस तुच्छ प्राणकी रक्षा करती आ रही हूँ। माँ! इस अभागिनीको क्या उनका दर्शन प्राप्त न होगा?"

इतना कहते-कहते देवी व्याकुल होकर रोती हुई सासके चरणोंमें जा गिरीं। वृद्ध शचीमाताका सिर चकरा गया, हृदयकी अस्थि मानो चूर-चूर हो गयी, उनकी दोनों आँखोंमें अन्धकार दीखने लगा। मुँहसे उनके बात न निकल सकी, आँखें अपलक हो गयीं, जड़वत् स्थावरके समान वे जहाँ बैठी थीं, वहीं स्थिर होकर बैठ गयीं। हाथकी जपमाला भूतल पर जा गिरी। उनके चरणोंमें पति-विरह-कातरा पुत्रवधू छिन्न लतिकाके समान भूमि-विलुण्ठित होकर फूट-फूटकर रो रही है—शचीमाता यह देख रही हैं। पुत्रवधूकी करुण रुदन-ध्वनि उनके कानोंमें प्रवेश कर रही है। परन्तु वे निश्चल-निःस्पन्द भावसे जैसे बैठी थीं ठीक वैसे ही बैठी हैं। इसी प्रकार कुछ क्षण बीत गये।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी तब अपनेको सँभाल कर स्वयं उठ बैठीं। सासके मुँहकी ओर ताक कर उन्होंने जो देखा उसमें उनके मनमें भयका सञ्चार हो उठा। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैंने यह क्या किया? प्राणवल्लभने मुझे अपनी माताकी सेवा करनेका आदेश दिया था। मैं उनका प्राण हरनेके लिए बैठ गयी। धिक्कार है मेरे जीवनको! धिक्कार है मेरी बुद्धिको!" यह सोचकर देवीने झटपट उठ कर देवगृहके कोशाका जल लाकर सासकी आँखों तथा मुखमण्डलपर सिञ्चन किया और उनको पकड़ कर बैठ गयीं।

शीतल जल सिञ्चन करनेसे शचीमाताको चेतना आयी। तब उनको पहलेकी बात याद आयी। अपनी पुत्रवधूकी पूर्वावस्था स्मरण करके और अपनी अवस्थाको देख करके वे मनही मन लज्जित हो उठीं और पुत्रवधूके मुँहकी ओर ताककर कुछ कहने जा रही थीं, पर बोल न सकीं। वृद्धाका क्षीण कण्ठस्वर क्षीणतर हो गया है, शुष्क वदन अधिकतर शुष्क हो गया है। उनके कण्ठ-तालु सूख गये हैं, उनको बड़ी प्यास लग रही है। उन्होंने अस्फुट क्षीण स्वरमें पुत्रवधूसे कहा, "बहू माँ! थोड़ा

जल दो।" श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने झटपट उठकर सासको जल लाकर दिया। शचीमाताने धीरे-धीरे जलपान करके प्यास बुझायी। प्याससे उनके कण्ठ-तालु एकबारगी शुष्क हो गये थे।

सासको कुछ स्वस्थ देखकर श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मनमें कुछ साहस हुआ। तब उन्होंने सासको धीरे-धीरे ले जाकर पार्श्वके घरमें शैया पर सुला दिया। स्वयं शैयाके बगलमें बैठकर उनकी सेवा-सुश्रूषा करने लगीं। बहुत देरके बाद शचीमाता प्रकृतिस्थ हुई। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी इतनी देरके बाद उनसे बातें करने लगीं। उन्होंने अतिशय लज्जित भावसे सासके चरणोंको हाथसे दबाते-दबाते धीरे-धीरे मधुर कातर स्वरसे कहा, 'माँ ! तुमको आज मैंने बड़ा मनःकष्ट प्रदान किया है। मैं बुद्धिहीना हूँ, क्या कहते क्या कह गई हूँ, कुछ समझ नहीं पाती। इससे मुझको कितना पाप लगा ? वे मुझको तुम्हारी सेवा करनेके लिए आदेश दे गए हैं और माँ मैंने आज तुम्हारी अच्छी सेवा की।" इतना कहते-कहते देवीके दोनों कमल नयनोंसे प्रबल वेगसे अश्रुधारा बह चली।

यह देखकर शचीमाता और शयन न कर सकीं। उन्होंने धीरे-धीरे शैयासे उठकर अपने वस्त्रके आँचलसे पुत्रवधूकी दोनों आँखोंके आँसू पोंछते हुए आदरपूर्वक कहा, "बेटी ! मेरी सोनेकी बच्ची ! मेरी बछियाको कितना कर्त्तव्य ज्ञान है ? तुमने तो मेरी सेवामें कोई त्रुटि नहीं की है। तुम जिस प्रकार मेरी सेवा करती हो, कोई मनुष्य वैसी सेवा नहीं कर सकता। मेरा निमाई घर आवे, मैं उससे तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करूंगी। बेटी ! तुम किस दुःखसे रोती हो ? मेरा निमाई परदेश गया है, अब उसके घर लौटनेका समय आ गया है। लक्ष्मी बेटी ! सोनेकी बहू ! रोना चाहिये क्या ? एक तो तुम्हारा शरीर अस्वस्थ है, रोना-पीटना करोगी तो मैं तुम्हें बचा न सकूंगी। मुरारीने ठीक कहा है, यही तुम्हारा रोग है।"

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी सासकी बात सुनकर कथञ्चित शान्त हुईं। उन्होंने साहस करके अपना हृदय बाँधा। सासके साथ जो बातें हुई थीं, वे सब भूल गयीं। प्राणवल्लभ अति शीघ्र घर आवेंगे, यह सुनकर आनन्द-विह्वल हो उठीं। उन्होंने मन ही मन सोचा, "यदि कभी मुझे प्राणवल्लभके दर्शन मिले तो अपनी इस निर्लज्जताकी बात तथा सास ठाकुरानीकी आजकी अवस्था उनसे सबसे पहले कहूँगी।" देवीके मनकी बात मनमें ही रह गयी। प्राकृत देहसे प्रभुसे यह मनकी बात कहनेका सुयोग न मिला, परन्तु सर्वज्ञ, साथ ही अन्तर्यामी गौर भगवानके जाननेसे कुछ भी बाकी न रहा।

शचीमाँका स्वप्न

उस दिन रातमें शचीमाताने स्वप्न देखा कि, "उनका निमाई घर आ गया है, बहुत द्रव्य-सामग्री ले आया है। साथमें बहुतसे लोग हैं, परन्तु घरमें बहूको नहीं देख पा रही हैं। 'बहू माँ, बहू माँ' कहकर उन्होंने सारे घरको खोज डाला, चिल्ला-चिल्लाकर उनको पुकार रही हैं, 'निमाई आया है, निमाई आया है' कहकर उच्च-स्वरसे पुकारती हैं, परन्तु कहीं बहूको देख नहीं पा रही हैं। बहूको न देखकर वे पुत्रके सामने अजस्त्र आँसू बहाते हुए रो रही हैं।"

शचीमाता स्वप्न देखकर चौंक पड़ीं। स्वप्नका वृत्तान्त किसीसे नहीं कहा। परन्तु उस दिनसे ही वे अत्यन्त अन्यमनस्क रहने लगीं।



दशम अध्याय

प्रभु परदेशमें



श्रीगौराङ्ग देखिया जत वङ्गदेशी लोक ।
युवती युवक सभार नाइ रोग शोक ।।

श्रीगौराङ्गको देखकर जितने वङ्ग देशके युवती युवक लोग थे सभीको रोग शोक नहीं रह गया ।

निरवधि कीर्त्तन आनन्दमय वङ्ग ।
गौरचन्द्र बिने कारो नाहि परसङ्ग ।।
(ज० चै० मं०)

सारा वङ्गदेश आनन्दमय हो गया और निरन्तर कीर्तनमें रत रहने लगा। कहीं भी गौरभगवानको छोड़कर और कोई प्रसङ्ग नहीं रहा

प्रस्थानके समय प्रभुका मनोभाव

प्रभुने जिस समय नदिया छोड़कर परदेशकी यात्राकी, उस समय उनके मनमें कोई अधिक कष्ट न हुआ । वे परदेश जायेंगे, नाना प्रकारके देश देखेंगे, अनेकों मनुष्योंके साथ परिचय होगा—यह सोचकर उन्होंने हँसते-हँसते परदेश-यात्रा की थी । ठाकुर लोचनदासने लिखा है—

माये जत बैले किछु ना शुनिल पँहू ।
शुभयात्रा करि जाय हासे लहु लहु ।।

माताने जो कुछ कहा उस पर प्रभुने कान न दिया । उन्होंने मन्द-मन्द मुस्कानके साथ शुभ यात्रा पर प्रयाण किया ।

यह भाव प्रभुके यौवन-सुलभ चापल्यका द्योतक है। सुन्दरी युवती पतिप्राणा प्रियतमा भार्याको घरमें रख कर वे परदेश जा रहे हैं, इससे उनके मनमें कष्ट नहीं है—यह बात मैं नहीं कह सकता । वे घर बोला-पुत्र हैं, माताके दुलार और प्यारमें सदा पोसे गये हैं, वे शचीके दुलारे हैं, स्नेहमयी वृद्धा माताको छोड़कर

परदेश जा रहे हैं, उनके मनमें कष्ट नहीं है—यह बात कौन कह सकता है ? तथापि वे जो मन्द-मन्द मुस्कराते हैं, इसका कुछ मर्म है। श्रीभगवान सदाके रंगीले हैं। रंगीले प्रभु हमारे जगत-संसारका रङ्ग देखकर हँस रहे हैं। संसारी जीव किस प्रकार मायाबद्ध है, वे क्यों नहीं मायाका बन्धन काट रहे हैं। स्त्री-पुत्र, माता-पिता, परिवार कोई किसीका नहीं है—यह बात ध्रुव सत्य है, परन्तु इनका प्रेम-बन्धन बड़ा ही कठिन है। सांसारिक जीवके लिये इस सुदृढ़ मायाकी शृंखलाको तोड़कर श्रीभगवानके चरणोंका आश्रय लेना कितना कठिन कार्य है ?—यही सोचकर श्रीगौरभगवान मन्द-मन्द मुस्कराये थे। वे नर शरीर धारण करके सांसारिक गृहस्थ बने हैं—इसी रङ्गको देखनेके लिए।

श्रीगौराङ्ग प्रचारित धर्म

सांसारिक, मायाबद्ध, विषयाकृष्ट कलिके जीवोंका उद्धार किस प्रकार होगा, इसका उपाय निर्धारित करनेके लिए ही शचीनन्दनका नदियामें गृहस्थरूपमें आविर्भाव हुआ है। इन सारे हाहाकारोंको अपनी आँखोंसे देखकर कलिग्रस्त जीवोंके उद्धारके लिये वे स्वयं जिस धर्मका प्रचार कर गये हैं, उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट धर्म संसारमें दूसरा कोई नहीं है। स्वयं भगवान श्रीश्रीगौरचन्द्र अपने सृष्ट जीवोंकी दुर्गति अपनी आँखों देखकर भव-व्याधिकी जो सर्वोत्कृष्ट औषधि निर्माण करके रख गये है, भव-व्याधि-ग्रस्त कलिहत जीवोंके लिए उससे बढ़कर उत्तम औषधि जगतमें और कोई नहीं है।

श्रीगौरभगवान स्वयं नाना कारणोंसे अविशुद्ध और कालवश विकृत तात्कालिक प्रचलित धर्मको अपने हाथों संशोधन और परिष्कृत करके कलिग्रस्त भगवद्विरोधी त्रितापदग्ध जीवोंके लिये साधनोपयोगी बना गये हैं। आकाश-स्थित विशुद्ध जल पृथ्वी पर गिरते समय जैसे अन्तरिक्षके वायुगत तथा अन्तमें भूमिगत दोषसे दूषित होकर अविशुद्ध और मलिन होकर पीनेके योग्य नहीं रह जाता, उसी प्रकार वेदोक्त विशुद्ध वैष्णव धर्म भी श्रीश्रीनवद्वीपचन्द्रके नदियामें आविर्भाव होनेके पूर्व अविशुद्ध और रूपान्तरको प्राप्त हो गया था। दूषित जल परिष्कार करके व्यवहारमें लाया जाता है, इससे स्वास्थ्य ठीक रहता है। अविशुद्ध धर्मको भी शुद्ध करना पड़ता है, बिना शुद्ध किये साधना सिद्ध नहीं होती। श्रीगौराङ्ग प्रभु जिस धर्मको स्वयं परिशुद्ध कर गये हैं, वही कलिके जीवोंके लिये साधनीय है और वे स्वयं जिसका आचरण करके शिक्षा दे गये हैं, वही उनके लिये आचरणीय है। प्रभुके स्वमुखसे निःसृत उपदेशवाणी ही हमारे लिये वेदवाणी है। विषयी जीव विषयासक्त होकर भी, घरगृहस्थीमें स्त्री-पुत्र परिवारवर्गके साथ मायाबद्ध होकर भी अनासक्त भावसे किस प्रकार भगवद्भजन कर सकता है, यह प्रभुने अपनी माताके और गृहिणीके द्वारा जगत जीवोंको समझाया है।

शचीमाता और श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके सामने प्रभुने अपनेको प्रकट नहीं किया था, तथापि प्रभुकी कृपासे उनको ज्ञान हो गया था कि उनकी प्रिय वस्तु पुत्र या स्वामी होते हुये भी उनके लिये भजनीय वस्तु है, उनकी प्रीति-सेवाकी सामग्री है। श्रीभगवानका स्वरूप अचिन्त्य तथा कल्पनातीत है। उनको जो जिस भावसे चिन्तन और साधन करता है, उसको वे उसी भावसे उसी रूपमें दर्शन देकर उसकी मनोकामनाको पूर्ण करते हैं, परन्तु वह रूप उनका प्रकृत रूप नहीं होता। साधकके मायामय चिन्तनसे परिचिन्तित होकर श्रीभगवान तद्भावमें और तद्रूपमें आत्म प्रकाश करते हैं। यहाँ शचीमाताने श्रीगौरभगवान्‌को पाकर वात्सल्य भावमें उनकी सेवा-परिचर्या की थी। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी उनको पतिभावमें पाकर दास्य और मधुर उभय भावमें उनके सेवाव्रतमें व्रती हुई थीं।

विषय और विषयासक्ति

विषय कहकर जिस वस्तुका नाम लिया जाता है और जिसको शास्त्रकार महाजनगण विषवत परित्याज्य कहकर विधि देते हैं, वस्तुतः वह कुछ नहीं है। वह श्रीभगवानकी प्राप्तिका द्वार स्वरूप है। निर्विषय श्रीभगवान विषयोंके मध्यमें प्राप्त हो जाते हैं। गार्हस्थ्य धर्म इसका प्रमाण है। भागवतमें लिखा है, जैसे किसी अरण्यमें छिपे हुए प्रियजनको ढूंढते समय वनमें स्थित वृक्षोंके भीतर जाना पड़ता है, उसी प्रकार इस संसार अरण्यमें छिपे हुए परम पुरुषको खोजनेके लिये विषयके अन्तरालमें पैठकर खोजना पड़ेगा। परन्तु केवल वृक्षके ढूंढने तथा वृक्षोंके आश्रयमें बैठनेसे जैसे अभीष्टजनका दर्शन नहीं मिल सकता, उसी प्रकार विषयके उपभोगमें भक्तको अभीष्टदाता श्रीभगवानका साक्षात्कार संभव नहीं है। अनासक्त भावसे विषयोपभोगमें कोई दोष नहीं है। विषय विष नहीं है, विषयमें आसक्ति ही विष है। आसक्तिका विषय होना चाहिये सच्ची तृप्तिके आकर और शान्तिके आगार श्रीभगवानका चरण-मधु और लीला-मधु।

शचीमाता और श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी विषयमें लिप्त होकर भी निर्लिप्त भावसे श्रीगौराङ्ग-भजन करती थीं, इसी कारण उनका गौर-विरह इतना अधिक और प्रवल था। पुत्र धनोपार्जनके लिए विदेश गया है, पति परदेश गया है संसार-सुख-वृद्धिके लिए,—इससे शचीमाता या श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मनमें कुछ भी सुख नहीं है। वे विषय-सुखकी कामना नहीं करतीं। उनकी सुख-स्वच्छन्दता एक मात्र श्रीगौराङ्गको लेकर है। श्रीगौराङ्गकी सेवा ही उनके जीवनका एकमात्र लक्ष्य है। विषय उनका क्या बिगाड़ेगा? विषयसे उनको प्रयोजन ही क्या है? विषयका एकमात्र प्रयोजन है श्रीभगवानकी सेवाको लेकर। वह सेवा ही यदि नहीं हुई तो विषयका फिर प्रयोजन ही क्या रहा?

पूर्व बङ्गालमें जीवोद्धार

निमाई पण्डितने पूर्व देशमें जाकर किस भावमें क्या-क्या कार्य किया, इसका विवरण देना इस ग्रन्थका उद्देश्य नहीं है। उन्होंने किस प्रकार पाण्डव वर्जित देशके लोगोंके केश पकड़ कर उद्धार किया, इसका वर्णन ठाकुर लोचनदासने निम्नाङ्कित चार पयार छन्दोंमें अति सुन्दर भावसे किया है—

नीच अपवित्र जत चण्डाल दुर्ज्जन।
सभारे याचिया प्रभु दिला हरिनाम॥

जितने भी नीच, अपवित्र, चाण्डाल एवं दुर्जन लोग थे उन सभीको बुलाकर प्रभुने उन्हें हरिनाम मन्त्र दिया।

शुचि वा अशुचि किवा आचार विचार।
ना मानिल सभारे करिल भवपार॥

उन्होंने पवित्र-अपवित्र तथा आचार-विचार कुछ न मानकर सबको संसार सागरसे पार उतारा।

नाम सङ्कीर्त्तने प्रभु नौका साजाइया।
पार कैल सर्व्वलोके आपनि जाइया॥

नाम-संकीर्त्तनकी नौका सजाकर स्वयं जाकर प्रभुने सम्पूर्ण लोगोंको इस भवसे पार उतारा।

जे जनारे पाय तारे धरि कोले करि।
भवनदी पार कैल गौराङ्ग श्रीहरि॥

जिस किसी भी मनुष्यको पाया उसीको हृदयसे लगाकर गौराङ्ग श्रीहरिने भव नदीसे पार कर दिया।

इससे ही प्रभुके पूर्व देश गमनके कार्य और उद्देश्यको समझ लीजिए। अधिक कहनेका प्रयोजन नहीं।

पितामहके गृहमें

पहले कहा जा चुका है कि प्रभुके वृद्ध पितामह और पितामही उनके पूर्वजोंके वास स्थान श्रीहट्ट जिलामें ढाका दक्षिण ग्राममें वास करते थे। शचीमाताने पुत्रसे कह दिया था कि उनसे एकबार भेंट कर लेना। प्रभुको यह बात याद रही। श्रीगौराङ्ग अवतारमें श्रीगौर भगवानकी कृपा पतित अधम जनके प्रति विशेष होने पर भी वे निज जनको अपनी कृपासे वञ्चित नहीं करते थे। बहुत लोग उनको निज-जन-निष्ठुर कहते हैं। यह उनके भक्तोंके अभिमानका वन्दना-वाक्य है! भक्तके भगवान यदि निष्ठुर हों तो कैसे काम चलेगा? उन्होंने लोक-व्यवहारमें जिनके प्रति निष्ठुरता प्रदर्शनकी है, वे उनके विशेष कृपा पात्र थे। स्वजनको ही लोग ताड़ना भर्त्सना करते हैं। प्रभु नररूप धारण करके नदियामें अवतीर्ण हुए थे। और उन्होंने सभी कर्म मनुष्यके समान ही किये थे। अतएव उनके पक्षमें निज-जन-निष्ठुरता निन्दनीय नहीं। इससे प्रगाढ़ प्रीति और स्नेह-मायाका परिचय मिलता है। प्रभुका दण्ड ही प्रकृत कृपा है।

पूर्वदेशमें पद्मा नदीके तीर विद्या-विलास करके तथा हरिनामका प्रचार कार्य समाप्त करके हमारे प्रभुने श्रीहट्ट जानेका सङ्कल्प किया, यथा प्रेम विलासमें लिखा है—

किछु दिन थाकि प्रभु भाविला मनेते।
जाइते हइल मोर श्रीहट्ट देशे ते॥

पितृ जन्म स्थान पितामहेरे देखिया।
पद्मावती तीरे झाट आसिब चलिया॥
एत चिन्ति महाप्रभु श्रीहट्टे चलिला॥

कुछ दिन ठहरनेके बाद प्रभुने मनमें सोचा कि अब मुझे श्रीहट्ट जाना चाहिये। पितृ जन्म-स्थान और पितामहके दर्शन करके पद्मावतीके तीर चला आऊँगा ऐसा विचार कर प्रभु श्रीहट्टकी ओर चले।

फरिदपुर, विक्रमपुर, नूरपुर, सुवर्णग्राम, एगारसिन्दूर, बेताल ग्राम, भिटादिया ग्राम आदि परिभ्रमण करते हुए प्रभु श्रीहट्ट नगरमें जा पहुँचे। कुछ दिन वहाँ रहकर प्रभुने बड़गङ्गा नामक ग्राममें जाकर अपने पितामह-पितामहीको दर्शन प्रदान कर कृतार्थ किया।

इस समयकी एक अत्यन्त सुन्दर अलौकिक कथा प्रेमविलास ग्रन्थमें वर्णित है। जिस समय प्रभु अपना परिचय देकर पितामह और पितामहीको प्रणाम करके उनके समीप बैठे, उस समय प्रभुके पितामह श्रीपाद उपेन्द्र मिश्र ठाकुर तालपत्र पर श्रीचण्डी पुस्तकका प्रथम श्लोक लिख रहे थे। उन्होंने पुस्तक रखकर पौत्रको लेकर घरके भीतर प्रवेश किया। उनकी गृहिणी शोभा देवीने पतिको बुलाकर एकान्तमें कहा, "मैंने अद्भुत स्वप्न देखा है, यह जगन्नाथका पुत्र साक्षात नारायण है।" मिश्र महाशयने विस्मयपूर्वक कहा, "इसकी आकृति-प्रकृति देखकर मुझको भी ऐसा ही वस्तुतः लग रहा है। तुम यह बात प्रकट न करना। इसको विशेष आदर-पूर्वक रखना और अच्छी-अच्छी वस्तु खिलाना।" इतना कहकर वे पौत्रके प्रत्येक अङ्गकी ओर सतृष्ण नयनोंसे दृष्टिपात्र करके बाहरी बैठकमें गये। वहाँ जाकर जो देखा उससे वृद्ध ब्राह्मणका हृदय एक बारगी विस्मय-रससे अलिप्त हो गया। वृद्ध ब्राह्मणने देखा कि उन्होंने जिस श्रीचण्डीकी पुस्तकका प्रथम श्लोक लिखा था, वह पुस्तक सम्पूर्ण लिखी पड़ी है। यह देखकर उनके मनमें दृढ़ विश्वास हो गया कि उनका पौत्र साक्षात नारायण है और उनकी गृहिणीका स्वप्न निश्चय ही सत्य है। उन्होंने पुनः घरके भीतर जाकर पौत्रको लेकर बहुत देर तक आदर-सत्कार किया और प्रभुके साथ बहुत बातें की। उसके बाद प्रभुकी पितामहीने उन्हें एक सुमिष्ठ कटहल खानेके लिए दिया। उनके मनमें बड़ा आनन्द हो रहा था। पितामह पौत्रके पास बैठकर उनका अपरूप रूप देख रहे थे। पितामहीने प्रभुसे कहा—

पितामही बोले भाइ तुमि नारायण।
स्वपन योगे ते मोरे दिला दरशन॥

सेइ मधुर रूप मोर मने आछे लागि।
देखाओ-देखाओ रूप आवार मुञि देखि॥
(प्रेम विलास)

पितामही कहने लगी—"बेटा! तुम नारायण हो स्वप्नमें तुमने मुझे दर्शन दिए थे।
तुम्हारा वही मधुर रूप मनको अच्छा लगता है। एक बार वही रूप दिखाओ, जिसको मैं फिर देखूं।"

प्रभुके पूर्वदेश गमन करनेका अन्यतम उद्देश्य था पितामह और पितामहीको दर्शन प्रदान करना। शचीमाताने अपनी साससे प्रतिज्ञाकी थी कि अपने पुत्रको उन्हें दिखावेंगी। माताके प्रतिज्ञा-रूपी ऋणका प्रतिशोध करने तथा दर्शन देकर निज भक्तजनोंका उद्धार करनेके लिए प्रभुने श्रीहट्ट गमन किया था। कृपा करके अपने पितामह और पितामहीको प्रभुने अपनी स्वयं रूप रसमयी (कृष्ण और गौर) मूर्ति दर्शन कराकर कृतार्थ किया था। प्रभुकी इस मधुर मूर्तिके दर्शनके बाद उनको गोलोक धाम-प्राप्ति हुई। वे प्रभुके नित्य पार्षद थे।

भक्तजने कृपा करि प्रभु गौर राय।
मधुर मूरति दुइ जनारे देखाय॥

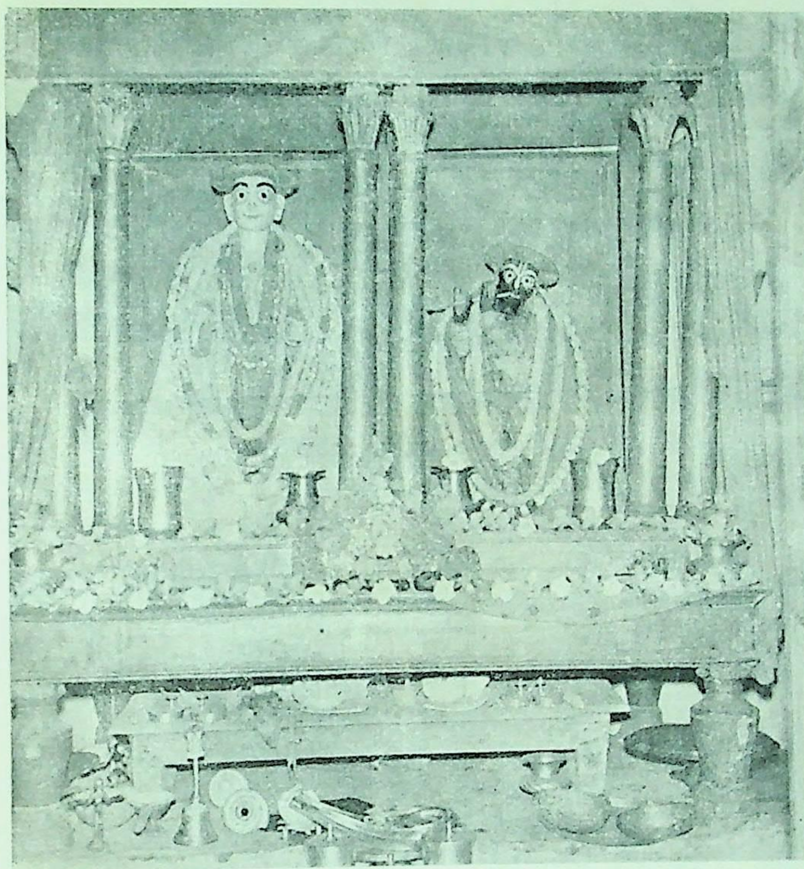
मूर्त्ति देखिया दुइ मनस्थिर कैल।
पार्षद देह धरि नित्यधामे गैल॥

भक्त-जनोंपर कृपा करने वाले, प्रभु गौर-चन्द्रने अपनी वही मधुर मूर्ति दोनोंको दिखलाई।
उस मूर्तिके दर्शन कर दोनोंने अपना मन स्थिर किया और पार्षद देह धारण कर नित्य धामको प्रयाण कर गये।

पितामहीको श्रीविग्रह प्रदान

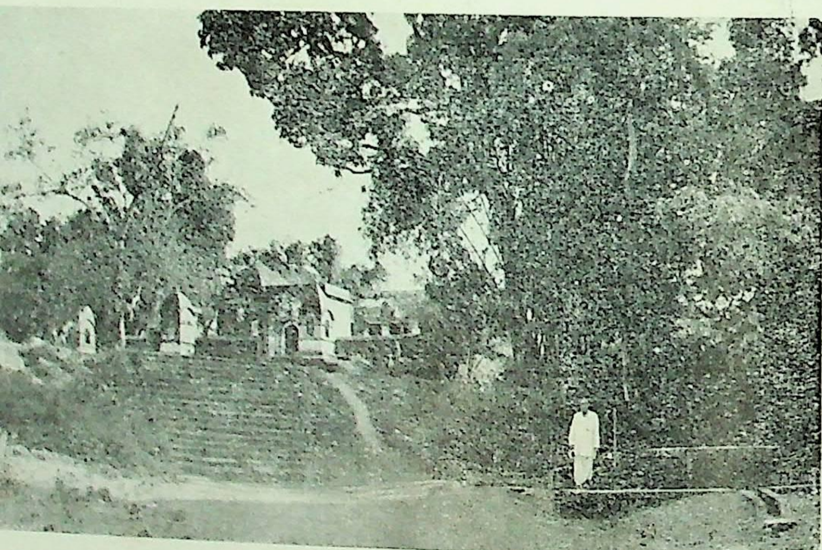
इस समयकी एक और अपूर्व कथा है। प्रभुने जिस समय पितामह और पितामहीको अपनी रसमयी मूर्ति दिखलायी थी, उस समय वे लोग उस अपरूप रूपको देखकर बड़े ही आकृष्ट हुए थे। जब देश लौटनेकी उन्होंने इच्छा प्रकटकी तो उनकी पितामहीने कहा "बेटा! तुमको मैं कदापि छोड़ नहीं सकती। तुमने जो रूप दिखलाया है, उस रूपकी एक मूर्ति दिये बिना तुम घर नहीं जा सकते।" प्रभु क्या करें, वृद्धा पितामहीकी बात टाल नहीं सकते थे। उन्होंने एक पाषाणमयी बालकृष्णकी मूर्ति पितामहीको देकर कहा—"ठाकुर माँ* ! यह मूर्ति लो। इसकी नित्य पूजा करना।" पितामहीने कहा, "बेटा इससे मेरा प्राण नहीं जुड़ायेगा। एक और गौरवर्ण बालमूर्ति जो तुम्हारे पास थी, उसको बिना दिये मैं तुमको न छोड़ूंगी।" प्रभुने तब हँसकर अपनी बाल गौराङ्ग मूर्ति पितामहीको देकर कहा "ठाकुर माँ! इन दोनों मूर्तियोंकी यहाँ प्रतिष्ठा करके पूजा करना। ये गौर-कृष्ण तुम लोगोंका सब प्रकारसे कल्याण करेंगे।"

* बङ्गालमें दादीको ठाकुर माँ कहते हैं।



श्रीमन्दिरमें प्रतिष्ठित गौर-कृष्ण युगल-मूर्ति (ढाका दक्षिण)

दीवान स्व० गोपालराय द्वारा प्रतिष्ठित जलाशयसे महाप्रभुके घरके बाहरका दृश्य



महाप्रभुके घरका बहिराङ्गन

पितामह-पितामहीकी इच्छाके अनुसार युगल गौर-कृष्ण मूर्ति ढाका दक्षिण ग्राममें उनके भद्रासनमें प्रतिष्ठित हुई। तबसे आजतक गौर-कृष्णके दो विग्रह आस-पास एक सिंहासन पर विराजित होकर श्रीपाद उपेन्द्र मिश्र ठाकुरके भाग्यवान वंशधरोंके द्वारा आज भी पूजित होते आ रहे हैं। गौर-कृष्णकी ऐसी अपरूप सुन्दर युगल-मूर्ति और कहीं दृष्ट नहीं होती। प्रभुकी प्रकट अवस्थामें प्रतिष्ठित यह आदि श्रीविग्रह मूर्ति आज पर्यन्त ढाका दक्षिण ग्राममें विराजमान हैं। वहाँ असंख्य लोग जाकर इस अपूर्व श्रीविग्रहका दर्शन कर कृतार्थ होते हैं। *रथयात्राके उपलक्षमें प्रति वर्ष यहाँ महोत्सव और एक बड़ा मेला लगता है। लाखों लोगोंका समागम होता है। श्रीश्रीगौर-कृष्णकी रथयात्रा यहाँ एक नवीन वस्तु है। शोभा देवीके पौत्र स्वयं श्रीजगन्नाथजी हैं, यह बात शोभा देवी अपनी पुत्रवधू शचीदेवीकी गर्भावस्थासे ही जान गयी थीं। भविष्यमें शचीनन्दनने श्रीजगन्नाथ क्षेत्रमें जाकर वास किया तथा अन्तमें वे श्रीश्रीजगन्नाथजीके श्रीविग्रहमें विलीन हो गये थे। उनकी रथयात्रा उनकी पितामहीके घरमें बड़े समारोहके साथ प्रतिवर्ष सम्पन्न होती थी। श्रीगौराङ्गकी रथयात्रा अभिनव नहीं है, विचित्र भी नहीं है। परन्तु इसे कोई नहीं जानता। श्रीगौराङ्ग प्रभुके सभी उत्सव होते हैं।

श्री चैतन्योदयावली ग्रन्थमें यह सारी कहानी लिखी हुई है। श्रीचैतन्य-सङ्गीता ग्रन्थमें भी इसका विशेष विवरण पाया जाता है। ये दोनों अति प्राचीन ग्रन्थ हैं। श्रीहट्ट जिलाके ढाका दक्षिण ग्रामके गौर-कृष्ण युगल श्रीविग्रह अति प्राचीन हैं। ये विग्रह श्रीश्रीमहाप्रभुकी पितामहीके द्वारा स्थापित हैं। ये ही प्रभुके आदि श्रीविग्रह हैं। प्रभुकी नित्य-लीलाके सम्बन्धमें इस पवित्र स्थानकी अनेक अलौकिक कथाएँ हैं। प्रभु यहाँ नित्य-लीला करते हैं। जो भाग्यवान् हैं उनको ही उसका दर्शन प्राप्त होता है।

अद्यापि ओ सेइ लीला करे गौर राय।
कोन कोन भाग्यवान् देखिबारे पाय ॥
(चै० भा०)

स्वदेश लौटनेका आयोजन

अब प्रभुके प्रवाससे घर लौटनेका समय हो गया है। वे अपना पूर्वदेश भ्रमणका कार्य समाप्त करके घर लौटनेकी चेष्टा कर रहे हैं। ठीक उसी समय पूर्व अध्यायमें

* पाकिस्तान बननेके उपरान्त मिश्र परिवारके कतिपय लोगोंके पाकिस्तान छोड़ आने एवं आपसी मुकदमेबाजीके फलस्वरूप मन्दिरकी आयके स्रोत समाप्त हो जानेसे ठाकुर-सेवा अभीष्ट रूपमें नहीं हो पाती। रथयात्राका आयोजन भी बन्द है। फिर भी श्रीराधिका मिश्र सपरिवार यत्किंचित् रूपसे आजकल भी वहाँ गौर कृष्णकी सेवा कर रहे हैं।

वर्णित उनके विरह-जनित शची-लक्ष्मीप्रियाका दुख प्रसङ्ग अन्तर्यामी नदियाके अवतार श्रीगौरभगवान्के सर्वदर्शी नयनोंके सम्मुख मानो उद्भासित हो उठा। उनके घरमें उनकी वृद्धा माता तथा रुग्ण गृहिणी जिस विषम करुण चित्रको प्रकट कर रही थीं, उनकी विरह-विधुरा पतिप्राणा भार्याकी प्राण स्पर्शी विरहोन्माद दशा, वृद्धा माताका हृदयविदारक दारुण मनःकष्ट—एक-एक करके सर्वज्ञ प्रभुके दृष्टि पथमें उदय होकर उनके कोमल हृदयको मन्थन करने लगे। वे सर्वशक्तिमान पूर्णब्रह्म सनातन होते हुए भी नर-वपु धारण तथा नरप्रकृति अवलम्बन करके अवतरित हुए थे। वे निर्विकार न हो सके।

वनमाली आचार्यको पास बुलाकर प्रभुने चुपकेसे कहा—"पण्डित! नवद्वीप छोड़कर परदेश आये बहुत दिन हो गये। यहाँका कार्य समाप्त हो गया है, अब शीघ्र घर चलो।" वनमाली आचार्यकी समझमें आ गया कि घरके लिए प्रभुका मन बड़ा चञ्चल हो उठा है, न जाने घर पर कौनसा काण्ड हो गया। वे प्रभुसे बोले—"मैं तो पहलेसे ही कहता आ रहा हूँ कि इतने दीर्घकाल तक परदेशमें रहना गृहस्थ पण्डितके लिए उचित नहीं। जिसके घरमें वृद्धा माता है, उसके लिए दीर्घकाल तक परदेशमें रहना अत्यन्त अनुचित है।"

प्रभु कुछ उदास हो गये। घर लौटनेकी सारी तैयारी करली। वे जानते थे कि उनके घरमें कौन-सा काण्ड हो गया है। वे जानते थे कि घर लौटनेपर अपनी गृहलक्ष्मीको फिर देख न पाऊँगा। तथापि लोकशिक्षाके लिए प्रभुने शीघ्र घर लौटनेकी अपनी इच्छा प्रकट की। प्रभुकी यह लीला समझनेकी शक्ति हमलोगोंमें नहीं हैं। वे किस हेतु क्या करते हैं, इसका विचार करना प्रयोजनीय नहीं है। वे इच्छामय हैं स्वतन्त्र ईश्वर हैं। उनके कार्य जीवकी ज्ञान-बुद्धिके लिए अगम्य हैं।

एकादश अध्याय

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका महाप्रयाण

•

वैकुण्ठे चलिला लक्ष्मी आपन आलय ।
परम लखिमी यथा सर्व्वलक्ष्मी मय ।।
(श्री चै० मं०)

श्री गौराङ्ग—लीलाके व्यासावतार श्रीचैतन्य भागवतकार श्रीवृन्दावनदास ठाकुरने लिखा है—

ईश्वर-विच्छेद लक्ष्मी ना पारि सहिते ।
इच्छा करिलेन प्रभुर समीप जाइते ।।

श्रीमती लक्ष्मीप्रियाजी ईश्वर-विच्छेद सह नहीं सकीं इसलिए उन्होंने प्रभुके समीप जाना चाहा ।

निज प्रतिकृति देह थुइ पृथिवीते ।
चलिलेन प्रभु पाशे अति अलक्षिते ।।

वे पृथ्वीपर अपने देहकी प्रतिकृति छोड़कर अलक्षित रूपसे प्रभुके पास चली गयीं ।

श्रीलक्ष्मीप्रिया तत्व

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी साक्षात वैकुण्ठकी लक्ष्मी हैं । वे श्रीगौराङ्ग अवतारमें वैकुण्ठके सुख-ऐश्वर्यको छोड़कर नदियाके दरिद्र ब्राह्मणकी कन्याके रूपमें अवतीर्ण हुई थीं । प्रभुकी पदसेवाकी लालसासे उन्होंने मनुष्य रूप ग्रहण किया था । वे गौर-वक्ष-विलासिनी सर्वज्ञा थीं, उनको ज्ञात हो गया था कि श्रीगौराङ्ग अवतारमें उनके प्राणवल्लभ अपनी अङ्ग-लक्ष्मीके पदसेवा-सुखकी अपेक्षा अन्य प्रकारके उच्च सुखके अभिलाषी हैं । इस अवतारमें वे ऐश्वर्य सुख पसन्द नहीं करते ।

श्रीगौराङ्ग अवतारमें श्रीगौर भगवान्‌ने लक्ष्मीदेवीके द्वारा की जाने वाली अपनी पदसेवाके सुखभोगको तुच्छ मानकर प्रवासके लिए प्रयाण किया था । क्योंकि

यह सुख उनको पसन्द न आया। कलिग्रस्त जीवके नित्य हाहाकारसे श्रीभगवान्का कोमल हृदय उन्मादित हो गया। वे कलिग्रस्त जीवोंके उद्धारके लिए नदियामें अवतीर्ण हुए थे। फिर भला उनको गार्हस्थ्य सुख-ऐश्वर्य कैसे अच्छा लगता? इसी कारण उन्होंने पूर्ववङ्ग देश जानेका बहाना किया, और अन्तमें संन्यास ग्रहण कर लिया।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी श्रीभगवानकी अन्तरङ्गा शक्ति थीं। प्रभुका विचार समझनेमें उनको कुछ बाकी न रहा। वे अपने प्राणवल्लभकी अनुगता दासी हैं। प्रभुका मन देखकर कार्य करके उनको सन्तुष्ट करना ही दासीका कार्य है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने हृदयवल्लभका मन देखकर ही अपने ऐश्वर्यको संवरण कर आत्म-गोपन किया था। इससे उनकी महिमा सौगुनी बढ़ गयी। उन्होंने भक्त-जगतको दिखलाया कि भगवत-इच्छा ही बलवती है। इच्छामय स्वतन्त्र ईश्वरकी इच्छाके विरुद्ध कार्य करनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। वे जो कुछ करते हैं, सब जीवोंके मङ्गलके लिए करते हैं भुवन-मङ्गल श्रीभगवानके सारे कार्य मङ्गलमय होते हैं।

श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीकी दशम दशा और प्राणवल्लभसे अन्तिम प्रार्थना

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी गौर-विरहोन्माद दशा नामक दसवीं दशा उत्पन्न हुई। वे शैया-शायिनी हो गयीं। अपने द्वारा प्रभुका आदेश पालन न होते देखकर पतिप्राणा साध्वीने देह-त्याग करनेका सङ्कल्प किया। उन्होंने अब समझ लिया कि पति-विरह-वाण जर्जरित प्राकृत देहसे पतिकी माताकी सेवा-परिचर्या असम्भव है। यह सोचकर उन्होंने अपने प्राणवल्लभके पाद-पद्मोंका स्मरण किया। रात्रिमें रोग-शैया पर शयन करके उर्ध्व उन्मीलित नयनोंसे अपने दोनों करकमलोंको जोड़कर हृदयनाथके रक्त-कमल-चरणको स्मरण करके मन ही मन प्रार्थना करने लगीं—"हे प्राणवल्लभ। तुम तो सब कुछ जानते हो। तुमको मैं फिर क्या कहूँ? तुम्हारे सुखमें विरोधी बनकर मैं जीना नहीं चाहती। हे हृदयनाथ बड़े साधसे मैं बैकुण्ठके सुखैश्वर्यको छोड़कर तुम्हारी चरण-सेवा करने आयी थी। मैं अभागिनी हूँ। मेरी वह साध पूरी न हुई। तथापि तुमने निजगुणसे कृपा करके शिव-विरिञ्चि-वाञ्छित उन चरणोंकी सेवा करनेका सुख प्रदान किया था, उसीसे यह दासी कृतार्थ हो गयी। अब प्रसन्न मनसे इस अभागिनी दासीको विदा दो। तुम्हारी विरह-यन्त्रणा अब अधिक मैं सहन नहीं कर पा रही हूँ। तुम्हारा आदेश पालन करनेमें असमर्थ होकर जीवन धारण करनेकी मेरी साध नहीं है। अब काल-सर्पके दंशनसे मेरे इस दुःखमय तुच्छ जीवनका पर्यवसान हो, तुम्हारे चरणोंमें यही मेरी वर्त्तमान प्रार्थना है। कृपा करके इस दासीको चरणोंकी धूलि बनाये रखना।"

सर्प दंशन

देवीके श्रीमुखसे यह मर्मभेदी कठिन वाणी निकलते न निकलते—

"विरह हइल मूर्त्ति सर्पेर आकार।"
(चै० मं०)

उन्होंने उसे देखा। देखते-देखते प्रभुके विरह-सर्पने देवीके दक्षिण-पदागुंष्ठमें दंशन किया।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी जब रोग-शैया पर सोयी हुई थीं, उस समय उनके पास शचीमाता, मालिनीदेवी, उनकी सखी चित्रलेखा, प्रभुकी धात्रीमाता नारायणी, प्रभुके सास-ससुर, श्रीवास पण्डित आदि सभी थे। शचीमाताने देखा कि काल रूपी महासर्पने उनकी पुत्रवधूको दंश लिया। वे व्याकुल होकर घरसे बाहर आकर रोती हुई साँपके ओझाको बुलाने गयीं। ओझाने आकर नाना प्रकारसे मन्त्र फूंकने तथा झाड़-फूंककी प्रक्रिया की। परन्तु कुछ भी परिणाम न होते देखकर शचीमाता भयभीत होकर उच्च-स्वरसे रोने लगीं। श्री चैतन्य मङ्गलमें लिखा है—

दंशिलेक महासर्प लक्ष्मीर चरणे।
अस्त व्यस्त हैया शची गुणे मने मने॥
डाकिया आनिल ओझा झाड़े नाना मन्त्र।
जिज्ञासा करिल नाना औषधेर तन्त्र॥
अनेक जतन कैल ना लेउटे विष।
बड़ भय पाइला शची हैल विमरिष॥

शचीमाताकी क्रन्दन ध्वनि सुनकर प्रभुके घरमें लोगोंकी भीड़ लग गयी। सब उपस्थित लोग व्याकुल होकर रोने लग गये। ठाकुर जयानन्दने अपने श्रीचैतन्य मङ्गलमें लिखा है कि श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी प्रभुके विरह-सर्पसे दंशित होकर कातर स्वरमें साससे बोलीं—

विष ज्वालाय मरि मा ! चक्षे नाहि देखि। — माँ मैं विष ज्वालासे मर रही हूँ आँखोंसे दिखाई नहीं पड़ता।

देवीकी सखी चित्रलेखा सखीके पदतलमें बैठी हैं। उन्होंने सखीको शैयासे उठाना चाहा।

उठ उठ कहे ताँरे चित्रलेखा सखी॥ — श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीकी सखी चित्रलेखा उनसे बार-बार उठनेको कहती हैं।

शची ठाकुरानी कान्दे अङ्ग आछाड़िया ।
ठाकुर पण्डित कान्दे मालिनी बेड़िया ।।

अङ्ग पटक-पटककर शची ठकुरानी रुदन कर रही है एवं ठाकुर पण्डित मालिनीको पकड़कर रो रहे हैं ।

चित्रलेखा सुलोचना कान्दे नारायणी ।
आचार्य्य पुरन्दर कान्दे लक्ष्मीर जननी।।

चित्रलेखा, सुलोचना, नारायणी, आचार्य पुरन्दर एवं लक्ष्मीदेवीकी माँ सब रो रही हैं ।

सर्प गुरु तन्त्र केहो राखिते नारिला ।
आकाश भाङ्गिया सभार मस्तके पड़िला।।

मन्त्र-तन्त्रके द्वारा भी सर्पके गुरु विषसे कोई रक्षा नहीं कर सका और सबके सिर पर मानो आकाश टूट पड़ा ।

श्रीलक्ष्मीप्रिया देवीकी अन्तिम इच्छा

श्रीपाद वल्लभाचार्य और श्रीवास पण्डित श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके मस्तकके पास बैठे हैं । कन्याकी अवस्था देखकर पिताकी आँखोंसे अश्रुधारा प्रवाहित हो रही है । श्रीवास पण्डित श्रीपाद वल्लभाचार्यके भ्रातृ-तुल्य थे । श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी उनको चाचा कहती थीं । उनके साथ बातें करती थीं । देवी मर्मवेदनासे पिताके मुखकी ओर देख नहीं पा रही हैं । अपना दुःख भूलकर माता-पिताके दुःखको देखकर उनको विशेष मर्म-व्यथा हो रही है । इसी समय उनके मनमें एक वासना उदय हुई । वह श्रीवास पण्डितको कहनेसे वे उसे पूर्ण करेंगे, यह सोचकर देवीने लज्जा त्याग कर उनसे कहा—

लक्ष्मी ठाकुरानी बले पण्डित महाशय ।
अनित्य देहेर देख एत केन भय ।।

श्रीमती लक्ष्मीप्रियाजी बोलीं कि हे पण्डित महाशय ! इस अनित्य शरीरके लिये इतनी आतुरता क्यों ?

रामकृष्ण बलि सभे करह कीर्त्तन ।
आमार ठाकुरेर कीर्त्तन प्राणधन ।।

'रामकृष्ण' बोलकर आप सभी कीर्त्तन करें । मेरे ठाकुरका कीर्त्तन ही प्राण धन है ।

जखन ठाकुर आमार गेल बङ्गदेशे ।
कान्धेर पैता मोरे दिलेन सन्देशे ।।

मेरे ठाकुर जब वङ्ग-देश गये थे उस समय उन्होंने अपने कन्धेके यज्ञोपवीतको मुझे सन्देशमें दिया था ।

सेइ पैता आमार गलाय देह आनि ।
प्रबोधिया घरे नेह माता ठाकुरानी ।।

वही यज्ञोपवीत लाकर मेरे गलेमें डाल दो । माता ठकुरानीको समझाकर घरमें ले जाओ ।

आमा अन्तर्जले नेह बिलम्बेकि काज ।
गङ्गा छाड़ी घरे मरिबा ए बड़ लाज ।।
(ज० चै० मं०)

मुझे गङ्गाके जलके अन्दर ले चलो, देर न लगाओ, गङ्गा छोड़कर घरमें मरना यह बड़ी लज्जाकी बात है ।

देवीकी इच्छा-पूर्ति और गङ्गा-यात्रा

गौराङ्ग-विरह-सर्प-विष जर्जरित देवीके अन्तिम वाक्य सुनकर उपस्थित सब लोगोंके हृदयमें मानो शूल चुभ गया । वे व्याकुल होकर रोने लगे । शचीमाताके घरमें क्रन्दनका घोर हाहाकार उठा ।

श्रीवास पण्डितने रोते-रोते गौर-वक्ष-विलासिनीके मनकी साध पूरी की । उन्होंने चित्रलेखाको पास बुलाकर कहा, "तुम्हारे पण्डित ठाकुरका परित्यक्त उपवीत ले आओ ।" चित्रलेखा जानती थीं कि उनकी सखी इस परम वस्तुकी नित्य पूजा करती हैं । वे दौड़ कर गयीं और ठाकुर घरसे उसे लाकर श्रीवास पण्डितके हाथमें दे दिया । श्रीवास पण्डितने प्रभुके दिये हुए उस परम पवित्र यज्ञसूत्रको देवीके गलेमें मालाके समान बाँध दिया । उनका सर्वाङ्ग चन्दन चर्चित कर दिया । गलेमें तुलसी और पुष्पोंकी माला सुशोभित कर दी । चित्रलेखाने झटपट प्रभुके पद-रजकी डिबिया लाकर उसमेंसे श्रीगौराङ्ग पद-धूलि लेकर उससे देवीके ललाटमें तिलक लगा दिया ।

देवीके शुष्क मुख-मण्डल पर हँसीकी रेखा दिखलायी दी । शयन गृहमें दिव्य-ज्योति प्रकाशित हो गयी । श्रीवास पण्डितके आदेशसे सब लोग मिलकर देवीको चारों ओरसे घेरकर हरिनाम सङ्कीर्तन करने लगे । हरिनाम सङ्कीर्त्तन करते-करते उनको घरसे बाहर निकालकर लोग गङ्गाके किनारे ले गये ।

प्राप्ति काल देखि सबे छाड़िल यतन ।
गङ्गाजले नाम्बाइल हरि स्मरण ।।

अन्त समय जानकर सभी यत्नोंको छोड़ दिया । हरिस्मरण करते हुए गंङ्गाजलमें उतारा ।

गलाय तुलिया दिला तुलसीर दाम ।
चौदिके वैष्णव सब लय हरिनाम ।।
(चै० मं०)

गलेमें तुलसीकी माला डाली और चारों ओरसे घेरकर सब वैष्णवगण हरिनाम लेने लगे ।

सब नदियावासी नरनारी गङ्गाघाट पर एकत्रित हो गये हैं । सबके मुखसे हाहाकारकी ध्वनि निकल रही है । मुँह पर वस्त्र देकर सारी कुल-ललनाएँ रो रही हैं और श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका गुणगान करके आपसमें कहती हैं, "हाय ! क्या सर्वनाश हो गया ? इस प्रकारकी लक्ष्मी स्त्रीके भाग्यमें संसार-सुख नहीं लिखा था । भाग्यसे ऐसा पति पाकर इतनी अल्प आयुमें पतिके सङ्ग सुखसे वञ्चित हो गयी । हाय ! हाय ! विधाताने क्या कर दिया ?" नदियाके पण्डित लोग तथा प्रभुके निजजन सभी गङ्गाके घाट पर उपस्थित हो गये हैं ।

नवद्वीप-वासी जत कान्दे घाटे बाटे ।
लक्ष्मीर चरित शुनि सबार प्राण फाटे ।।

मार्गमें या घाट पर जितने भी नवद्वीपवासी थे वे सब रो रहे थे। लक्ष्मीदेवीके समाचार सुनकर सबके प्राण विदीर्ण हो रहे थे।

ठाकुर पण्डित कान्दे कि हैल रे विधि ।
गदाधर जगदानन्द कान्दे विद्यानिधि ।।

श्रीवास पण्डित रोते हुये कह रहे थे कि हाय! विधाताने यह क्या किया। गदाधर, जगदानन्द और विद्यानिधि रुदन कर रहे थे।

आचार्य्यरत्न विद्यानिधि वासुदेव आचार्य्य ।
सभे बले प्रमाद करिब कोन कार्य्य ।।

आचार्यरत्न, विद्यानिधि, वासुदेव आचार्य सभी बोले कि अब प्रमाद करनेसे क्या प्रयोजन?

लक्ष्मीर विजय शुनि जत पुर नारी ।
प्रमाद गणिया सभे बले हरि हरि ।।

लक्ष्मीकी परलोक यात्रा सुनकर जितनी भी पुरनारियाँ थीं वे सब प्रमाद छोड़कर हरि-हरि बोलने लगीं।

लक्ष्मी ठाकुराणीर महिमा गुण जत ।
विनिआ विनिआ कान्दे लोक शत शत ।।
(ज० चै० मं०)

श्रीमती लक्ष्मीप्रियाकी महिमा और गुणोंका वर्णन करते हुये सैकड़ों लोग क्रन्दन करने लगे।

गौर-वक्ष-विलासिनी साक्षात लक्ष्मीरूपा श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको गङ्गाजीके जलमें उतारा गया। गङ्गाकी तरङ्गें बिल्कुल ही शान्त और सुस्थिर हो गयी। गङ्गादेवी मानो आज गौर-वक्ष-विलासिनीके शोकमें विषाद मग्न हैं। पुष्प और तुलसीदामसे सुसज्जित होकर, माल्य-चन्दनसे भूषित होकर आज श्रीगौराङ्ग गृहिणी गङ्गातट पर प्राणवल्लभके साथ मिल जानेके लिये आयी हैं। चारों ओर सब लोगोंके मुखसे हरिनाम सङ्कीर्त्तन ध्वनि हो रही है।

लक्ष्मीदेवी वैकुण्ठ धाममें गमन कर रही हैं, यह देखकर स्वर्गवासी देव-देवीगण उनका आवाहन करनेके लिये नदियामें गङ्गातट पर आ गये हैं। देवी स्वधाममें गमन कर रही हैं। इसलिए वे जय जयध्वनि कर रहे हैं। वह जयध्वनि स्वर्ग, मर्त्य और पातालको भेद करके ऊपर उठ रही है।

वैकुण्ठलोक-यात्रा

गङ्गा अन्तर्जले लक्ष्मी दिव्य माला गले ।
चौदिके कीर्त्तन सर्व्वलोके हरि बोले ।।

लक्ष्मीप्रिया देवी गङ्गाके अन्तर्जलमें हैं, उनके गलेमें दिव्य माला है। चारों ओर कीर्त्तन हो रहा है और सब लोग हरि-हरि बोल रहे हैं।

स्वर्ग मर्त्य पाताल भेदिल जयध्वनि ।
दिव्यरथे वैकुण्ठे चलिला ठाकुरानी ।।
(ज० चै० मं०)

स्वर्गलोक, मृत्युलोक और पाताल लोक सभीको भेदती हुई जयध्वनि दिग्दिगन्तमें व्याप्त हो रही है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी दिव्य रथमें बैठकर वैकुण्ठ धाम प्रयाण कर रही हैं।

प्रभुके पदरजका तिलक धारण करके, प्रभुके प्रसादी-यज्ञ-सूत्रको वक्षःस्थल पर धारण करके, गौराङ्ग नाम जप करते-करते श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी स्वधामको गमन कर गयीं। गन्धर्व-चालित दिव्य रथ आकाशसे नदियामें गङ्गाके घाट पर आकर गौर-वक्षःविलासिनी लक्ष्मी ठाकुरानीको स्वधाम ले गया।

आकाशेर पथे रथ आनिल गन्धर्व ।
हरि बलि देह छाँड़ि लक्ष्मी गेला स्वर्ग ।।
वैकुण्ठे चलिला लक्ष्मी आपन आलय ।
परम लखिमी यथा सर्वलक्ष्मीमय ।।
(चै० मं०)

महाप्रयाणके समयकी अद्‌भुत घटनाएँ

गङ्गाके घाट पर नदियाके सब लोग आये हैं। नदियावासी पुर-नारीवृन्द भी आयी हैं। श्रीपाद सनातन मिश्र राज पण्डितकी गृहिणी मायादेवी भी आयी हैं। उनकी कन्या श्रीमती विष्णुप्रिया देवी दशवर्षीया कन्या हैं। उन्होंने माताका सङ्ग न छोड़नेके लिए हठ किया था। अतएव श्रीमती महामाया देवी उनको अपने साथ लाई हैं। बहुत दूर रास्तेमें एक किनारे वे खड़ी हैं। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके स्वधाम गमनके समय अचानक श्रीमती विष्णुप्रियादेवी चौंक उठीं, तथा माताको जकड़ कर धर लिया। उनकी माताने देखा कि उनकी कन्या एक अपूर्व तेजोमय वस्तु सी लग रही है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके सर्वाङ्गसे मानो विद्युच्छटा निकल रही है। वे भयभीत होकर सन्तानके विपद् निवारणार्थ षष्ठी देवीका नाम उच्चारण कर कन्याको गोदमें लेकर घर चली गयीं। कोई कुछ न समझ सका कि इसका क्या अर्थ है? पश्चात इसका अर्थ प्रकाशित होगा।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके महाप्रयाणके समय नदियाके गङ्गाघाट पर एक और अपूर्व घटना घटित हुई। भाग्यवान लोग उसे देख सके। प्रभुके अन्तरङ्ग पार्षदोंने देखा कि आकाशमें दिव्यरथमें चढ़कर गौर-लक्ष्मी दोनों जा रहे हैं। देवगण पुष्पवृष्टि कर रहे हैं। देवबालाएँ चवँर डुला रही हैं और सुस्वरमें युगल भजन गीत गा रही हैं। इस दृश्यको जिन्होंने देखा, वे गङ्गातीर पर प्रेमानन्दमें मूर्छित हो गिरे। जिनके भाग्यमें यह नयनानन्द अपरूप मधुर दृश्य बदा न था, वे भी दुःख और शोकसे

गङ्गाके घाट पर मूर्छित हो गिरे। प्रेमानन्द और शोकावेगके मिश्रणसे नदियावासी नर-नारीका हृदय मथित हो उठा। किसके हृदयमें किस भावका उदय हुआ, यह कोई जान न सका।

ग्रन्थकारका निवेदन

श्रीवृन्दावनदास ठाकुरने लिखा है—

प्रभुर पादपद्म लक्ष्मी करिया हृदय।
ध्याने गङ्गातीरे देवी करिला विजय॥

प्रभुके पाद पद्मोंको हृदयमें धारण कर देवी लक्ष्मीप्रियाने गङ्गा तट पर परलोक यात्रा की।

एखाने शचीर दुःख ना पारि कहिते।
काष्ठ द्रवे आइर से क्रन्दन शुनिते॥

उस समयका शचीमाका दुःख वर्णन नहीं किया जा सकता। उनके विलापको सुनकर शुष्क काष्ठ भी द्रवित हो जाता।

से सकल दुःख-रस ना पारि वर्णिते।
अतएव किछु कहिलाम सूत्रमते॥

उस सम्पूर्ण दुःख-रसका वर्णन नहीं किया जा सकता, इसलिए संक्षिप्त रूपसे कुछ कह रहा हूँ।

इसी सूत्रको लेकर ठाकुर लोचनदास और ठाकुर जयानन्दने शचीमाताकी पुत्रवधू-वियोग और दुःखकहानीको कुछ विस्तारपूर्वक लिखा है। ठाकुर वृन्दावनदासने अपने श्रीचैतन्य-भागवत ग्रन्थमें देवीके सर्पाघातसे देह-त्यागकी बातका उल्लेख नहीं किया। उन्होंने शचीमाताकी दुःखकहानी भी नहीं लिखी है। इसका कारण यह है कि यह कहानी हृदय-विदारक, मर्म-विघातक है। यह सारी दुःखकहानी लिखते-लिखते हृदय विदीर्ण हो जाता है। पाषाण हृदय इस अधम ग्रन्थकारके कठिन प्राण सब कुछ सहन कर लेते हैं। यह सब मर्मघाती हृदय विदारक दुःखकी कहानी वर्णन करनेके लिए प्रभुने ही इसे नियोजित किया है। प्रभु ही इसके हृदयको वज्रसे भी कठिन करके केश पकड़कर यह सब दुःख कहानी लिखा रहे हैं। लिखते समय इसका वक्षःस्थल अश्रुजलके प्रवाहमें डूब रहा है, प्राण फट रहे हैं, तथापि निस्तार नहीं है। लेखनीके अग्रभागमें अधिष्ठान करके मानो कोई इसे उपलक्ष्य करके अपनी दुःखकहानी आप लिखा रहा है। श्रीवृन्दावनदास ठाकुर लिखे गये हैं—

आज्ञा बलवान ताँर ना पारि ठेलिते।
लिखिब लिखाबे जाहा बसि मोर चिते॥

यह बात ध्रुव सत्य है। लेखकका इस ग्रन्थ-रचनामें कोई कृतित्व नहीं है। श्रीभगवानकी लीलाके लेखकगण काठकी पुतलीके समान श्रीभगवानके हाथों द्वारा चालित होते हैं। कलकी पुतलीके समान जैसे वे नचाते हैं, लीला-लेखकगण उसी प्रकार नाचते हैं। यह बात भी श्रीवृन्दावनदास ठाकुर लिख गए हैं—

काष्ठेर पुतलि जेन कुहके नाचाय ।
एइमत गौरचन्द्र मोरे से बोलाय ।।

शचीमाँकी हालत

शचीमाताकी दुःख कहानी लिखकर समाप्त नहीं की जा सकती। एक तो वे पुत्र-विरहके दुःखसे सन्तप्त होकर मरती रहती हैं। उनका एकलौता पुत्र एक दिनके लिए भी घर छोड़कर कहीं नहीं जाता था, वह दीर्घकालसे प्रवासमें है। उसका कोई संवाद नहीं मिल रहा है। अत्यन्त दूर देशमें गया है। डेढ़ मासका रास्ता है, कौन उनके पुत्रका समाचार लायेगा ? तत्पश्चात छः महीने तक अपनी पुत्रवधूके कारण वे महाविपदमें पड़ी हैं। शचीमाता वृद्धा हो गई हैं। इस समय उनकी अवस्था ६५ वर्षके लगभग है। इस वृद्धावस्थामें वे कहाँ तक सहन करें ? निमाईचाँदको पाकर वे सब दुःख-सन्ताप भूल गई थीं, उनका विवाह करके सोनेकी पुत्रवधू पाई थी, उनका सारा दुःख दूर हो गया था। अब उनकी वही सोनेकी कमल-गृहलक्ष्मी छोड़कर चली गई, और उनका सारा गृह-संसार अन्धकारमय हो गया। पुत्र-विरहाग्नि उनके हृदयमें धाँय-धाँयकर जल उठी। अब वे व्याकुल हो गयीं। सब विषयकी एक निर्दिष्ट सीमा होती है। दुःखकी भी सीमा है। शचीमाताके दुःखकी सीमा नहीं है। उनका दुःख अनन्त है, असीम है। वे दुःखसमुद्रमें डूब रही हैं। शचीमाताके दुःखकी कहानी लिखें तो एक स्वतन्त्र ग्रन्थ तैयार हो जाय। केश पकड़कर यदि प्रभु लिखायेंगे तो पश्चात यह दुःखकहानी प्रकाशमें आएगी। उसे सुनकर काठ पाषाण भी द्रवित हो उठेंगे।



द्वादश अध्याय

शचीमाताकी विलाप कहानी

•

"एखाने शचीर दुःख ना पारि कहिते ।
काष्ठ द्रवे आइर से क्रन्दन शुनिते ।।"
(श्रीचैतन्य भागवत)

शचीमाँका विलाप

गौरवक्षःविलासिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी स्वधाम चली गयीं । नदियामें गङ्गाके घाट पर उनकी प्राकृत देह पड़ी रह गई । प्रभुके निजजन और आत्मीय पुर-नारी-वृन्द देवीकी उस पवित्र देहको घेरकर बैठकर उच्च स्वरसे क्रन्दन कर रहे हैं । शचीमाता उसी गङ्गाके घाटपर भूतल पर पड़ी, पछाड़ खाकर करुण स्वरसे विलाप कर रही हैं और सिर पीट रही हैं । वे पुत्रवधूकी ओर देखकर कह रही हैं—

केमने घरेते जाव एकेश्वरी आमि । कि लागिया मोरे दया पासरिले तुमि ।।	मैं अकेली घरमें कैसे जाऊँगी ? तू किस कारण मेरे ऊपर दयाभाव रखना भूल गयी ?
देव-आराधन-सज्ज थाकिल पड़िया । आमार शुश्रुषा केने गेला त छाड़िया ।।	देवाराधनकी तैयारी पड़ी ही रह गई, मेरी सुश्रूषा छोड़कर तू क्यों चली गयी ?
आजि हैते शून्य हैल मोर गृहवास । बिभा कैला विश्वम्भर ना गेला त पाश ।।	आजसे मेरा गृहावास शून्य हो गया । विश्वम्भरने विवाह तो किया, पर तुम्हारे पास नहीं रहा ।
आरे रे पापिष्ठ सर्प कोथा छिले तुमि । आमारे ना खाइले केने जीत बधूखानि ।।	अरे पापी सर्प ! तू कहाँ था । मुझको न काटकर तूने वधूको क्यों काट खाया ?

मोर सेवा करिबारे बधू नियोजिया ।
विदेशे रे गेल पुत्र निश्चिन्त हइया ॥

मेरी सेवा करनेके लिए बहूको नियुक्त करके मेरा पुत्र निश्चिन्त होकर परदेश गया था ।

केमने ताहार मुख चाहिबे अभागी ।
कि करिब प्राण पोड़े बहूके ना देखि ॥
(चै० मं०)

अब मैं पुत्र के सम्मुख कैसे होऊँगी ? क्या करूं ? बहूको देखे बिना प्राण जले जा रहे हैं ।

इतना कहकर वृद्धा पागलिनीके समान दौड़कर पुत्रवधूके शव-देहके ऊपर जा गिरीं । रोते-रोते दोनों हाथोंसे पुत्रवधूके मुँहके ऊपरसे वस्त्र हटाकर उसके मुँहको चूमकर कहने लगीं, "बहू ! मुझको छोड़कर तू कहाँ चली ? अरी लक्ष्मी ! मुझको अनाथिनी बनाकर तू कहाँ जा रही है ?"

"लक्ष्मी मुखे चुम्ब दिये बले शचीमाता ।
अनाथिनी लक्ष्मी मा छाड़िया जाह कोथा ॥"
(ज० चै० मं०)

देवीका देह-संस्कार

श्रीवास पण्डितने रोते-रोते शचीमाताको वहाँसे हटाकर मालिनी देवीके पास पहुँचाया । मालिनी देवी जब किसी प्रकारसे उनको समझा-बुझाकर शान्त करनेमें समर्थ न हुई तो श्रीवास पण्डितको एकान्तमें बुलाकर कहा, "जितना शीघ्र हो, जैसे तैसे करके सब कार्य कर डालो", शची ठाकुरानीके कारण मैं बड़ी विपदमें पड़ गई हूँ । अब विलम्ब करना ठीक नहीं है ।

मालिनी बोलेन ठाकुर पण्डित महाशय ।
लक्ष्मी देह संस्कार कर जेन मत हय ॥
शची ठाकुरानी कारो प्रबोध ना माने ।
सर्वाङ्गे दिल जेन भस्मेर आगुने ॥
(ज० चै० मं०)

श्रीवास पण्डित और अन्यान्य आत्मीय स्वजन रोते-रोते स्वर्ण-प्रतिमा लक्ष्मीप्रिया देवीके प्राकृत देहका विधिपूर्वक संस्कार करके शचीमाताको साथ लेकर बड़े कष्टसे घर लौटे । शचीमाता गङ्गाके घाटसे उठना नहीं चाहती थीं । सब लोग उनको गोदमें उठाकर घर लाये ।

तबे सब जन मिलि जे विधि आछिल ।
करिया सत्क्रिया सभे घरे ते चलिल ॥

कान्दिते कान्दिते शची निज घर गेला ।
प्रबोध करिला सभे बन्धुगण मेला ।।
(चै० मं०)

शचीमाँको घर लाना और उनका विलाप

घरके द्वार पर आने पर पुत्रवधूके लिए शचीमाताका शोक द्विगुण होकर प्रज्वलित हो उठा। वे घरमें जा न सकीं। घर-द्वार उनको शून्य लगने लगा। एक गृहलक्ष्मीके अभावमें उनको सारा गृह अन्धकारमय जान पड़ा। देवगृह भी उनको अन्धकारमय दीख पड़ा। वे आँगनमें गिरकर पछाड़ खाकर चीत्कार करके रोने लगीं। उनका रोना सुनकर नदियाके पशु-पक्षी तक रोने लगे। ठाकुर जयानन्दने अपने श्रीचैतन्य-मङ्गल ग्रन्थमें शचीमाताकी इस समयकी विलाप-ध्वनिका जो वर्णन किया है, उसे पढ़कर पाषाण-हृदय भी द्रवित हो जायगा। मैं कोमल-हृदय कृपालु पाठकवृन्दके कोमल प्राणोंमें बड़ा आघात पहुँचा रहा हूँ। वे लोग इस अधम ग्रन्थकारको निज गुणोंसे क्षमा करेंगे। ठाकुर जयानन्दने लिखा है।

शचीमाताकी उक्ति—

आर ना जाइब घर, ना देखिब विश्वम्भर,
गङ्गाय मरिब लक्ष्मी सङ्गे।

अब मैं घर नहीं जाऊँगी। न विश्वम्भरसे मिलूंगी। लक्ष्मीके सङ्गमें गङ्गामें ही मरूंगी।

पुत्रेर कराइल बिहा, केमने जानिब इहा,
गौराङ्ग रहिल गिया बङ्गे ।।
कान्दे कान्दे शची ठाकुरानी ।।

पुत्रका मैंने विवाह करवाया—यह अब कैसे जानूंगी ? गौराङ्ग तो पूर्वबङ्गालमें गया हुआ है—यह कहकर शचीमाता रुदन करने लगीं।

वे एक बार श्रीवास पण्डितके मुंहकी ओर देखकर रोती-रोती कहने लगीं—

ओहे श्रीनिवास !
केमने बञ्चिब एकाकिनी ।

हे श्रीनिवास ! अब मैं अकेली कैसे जीऊँगी ?

आमा हेन अभागिनी, नाहि देखि नाहि शुनि
जत दूर जाये लोन पानी ।।

जितनी दूर लवण और पानी जाता है वहाँ तक मैंने अपनी जैसी अभागिनी तो देखी, और न सुनी।

मिश्रपुरन्दर मैला, विश्वरूप सन्न्यास हैला,
गौराङ्गेर कि हय ना जानि ।।

मिश्र पुरन्दर मर गये, विश्वरूपने संन्यास ले लिया, गौराङ्ग का क्या होगा ?—पता नहीं।

दारुण विषेर ज्वाले, प्राण दिल गङ्गाजले,
के आर करिबे मोर सेवा ।

दारुण-विषकी ज्वालासे लक्ष्मीप्रियाने गङ्गाजलमें प्राण छोड़ा । अब मेरी सेवा कौन करेगा ?

लक्ष्मीर चरित जत, स्वप्न हेन मोर मत,
छाड़ि गेला क्षीरोदसंभवा ।।

लक्ष्मीके सारे चरित मेरे लिए स्वप्न हो गये । वह क्षीरोदसम्भदा लक्ष्मी मुझे छोड़कर चली गयी ।

शची-विलापका विश्लेषण

इस पदके अन्तमें जयानन्द ठाकुरने एक देववाणीकी बात लिखी है । वह यह है—

हेनई समये ध्वनि, हैल आकाशवाणी,
विष्णुप्रिया गौराङ्ग-गृहिणी ।

उसी समय आकाशवाणी हुई कि विष्णुप्रिया गौराङ्ग गृहिणी होंगी ।

एइ मधुमास शेषे, गौराङ्ग आसिबे देशे,
जयानन्द मुखे दैव बाणी ।।

इस मधुमासके अन्तमें गौराङ्ग देशमें आवेंगे । जयानन्दके मुखसे यह देववाणी हुई ।

इससे ज्ञात होता है कि प्रभुने पूर्ववङ्ग देशसे फाल्गुण मासमें गृहमें प्रत्यागमन किया था । और इस मधुमासमें ही श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया देवीने स्वधामको गमन किया था । यह मधु फाल्गुण मास प्रभुका शुभ जन्म-मास है । शुभ फाल्गुण पूर्णिमा तिथिमें प्रभु नदिया धाममें अवतीर्ण हुये थे । श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने प्रभुके जन्मदिन पर नवद्वीप धाममें श्रीमन्महाप्रभुकी श्रीमूर्त्तिमें लीन होकर महाप्रयाण किया था । ये सारी बातें मैंने श्रीश्रीविष्णुप्रिया चरित श्रीग्रन्थमें लिखी हैं । श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीने भी प्रभुके शुभ जन्म-मासमें प्रभुके साथ मिलकर युगल रूपमें स्वधामको गमन किया । देवीके इस महाप्रयाणके दिन भी शुभ गौर-पूर्णिमा तिथि संलग्न न थी, यह कौन कह सकता है ?

जयानन्द ठाकुरके उपर्युक्त पदमें दो विषम बातें हैं । पुत्र-वत्सला शचीमाताकी उक्तिमें इन विषम दो बातोंकी अवतारणा करके कवि जयानन्द ठाकुरने पुत्रवधू-विरह-विधुरा श्रीगौराङ्ग-जननीके मर्मकी बात खींचकर बाहर निकाल ली है । शचीमाता पुत्रवधूके शोकमें इतनी विह्वल और कातर हो गयी हैं कि उनके मुंहसे असंभव बात भी निकल गयी । उन्होंने रोते-रोते अम्लान वदनसे कह डाला—

आर ना जाइब घर, ना देखिब विश्वम्भर
गङ्गाय मरिब लक्ष्मी सङ्गे ।

जिस निमाईको यदि क्षण मात्रभी नहीं देखतीं तो चतुर्दश भुवन अन्धकारमय दीखता, उनका वही प्राणोंसे भी प्रिय पुत्र इस समय परदेशमें हैं, क्षण-प्रतिक्षण शचीमाता अपने प्रिय पुत्रके आगमनकी प्रतीक्षा कर रही हैं। उसका मुख न देखूंगी— यह विलक्षण बात उनके मुंहसे कैसे निकली ? यह बड़ी असम्भव बात है। इसका बिचार होना चाहिए। शचीमाताने समझ लिया है कि उनके पुत्रके विरह-जनित-दुःख भारको न सह सकनेके कारणही उनकी पति-प्राणा पुत्रवधू उनको छोड़कर चली गयी। इससे पुत्रके ऊपर वे बहुत ही रुष्ट हैं। स्नेहमयी माता शोकातुर होने पर मायाके वशमें होकर सन्तानके प्रति इस प्रकार रुष्ट होकर अनेक प्रकारकी अनर्गल बातें बोल जाती हैं। शचीमाताने अपने पुत्रके ऊपर रुष्ट होकर कहा—

"आर ना जाइब घर, ना देखिब विश्वम्भर,"

यह उनके अन्तःकरणकी बात नहीं है। श्रीगौराङ्ग उनके जीवनके जीवन, सर्वस्व धन हैं। इतने कष्टमें, इतने दुःखमें भी शचीमाता जीवित हैं, केवल मात्र अपने सोनेके निमाई चाँदका मुंह देखनेके लिए। वे क्या ऐसी बात मुँहसे निकाल सकती हैं ?

शचीमाताकी दूसरी बात उतनी सहज नहीं हैं। वे शोकापन्न होकर रो-रोकर कह रही हैं—

"मिश्र पुरन्दर मैला, विश्वरूप सन्न्यास हैला,
गौराङ्गेर कि हय ना जानि।"

"गौराङ्गेर कि हय ना जानि"—यही बात गम्भीर दुःख और शोकको उद्दीप्त करती है। शचीमाता कोमल-हृदया वृद्धा रमणी हैं। कोई एक अमङ्गल चिन्ह देखते ही कोमल नारी-हृदयमें पुत्र-कन्या, आत्मीय स्वजनकी अमङ्गल चिन्ता स्वतः उदित होकर उनको चञ्चल करती है, शचीमाताके पक्षमें भी यही बात है। उन्होंने सोचा, उनके राज्येश्वर स्वामी उनको अनाथिनी बनाकर चले गये, उनके युवा पुत्र विश्वरूपने उनको पथकी भिखारिणी बनाकर, हृदयमें शूल मारकर संन्यासले लिया, न जाने अब उनका निमाई चाँद क्या करता है ? वे खूब जानती हैं कि उनका पुत्र बड़ा ही वधू-प्रिय है। लक्ष्मीप्रिया-प्रिय श्रीगौराङ्ग पत्नी-विरहमें क्या कर डालेंगे—शची-माताके मनमें इसके ही भाव-तरङ्ग उठ रहे हैं। वे सोच रही हैं कि यह पुत्र भी कहीं पत्नी-बियोगमें संसारसे विरक्त होकर विश्वरूपके समान संन्यासी न हो जाय। पुत्रवत्सला शचीमाताके मनमें एक बार अमङ्गलकी आशङ्का उठती है। पुत्रको परदेश गये बहुत दिन हो गये हैं, न जाने वह कैसे है। यह सारी बातें सोचकर वे बोलीं—

"मिश्र पुरन्दर मैला, विश्वरूप सन्न्यास हैला,
गौराङ्गेर कि हय ना जानि।"

शचीमाँका असीम दुःख

शचीमाता अपनी पुत्रवधूके वियोगसे किस प्रकार मर्माहत और सन्तप्त हुई हैं, इस बातको महाजनगण स्वरचित पदोंमें सूत्र-रूपमें लिख गये हैं। शचीमाताके दुःख और शोककी सीमा नहीं है। उन्होंने घर आने पर चारों ओर अन्धकार देखा। सिर पीटकर वे पुरनारीगणसे वेष्टित होकर आँगनमें बैठकर पुत्रबधूके एक-एक गुणका निर्देश करके करुण-स्वरसे विलाप करने लगीं। उनकी आँखोंके झरझर अश्रुप्रवाहसे उनके वक्षःस्थलका वस्त्र भीग गया। बारम्बार दीर्घ श्वास लेनेसे वृद्धाका हृदय चूर्ण विचूर्ण होने लगा। पुत्रवधूके शोकसे वृद्धाके पञ्जरकी हड्डियाँ चूर-चूर होने लगीं।

लक्ष्मी लागि शची देवी कान्दिया दुःखिता।
गुण बिनाइया कान्दे स्त्रीगण वेष्टिता॥
नयने गलये नीर भिजे हिया वास।
शिरे कर हानि छाड़े दीघल निःश्वास॥
(चै० मं०)

शचीमाताके शोकापन्न और विह्वल भाव देखकर सारी नदियाके लोग हाहाकार कर रहे हैं, कोई भी किसी प्रकारसे उनको प्रबोध नहीं दे पा रहा है। नवद्वीपके मुख्य-मुख्य पण्डित लोग मिश्र-गृहमें आये हुए हैं। श्रीअद्वैतप्रभु, श्रीवास पण्डित, श्रीपाद वल्लभाचार्य, चन्द्रशेखर आचार्य आदि सब लोग वहाँ हैं। शचीमाताकी अवस्था देखकर श्रीपाद वल्लभाचार्य अपना शोक भूलकर उनकी परिचर्या कर रहे हैं। शचीमाताका शोक-समुद्र समधीको देखकर दूना बढ़ गया है। यह देखकर श्रीवास पण्डितने श्रीपाद वल्लभाचार्यको इशारेसे अपने पास बुला लिया। श्रीअद्वैत प्रभु स्थविरके समान आँगनके एक बगलमें बैठे कुछ सोच रहे हैं। शचीमाताके निकट मालिनी देवी और उनकी अपनी बहिन उनको पकड़ कर बैठी रो रही हैं।

पुत्रवधूके शोकसे शचीमाताने आहार-निद्रा त्याग दी है। घरमें इस समय वे अकेली हो गयी हैं—यह बात उनके मनमें आते ही उनका कलेजा मानों फटने लगता है। मालिनी देवी फिर अपने घर नहीं गयीं। शोकाकुल शचीमाताको अकेली घरमें छोड़कर वे कैसे अपने घर जातीं? सखीके शोकसे चित्रलेखा मृतवत हो रही है। वे भी अपने घर नहीं गयीं, श्रीश्रीगौराङ्ग-जननीकी सेवा-परिचर्याका भार उन्होंने अपने ऊपर ले लिया है। वे जानती थीं कि उनकी प्रियसखी लक्ष्मीप्रिया देवीका यही प्रधान कार्य था। इस सेवाकार्यको करके उनके मनमें जितना सुख अनुभव होता था, हृदयमें जितना आनन्द मिलता था, वैसा सुख उनको और किसी बातमें नहीं मिलता। चित्रलेखा अपनी सखीका यह प्रिय कार्य प्राणपणसे करने लगीं। यह देखकर शचीमाताको मनमें कुछ शान्ति मिली।

पुत्रके आगमनकी सूचना और हर्ष व विषाद

इस प्रकार शचीमाताके दिन मानसिक दुःखमें जैसे-तैसे कट रहे हैं। श्रीवास पण्डित एक दिन शचीमाताको देखने आये और बोले, "माँ ! तुम्हारा निमाई घर आ रहा है। समाचार मिला है कि वह दो दिनके रास्ते पर है।" शचीमाता चौंक पड़ीं और बोलीं—"हा ! मेरा निमाई घर आयेगा ? क्या ऐसा दिन भी मेरा लौटेगा ? क्या मेरा ऐसा भाग्य होगा कि अपने बाछाके चन्द्रमुखको देखकर अपने प्राणको शीतल करूँगी ? अहा ! कितने दिनोंसे मैंने सोनेके बाछाके चन्द्रमुखको नहीं देखा है। बाछाके चन्द्रमुखको मानो मैं भूल गई हूँ।" यह बात कहते-कहते शचीमाता अजस्र आँसू बहाते हुए रोने लगीं।

हमारे प्रभु सर्वज्ञ हैं। गृहमें जो काण्ड हो रहा है, वह उनके जाननेके लिए शेष नहीं है। संसारी जीवकी वे कैसी विषम परीक्षा करते हैं, यह कृपालु पाठकवृन्द लक्ष्मीप्रियाकी अवस्था देखकर समझ सकते हैं। श्रीभगवान करुणामय होने पर भी जीवकी परीक्षा किये बिना करुणा नहीं करते। श्रीभगवानकी परीक्षा एक विषम समस्या है। इसको समझनेकी शक्ति उन्होंने जीवको नहीं दी है। इसका भी कुछ गूढ़ मर्म है। श्रीभगवानकी विषम परीक्षा-समस्या समझनेकी शक्ति यदि जीवमें होती, तो उसको फिर हाहाकार नहीं होता। हाहाकारका अर्थ है दुःख। जीवमें हाहाकार होनेके कारण ही श्रीभगवानकी उसके ऊपर कृपा होती है। उनका नाम है आर्त्त-बन्धु। दुःखकी ज्वाला न रहने पर जैसे सुखके प्रकाशका अनुभव नहीं होता, उसी प्रकार आर्त्ति-हाहाकार न रहने पर भगवदनुग्रह उपलब्ध करनेकी शक्ति और आनन्दकी प्राप्ति नहीं होती।

शचीमाता एक-एक करके श्रीभगवानकी विषम परीक्षामें उत्तीर्ण हो रही हैं। श्रीगौरभगवान अपनी माताको भी परीक्षा किये बिना नहीं छोड़ते। शचीमाता ही इसका ज्वलन्त दृष्टान्त हैं।

श्रीगौराङ्ग नदियामें लौट रहे हैं, यह सुनकर शचीमाताको हर्ष-विषाद उत्पन्न हुआ। घरमें गृहलक्ष्मी नहीं है। उनका सोनेका संसार अन्धकारमय हो गया है। किस प्रकार पुत्रके सामने मुंह दिखलाएँगी—यह सोचकर वृद्धा व्याकुल हो रही हैं।

त्रयोदश अध्याय

प्रभुका नवद्वीप आगमन और उनका प्रिया-विरह

•

केने हेन माता तोमार विरस वदन।
तोमारे मलिन देखि पोड़े मोर मन॥
(श्रीचैतन्य मङ्गल)

प्रभुकी अनुपस्थितिमें नदियावासी

प्रभुने आश्विन मासके प्रारम्भमें पूर्व वङ्गदेशकी यात्राकी थी, फाल्गुनके अन्तमें प्रवाससे नवद्वीप लौटे। छः मास तक वे प्रवासमें रहे। इस छः महीनेके भीतर नदियामें क्या काण्ड हो गया, यह हमारे सर्वज्ञ प्रभु सब कुछ जानते थे। नदियावासी प्रभुके निजजन और भक्तवृन्दके लिए यह छः मासका काल मानो छः युगके समान जान पड़ा। श्रीगौराङ्ग-विरहमें उनके हृदयमें इतनी प्रबल उत्कण्ठा जागृत हुई कि उन्होंने आहार-निद्राका परित्याग कर दिया। श्रीमती लक्ष्मीप्रियादेवीके स्वधाम गमन पर उनके मनमें गौराङ्ग-विरह-दुःख दूना बढ़ गया। अब जब उन्होंने सुना कि श्रीगौराङ्ग प्रवाससे घर लौटे आ रहे हैं, तब उनका मन आनन्दसे प्रफुल्लित हो उठा। नदियावासी नर-नारी फिर प्रेमानन्दसे नाच उठे।

प्रभुके नदिया आगमन पर आनन्द

स्वदेश लौटकर आते हुए निमाई पण्डितका स्वागत-सत्कार करनेके लिए सबने अपने-अपने द्वारको तोरण, पत्र-पुष्पसे सुशोभित किया। घरके द्वार पर मङ्गलघट रक्खे गये। नदियामें पथ-पथमें चित्र-विचित्र ध्वजा-पताका सुशोभित हो उठीं। नदियामें घर-घर फिर मङ्गलवाद्य-ध्वनि झंकृत हो उठी। इतने दुःखोंके बीच भी

श्रीगौराङ्ग-दर्शनाभिलाषिणी नदियावासिनी कुलनारियाँ आनन्दसे प्रफुल्लित होकर शुभ शङ्ख-ध्वनि और शुभ हुलू-ध्वनि दे रही हैं। ठाकुर जयानन्दने लिखा है—

ठाकुर आइला ठाकुर आइला,
पड़िल घोषणा ।
चन्दनेर छड़ा पथे देइ दिव्याङ्गना ।।

चारों ओर घोषणा हो गई कि गौराङ्ग ठाकुर आ गये, गौराङ्ग ठाकुर आ गये । दिव्याङ्गनाओंने मार्गमें चन्दनका छिड़काव किया ।

नाना चित्रे विराजित नगर चत्वर ।
द्वारे द्वारे कला रुइल गुवाक् सुन्दर ।।

नगर चारों ओरसे नानाप्रकारसे सुशोभित हो रहा है, द्वार-द्वार पर केलेके वृक्ष और सुन्दर सुपारी रक्खे हैं ।

सिन्दूर कज्जल शङ्ख चामर दर्पण ।
स्वस्तिक सिन्दूर दूर्व्वा धान्यादि रोचन ।।

सिन्दूर, कज्जल, शंख, चामर, दर्पण, सिन्दूर-स्वस्तिक, दूर्वा, धान्यादि, रोचन,

दधि लाज जातांकुर कुंकुम कस्तूरी ।
पूर्णघट च्युत-पल्लव सारि सारि ।।

दधि, लाजा, जातांकुर, कुंकुम, कस्तूरी, पूर्णघट, च्युत-पल्लव श्रेणीबद्ध रखे गये हैं ।

हंस शुक सारक मयूर सुनादित ।
वसन्त प्रकाश गीत भ्रमरेर गीत ।।

हंस, शुक, सारिका और मयूरकी सुन्दर ध्वनि हो रही है । बसन्त-आगमन गीत और भ्रमरोंकी गुन्जार हो रही है ।

आबिर चन्दन चुआ धूप दीप मधु ।
गौरचन्द्र निर्म्मञ्छना करे कुलबधू ।।

अबीर, चन्दन, चोया, धूप, दीप और मधु लेकर कुलबधुएँ गौरचन्द्रकी परीछन कर रही हैं ।

शङ्ख घण्टा मृदङ्ग चामर जयध्वनि ।
उपाङ्ग खाम्बाज रुद्र कविलाश बेणी ।।

शंख, घंटा, मृदङ्ग वज रहे हैं, चँवर डुलाया जा रहा है, जयध्वनि हो रही है । सांगोपांग खमाज राग रुद्र तालमें गाया जा रहा है ।

सप्त स्वरा स्वर मण्डल रवाव खमके ।
डम्फ वीणा धूसरी बाजाय सर्व्वलोके ।।

सप्त स्वरमें गठित रवाव वाद्यके स्वर मण्डल धमक रहे हैं । सब लोग डम्फ, वीणा, धूसरी बजा रहे हैं ।

बङ्ग हैते नवद्वीपे आइला गौरचन्द्र ।
आनन्दित नवद्वीप गाय जयानन्द ।।

श्रीगौरचन्द्र पूर्व वङ्गसे नवद्वीपमें आ गये, जयानन्द कहते हैं कि सारा नवद्वीप आनन्दित हो रहा है।

पूर्वबङ्गालका सम्मान और भेंटें

नवद्वीपके निमाई पण्डित धनोपार्जनके लिए परदेश गये थे । उनका नाम सब देशोंमें प्रसिद्ध हो रहा है । पूर्ववङ्ग-निवासियोंको हमारे प्रभुने विद्या और कीर्त्तन दोनों ही रसोंसे उन्मत्त कर दिया था । उन्होंने नदियामें निमाई पण्डितका नाम मात्र सुना था, अब उनको देखकर समझा कि वे क्या वस्तु हैं । जैसी उनकी अपरूप रूपराशि है, वैसा ही उनका असाधारण पाण्डित्य है, वैसा ही उनका अपूर्व प्रेमभाव है। उनको देखकर सब लोगोंने विश्वास कर लिया कि ये नदियाके अवतार हैं । नदियाके अवतार श्रीगौराङ्ग-रूपसे पूर्वदेशवासी मुग्ध हो गए । प्रभु जब घर लौटे तो उन लोगोंने अपनी अपनी शक्तिके अनुसार जिसके घरमें जो उत्तम वस्तु थी, वह लाकर प्रभुके चरणोंमें समर्पण की । सुवर्ण रजत, जलपात्र, दिव्यासन, वसन, आभूषण, धन-रत्न प्रचुर परिमाणमें देकर उन्होंने प्रभुको सन्तुष्ट किया । प्रभुने सबके प्रति शुभ दृष्टिपात करके सन्तोषपूर्वक वह सब परिग्रह स्वीकार किया । श्री चैतन्य भागवतमें लिखा है—

तबे प्रभु गृहे आसिबेन हेन शुनि ।
जार जेन शक्ति सबे दिला धन आनि ।।
सुवर्ण, रजत, जलपात्र, दिव्यासन ।
सुरङ्ग कम्बल बहु प्रकार वसन ।।
उत्तम पदार्थ जत छिल जार घरे ।
सभेइ सन्तोषे आनि दिलेन प्रभुरे ।।
प्रभुओ सभार प्रति कृपादृष्टि करि ।
परिग्रह करिलेन गौराङ्ग श्रीहरि ।।

प्रभुके साथ पूर्व वङ्गवासी अनेकों छात्र आये हैं ।

अनेक पड़ूया सब प्रभुर सहिते ।
चलिलेन प्रभुस्थाने तथाइ पड़िते ।।

प्रभुके साथ अनेक विद्यार्थी थे जो प्रभुके स्थानपर रहकर वहीं पढ़नेको चले आये ।

प्रभुका स्वागत और गङ्गाजीपर कीर्त्तन

श्रीगौराङ्ग अपराह्णमें नदियामें आ पहुँचे । गङ्गाके घाट पर लाखों आदमी उनके दर्शनकी अभिलाषासे एकत्रित हुए हैं । नदियावासी कुलनारीवृन्द गङ्गाके घाटको सुशोभित करती हुई खड़ी हैं । हमारे प्रभु निजजनके साथ हँसते-हँसते गङ्गाके तीरपर

उतरे। वे मानो अपने घरकी बात कुछ जानते ही नहीं। गङ्गाके घाटपर सभी गये हैं, उनमें श्रीअद्वैत प्रभु, श्रीवास पण्डित, गदाधर, वक्रेश्वर, मुरारि आदि भक्तगण तथा प्रभुके वयस्यगण भी हैं। सबके साथ यथायोग्य नमस्कार, प्रेमालिङ्गन, वन्दना आदि प्रीति सम्भाषण करके प्रभुने कीर्त्तनमें योगदान किया। सभी उदास होकर खड़े थे, प्रभुने इसे समझकर ही गङ्गाके किनारे सङ्कीर्त्तन प्रारम्भ किया।

लक्ष्मीर वियोग कथा मने मने जानि।
प्रेमानन्दे कीर्त्तने नाचेन द्विजमणि॥

द्विजमणि गौरचन्द्र अपनी प्राण प्रियतमा लक्ष्मीप्रियाके वियोगकी बात मनमें जानकर प्रेमानन्दमें कीर्त्तन करने लगे।

प्रभुके निजजनोंने समझ लिया कि प्रभुका उद्देश्य क्या है? श्रीभगवान भक्तका मन समझकर उनके मनके अनुसार कार्य करते हैं। भक्त भी श्रीभगवानका मन समझते है, और उनके प्रीत्यर्थ उनके मनके अनुसार कार्य करते हैं। निजजन तथा भक्तगणने समझा कि प्रभुको प्रियाका शोक उमड़ उठा है, उसको वह भगवद्-गुणानुकीर्त्तनके द्वारा शान्त करना चाहते हैं, अतएव वे लोग भी प्रभुके साथ कीर्त्तनान्दमें उन्मत्त हो उठे। गङ्गातीर पर सबके मुँहसे हरि हरि ध्वनि सुन पड़ी। प्रभुके उस दिनके प्रेम-विह्वल भावको देखकर भक्तगणने समझा कि प्रभुका दुःख कितना गम्भीर है। वे उनको शान्त करके घर लाये।

प्रभुका घर आना और मातासे भेंट

प्रभु सन्ध्याकालमें अपने घर आये। उनके साथ बहुतसे लोग थे, बहुत सी द्रव्य-सामग्री थी।

व्यवहारे अर्थ-वित्त अनेक लइया।
सन्ध्याकाले गृहे प्रभु उत्तरिला गिया॥
(चैं० भा०)

बहुत-सी द्रव्य-सामग्री लेकर सन्ध्या समय प्रभु अपने घर आ उतरे।

शचीमाता विषण्ण वदनसे मालिनी देवी आदि आत्मीय पुरनारीवर्गको साथ लेकर घरके द्वारपर खड़ी हैं। उनके मनमें सुख नहीं है, मुखसे बात नहीं निकल रही है, चित्र-पुत्तलिकाके समान खड़ी होकर सब देख रही हैं। प्रभुने आकर धन-रत्न द्रव्यादि माताके चरणोंमें समर्पित कर उनको प्रणाम करके चरणधूलि लेकर सिर पर लगाया।

दण्डवत् करि प्रभु जननी चरणे।
अर्थ-वित्त सकल दिलेन तान स्थाने॥
(चैं० भा०)

प्रभु माताके मुखकी ओर देखने लगे। माताके मुंहसे कोई बात नहीं निकल रही है, मुंह शुष्क और विषादग्रस्त है। उनके मनमें जो दुःख है, उसको समझनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। प्रभुमें भी नहीं है। परन्तु शचीमाता बड़ी धैर्यशालिनी रमणी हैं। इसी कारण वे इतनी देर तक चुप खड़ी हैं। क्रन्दनके वेगको अत्यन्त कष्टपूर्वक दबा रक्खा है। उनके नेत्रोंकी धारा अन्तर्मुखी होकर अन्तरमें बह रही है। वे एकबारगी काष्ठवत खड़ी हैं। श्रीगौराङ्गने पुनः माताके चरणोंकी धूलि लेकर सिर पर धारण की। तथापि माताने कोई बात न की। परन्तु मन ही मन पुत्रको कोटिशः शुभाशीर्वाद दिया।

पुनरपि पदधूलि लय विश्वम्भर।
मलिन वदन शची ना कहे उत्तर॥
(चै० मं०)

तब शचीनन्दनने विस्मयपूर्ण नेत्रोंसे धीरे-धीरे प्रश्न किया—

केने हेन माता तोमार विरस वदन।
तोमारे मलिन देखि पोड़े मन मोर॥
(चै० मं०)

माँ! तुम्हारा मुख मलिन क्यों है? तुम्हें मलिन देखकर मेरा मन बड़ा तप्त हो रहा है।

श्रीगौर-भगवानकी परीक्षाकी सीमा नहीं है। सर्वज्ञ होकर भी जीवके साथ अज्ञताका छलकरके हृदयकी बात बाहर निकाल लेते हैं। हमारे प्रभु अन्तर्यामी हैं। उनको कुछ भी अज्ञात नहीं है। तथापि माताके साथ उन्होंने यह छल किया है। यह उनका ढङ्ग है। रंगीले प्रभु अपनी माताके साथ ढङ्ग करनेसे बाज नहीं आते। वे बड़े रंगीले और ढङ्गबाज हैं। उनका जैसा रङ्ग है, वैसा ही ढङ्ग है। वे अनेक प्रकारके ढङ्ग जानते हैं। रङ्ग-रङ्गहीमें उनकी लीला होती है। लीलामय श्रीगौर भगवानकी लीला स्फूर्ति इसी रङ्ग-ढङ्गमें होती है।

पुत्रकी इस प्रकारकी बात सुनकर शचीदेवी अब स्थिर न रह सकीं। उनके दोनों नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। उससे उनका वस्त्राञ्चल भीग गया। उनका कण्ठ-स्वर गद्गद हो गया। वे बात करनेकी चेष्टा करती हैं, पर कर नहीं पातीं।

ए बोल शुनिया शची गद्गद भाव।
झरये आँखिर नीर भिजे हिया वास॥
(चै० मं०)

अत्यन्त कष्टपूर्वक अन्तमें वह दारुण अमङ्गल वाणी शचीमाताके मुखसे निकल पड़ी।

कहिते ना पारे किछु सकरुण कण्ठ।
कहिल आमार बधू गेला त वैकुण्ठ॥
(चै० मं)

अपने कण्ठ से वे कुछ कह नहीं पा रही हैं। अवरुद्ध कण्ठसे बोलीं कि मेरी बहूका वैकुण्ठवास हो गया।

श्रीगौराङ्ग प्रभु नरवपु धारण करके नदियामें अवतीर्ण हुए हैं। उनके सभी कार्य मनुष्यके समान हैं। वे सर्व शक्तिमान भगवान होकर भी शचीनन्दन, शचीके दुलारे हैं, नदियाके निमाई पण्डित हैं। माताके मुखसे पत्नी-वियोगकी बात सुनकर शचीनन्दनका मर्म व्यथित हो उठा। वे विषण्ण वदन होकर कुछ देर निस्तब्ध खड़े रहे। कनक-केतकीके समान प्रभुके दोनों नेत्रोंमें आँसू छलछला गए। वे प्रियतमाके शोकमें सबके सामने रो पड़े।

ए बोल शुनिया प्रभु विरस अन्तर।	यह बात सुनकर प्रभुका मन व्यथित
छल छल करे आंखि करुणार जल ॥	हो उठा और दुःखके कारण अश्रुजल
(चै० मं०)	आँखोंमें छलाछला आये।

श्रीभगवान जब मनुष्य होकर आते हैं तो वे मनुष्यके समान ही सारे कार्य करते हैं। ऐसी अवस्थामें साधारण लोग जो करते हैं, वही उन्होंने भी किया।

निमाई पण्डितकी अवस्था १९ वर्ष है। वे देश-मान्य पण्डित-शिरोमणि हैं। उनके असंख्य छात्र हैं। उस समय बड़े-बड़े नदियाके पण्डित प्रभुके घर पर उपस्थित थे। गुरुजन, आत्मीय स्वजन और वन्धु-वान्धव सभी हैं। प्रियतमाके शोकमें आँखोंमें आँसू आते देखकर वे स्वयं ही कुछ अप्रतिभ हो उठे, और कुछ लज्जित हो गए। तत्काल चतुर चूड़ामणिने अपनेको सँभालकर मातासे कहा—

शोक ना करिह तुमि शुन मोर माता।	हे मेरी माँ! सुनो, तुम शोक नहीं
निर्ब्बन्ध ना घूचे जेइ लिखेन विधाता ॥	करना। विधाताने जो कुछ लिखा है वह
(चै० मं०)	अन्यथा नहीं होता।

इतना कहकर प्रभुने अपनेको सँभाला और माताके साथ दूसरी बातें करने लगे।

एबोल बलिया विश्वम्भर पाइल चिन्ता।
आत्म सङ्गोपन करे कहे नाना कथा ॥
(चै० मं०)

प्रभुके भोजनकी तैयारी

प्रभुने मातासे कहा—"माँ! मुझे बड़ी भूख लगी है। बहुत दिनोंसे तुम्हारे हाथकी रसोई नहीं मिली। तुम रसोई करो। मैं गङ्गास्नान करके आता हूँ। और सब बातें बादको होंगी।"

सेइ क्षण प्रभु शिष्यगणेर सहिते।	उसी समय प्रभु अपने शिष्योंके
चलिलेन शीघ्र गङ्गा मज्जन करिते ॥	साथ गङ्गास्नानके लिये चल पड़े।
सेइ क्षणे गेला आइ करिते रन्धन।	और तभी शचीमाता रन्धन करने
अन्तरे दुःखिता लइ सर्व्वपरिजन ॥	चली गयीं। वे सभी परिजनों सहित
(चै० भा०)	अन्तरमें दुःखी थीं।

प्रभु अपने वयस्यगण और छात्रगणके साथ गङ्गास्नानको चले। शचीमाता रसोई घरमें गयीं। निमाईको बहुत दिनोंसे देखा न था। पुत्रके चन्द्रमुखको देखकर वृद्धाको द्विगुण बल मिला। वे पुत्रवधुके शोकमें शैया पर पड़ी थीं। आज वे क्लेशरहित होकर रसोई घरमें जाकर नाना प्रकारके शाक-व्यञ्जन आदि तैयार करके निमाईको खिलानेके लिए अत्यन्त व्यस्त होकर रसोई कर रही हैं। क्योंकि निमाईने कहा है कि उसे भूख लगी है। जान पड़ता है, वह दिन भर कुछ भोजन नहीं कर सका है, यह सोचकर शचीमाता बहुत थोड़े समयमें रसोई तैयार करके बैठी हैं।

इसी समय शचीनन्दन गङ्गा स्नान करके आये और देवगृहमें प्रविष्ट हुए। सन्ध्या-वन्दनादि तथा ठाकुर पूजा आरती आदि समाप्त करके वे माताके पास रसोई घरमें भोजनके लिए बैठे। आज शचीमाता बहुत दिनोंके बाद अपने सोनेके बाछा निमाईको अपने पास पाकर अत्यन्त प्रेमपूर्वक भोजन करा रही हैं, परन्तु उनके मनमें तनिक भी आनन्द नहीं है। प्रभु यह जानते हैं। प्रभुके मनमें भी आनन्द नहीं है, इस बातको प्रभुकी माता विशेष रूपसे समझ रही हैं। उनका पुत्र शयन-गृहकी ओर देखना नहीं चाहता। उसके मुँहकी हंसी कपट पूर्ण है यह शचीमाता दिव्य चक्षुसे देख रही हैं, यह सोचकर उनको दारुण मनो-व्यथा हो रही है। वे वस्त्राञ्चलसे आँखोंके आँसू पोंछ रही हैं, कि कहीं निमाई देख न ले, नहीं तो वह बड़ा दुःख पायेगा।

प्रभुने भोजनके लिए बैठकर माताके साथ बनावटी हँसी हंसकर दो एक बातें की। उनकी बहूकी बात तब नहीं उठायी।

प्रभुका आत्मीय स्वजनोंके साथ रस-रङ्ग

भोजन समाप्त करके प्रभु देवगृहके द्वारपर जाकर बैठ गये। वहाँ अत्मीयजन तथा निजजन घेरकर बैठ गये। वे उनसे पूर्ववङ्गके लोगोंके विषयमें बातें करने लगे। वङ्गदेशकी बोली अनुकरण करके हमारे प्रभु हंसते-हँसते पूर्ववङ्गके निवासियोंको उपलक्ष्य करके नाना प्रकारकी हास्यकी बातें करने लगे।

सभार सहित प्रभु हास्य कथा रङ्गे।
कहिलेन जेन मत आछिलेन वङ्गे॥

सभी लोगोंके साथ प्रभु हँसी मजाकके रङ्गमें पूर्ववङ्गमें किस प्रकार रहे यह कहने लगे।

वङ्गदेशी वाक्य अनुकरण करिया।
बङ्गालेरे कदर्थेन हासिया हासिया॥
(चै० मं०)

पूर्ववङ्ग देशकी बोल-चालके ढङ्गकी नकल करके वहांके बङ्गालियोंका हँस-हँस परिहास करने लगे।

क्या यह प्रभुके रस-रङ्गका समय था? सब उपस्थित लोग प्रभुके भाव और गतिको देखकर अवाक रह गये। लक्ष्मीप्रिया देवीके तिरोभावकी बात उठाकर प्रभुके

मनको इस समय दुःखित करनेका साहस किसीको न हुआ। कुछ देर तक प्रभुके साथ इसी प्रकार आमोद-प्रमोद करके सब अपने-अपने घर गये।

दुःखरस हइबेक लागि आप्तगण।
लक्ष्मीर विजय केहो ना करे कथन॥
कथोक्षण थाकिया सकल आप्तगण।
विदाय हइया गेला जार जे भवन॥
(चै० भा०)

उनको दुःख होगा इस कारण उनके निज-जन श्रीमती लक्ष्मीप्रियाजीके पर-लोक गमनकी बात उनसे नहीं बोले। और थोड़ी देर ठहरकर सभी अपने-अपने घर चले गये।

प्रभु और माता एकान्तमें

प्रभु अब अकेले घरमें बैठकर पान चबा रहे हैं। उनके मनमें चाहे जो रहा हो, मुँहसे उन्होंने सबके सङ्ग हास्य-कौतुक करके निजजनको सन्तुष्ट किया। यह शचीमाता घरमें बैठकर सब कुछ देख रही हैं, और अपने मनके दुःखको वे ही समझ रही हैं। पुत्र इस समय अकेला घरमें बैठा है। तो भी वे उनके पास आ नहीं पा रही हैं, क्योंकि दोनोंके मिलते ही दोनोंका दुःख समुद्र उमड़ उठेगा। इसी भयसे शचीमाता पुत्रके पास नहीं आ रही हैं। प्रभु यह समझकर स्वयं ही माताके पास गये।

बसिया करेन प्रभु ताम्बुल भोजन।
नाना हास्य परिहास्य करेन कथन॥
शचीदेवी अन्तरे दुःखित हइ घरे।
काछे नाहि आइसेन पुत्रेर गोचरे॥
आपनि चलिल प्रभु जननी सम्मुखे।
दुःखित वदन प्रभु जननीरे देखे॥

प्रभु शचीमाताके शयन-गृहमें जाकर उनके पास बैठ गये। माताके मुखकी ओर देखकर वे समझ गये कि वे अत्यन्त शोक-सन्तप्ता हैं। प्रभु माताके पास सटकर बैठ गये। इससे शचीमाताका अङ्ग शीतल हो गया, प्राण जुड़ा गये। बहुत दिनोंके बाद वृद्धा शचीमाताने पुत्रके अङ्गस्पर्शसे इतने दुःखोंके बीच भी आनन्दका अनुभव किया। तब प्रभुने माताके बदन पर हाथ देकर मुँहकी ओर सप्रेम दृष्टि डालकर कहा, "माँ! मैं इतने दिनोंके बाद परदेशसे सकुशल घर लौट आया। तुम इतनी म्रियमाण क्यों हो रही हो? तुम्हारे इस दुःखका कारण क्या है? तुम्हारे मुखके वचनोंमें प्रसन्नता कब देखूंगा? वह न देखकर मैं तुम्हें दुःखिता देख रहा हूँ॥"

जननीरे बोले प्रभु मधुर वचन।
दुःखिता तोमारे माता देख कि कारण॥

प्रभु मधुर वचनोंसे मातासे कहते हैं, "माँ! तुमको दुखी देख रहा हूँ। क्या कारण है?

कुशले आइलूँ आमि दूर देश हैते।
कोथा तुमि मङ्गल करिवा भाल मते॥

आरो तोमा देखि अति दुःखित बदन।
सत्य कह देखि माता! इहार कारण॥
(चै० भा०)

मैं दूर देशसे कुशल-पूर्वक आ गया। कहाँ तो तुम्हें भली भाँति मङ्गल मनाना चाहिये, और कहाँ तुमको मैं अत्यन्त दुखित देख रहा हूँ। माँ! इसका कारण सच-सच बताओ।"

शठ-शिरोमणि हमारे प्रभु मानो कुछ जानते ही नहीं हैं, इस प्रकार नाट्य करके प्रभुने मातासे यह बात कही। प्रभुकी नकल देखकर हमको इतने दुखके बीच भी हँसी आ रही है। रंगीले प्रभु इतना रङ्ग भी जानते हैं। जान पड़ता है इस प्रकार रङ्ग करनेमें उनको आनन्द मिलता है। परन्तु दुर्बल जीव तो श्रीभगवानके इस प्रकारके रस-रङ्गके समुद्रमें पड़कर प्राणसे हाथ धो सकता है।

शचीमाता पुत्रकी बात सुनकर हतोत्साहित हो उठीं। वे मुँह नीचा करके रोने लगीं और कोई उत्तर न दे सकीं। तब प्रभु स्वयं बोले, "माँ! मैंने सब सुना है। अपनी बहूके अमङ्गलके कारण तुम रो रही हो!" इतना कहकर प्रभु कुछ देर निस्तब्ध हो रहे।

प्रियार विरह दुःख करिया स्वीकार।
तुष्णी हइ रहिलेन सर्व्व-वेद-सार॥
(चै० भा०)

सब वेदोंके तत्व प्रभु प्रियाके विरह-जनित दुःखको स्वीकार कर निस्तब्ध हो रहे।

माताको प्रभुका उपदेश

कुछ देरके बाद प्रभुने आत्मसंवरण करके माताको सुनाकर भागवतका यह श्लोकांश पढ़ा —

कस्य के पति पुत्राद्या, मोह एव हि कारणम्।

पति-पुत्रादि कौन किसका है? कोई किसीका नहीं है। इस सारी प्रतीतिका हेतु है मोह। तब प्रभु माताको सम्बोधन करके शास्त्र-तत्त्व सुनाने लगे। जैसा श्रीचैतन्य-भागवतमें लिखा है —

प्रभु बोले माता दुःख भाव कि कारणे।
भवितव्य जे आछे से घूचिबे केमने॥

प्रभु कहने लगे "माँ! इसमें दुःख क्यों करती हो? जो भवितव्यता होती है वह किसी प्रकार मिट नहीं सकती?

एइमत कालगति केह कारो नहे।
अतएव संसार अनित्य वेदे कहे॥

कालकी गति ही ऐसी है, कोई किसीका नहीं हैं। इसीलिये वेदमें संसारको अनित्य कहा गया है।

ईश्वरेर अधीन जे सकल संसार।
संयोग वियोग के करिते पारे आर।।

यह सारा संसार ईश्वरके आधीन है। जो कुछ संयोग-वियोग होता है उससे अन्यथा कोई कुछ कर नहीं सकता।

अतएव ए सकल ईश्वर इच्छाय।
हइल से कार्य्य आर दुःख केन ताय।।

अतः यह सब ईश्वरकी ही इच्छासे हुआ है, इसमें दुःख क्यों किया जाय?

स्वामीर अग्रेते गङ्गा पाय जे सुकृति।
तारे बड़ आर के आछे भाग्यवति।।

जो सुकृति स्त्री स्वामीके पूर्वही परलोक सिधारती है उससे बढ़कर भाग्यवती कौन हो सकती है?

ठाकुर जयानन्दने चैतन्य मङ्गलमें शोकातुरा जननीके प्रति प्रभु-वाक्यका इस प्रकार वर्णन किया है—

संसार अनित्य माता सबे कृष्ण सत्य।
अमृत छाड़िया देख विष नहे पथ्य।।

हे माता! सारा संसार अनित्य है, एक कृष्ण ही सत्य हैं। देखो, अमृतको छोड़कर विष पथ्य नहीं होता।

अमृतेरे विषज्ञाने ताहा परिहरि।
विषये अमृत ज्ञान खाइले जे मरि।।

जो आदमी अमृतको विष समझकर उसे त्याग देता है और विषको अमृत समझकर उसे खा लेता है, वह निश्चय ही मर जाता है।

लक्ष्मी विभा करि चिन्ता निवारिते नारि।
संसार करिल धन उपार्ज्जन करि।।

लक्ष्मीप्रियासे विवाह करनेके बाद मैं चिन्ताका निवारण न कर सका और धन उपार्जन करके संसार (गृहस्थ) चलाया।

कोथा लक्ष्मी कोथा आमि कोथा एइ अर्थ।
जत देख अर्थ आदि सकल अनर्थ।।

अब कहाँ लक्ष्मीप्रिया है, कहाँ मैं हूँ और कहाँ वह अर्थ है जितने अर्थ आदि देख रही हो सब अनर्थ रूप हैं।

कमल-पत्रेर जल जेन स्थिर नहे।
तेमन चञ्चल जीव एकत्र ना रहे।।

जिस प्रकार कमल-पत्रके ऊपर जल स्थिर नहीं रहता उसी प्रकार यह चञ्चल जीव सर्वदा एकत्र नहीं रह सकता है।

ना कान्द ना कान्द माता ना कर अक्षेमा।
गदाधरे जगदानन्दे समर्पिला तोमा।।

हे माता! तुम मत रोओ, मत रोओ, अमङ्गल मत करो। मैं गदाधर और जगदानन्दको तुम्हारा भार सौंपता हूँ।

आर नवद्वीप छाड़ि ना जाइब कोथा।
तोमा देखि मन्दिरे थाकिब शचीमाता।।

अब मैं नवद्वीप छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा। हे शचीमाता! मैं तुम्हारा दर्शन करके घरपर ही रहूँगा।

प्रभुकी उपर्युक्त उक्तिमें दो बातों पर कुछ विचार करूँगा। उन्होंने शचीमातासे कहा, "मैं विवाह करके धनोपार्जनकी चिन्तासे व्याकुल होकर परदेश गया। धन-सम्पत्ति लाया। किन्तु—

कोथा लक्ष्मी कोथा आमि कोथा एइ अर्थ।"

बड़े दुःखसे हमारे प्रभुने अपने मनकी बात मातासे कह डाली। बड़ी आशा करके वे भली भाँति गृहस्थाश्रम चलानेके उद्देश्यसे परदेशमें धनोपार्जन करनेके लिए गये थे। धनरत्न, दिव्य वसन-भूषण लाकर गृहणीको देकर उसे सुखी करेंगे—यह उनकी मनकी अभिलाषा पूर्ण न हुई, उनकी भली-भाँति गृहस्थी चलानेकी साध न पूरी हुई, इस दुःखसे ही प्रभु माताको यह सारी बात कह गये। मनकी बात प्रभुके मुँहसे निकल गयी है। परन्तु फिर उसी समय उन्होंने सम्हल कर मातासे तत्त्वकी बात कहना प्रारम्भ कर दिया।

"जत देख अर्थ आदि सकल अनर्थ।"

शचीमाताने पुत्रकी बात चुपचाप सुनली और अजस्र अश्रु बहाते हुए रोने लगीं।

प्रभुकी द्वितीय बात और भी दुःख-व्यञ्जक है। वे मातासे बोले—

"आर नवद्वीप छाड़ि ना जाइव कोथा।"

प्रभुकी इस बातसे यही ध्वनित होता है कि वे नवद्वीप छोड़कर चले गये थे, इसी कारण यह दुर्दैव घटित हुआ है। उनका विरह-ताप सह न सकनेके कारण ही उनकी प्रियतमा देह त्याग करके स्वधाम चली गयीं। उन्होंने यह समझकर ही हृदयके अनुतापसे मातासे ऐसी बात कही।

प्रभु माताको सान्त्वना दे रहे हैं, वे शास्त्रदर्शी, तत्त्वज्ञानी पण्डित हैं। तत्त्वकी बात कहते-कहते वे अपनी दुःख कहानी कहने लगे। जैसे शचीमाताका प्राण पुत्रवधूके शोकसे कातर है, वैसे ही प्रभुका मन भी पत्नी-शोकसे सन्तप्त और चञ्चल है। दोनों एक दूसरेके मनको विशेषरूपसे जानते हैं। अतएव कोई दूसरी बात न कहकर वे चुप हो रहे। शचीमाताने पुत्रकी बात सावधानीसे सुनी। उन्होंने और कोई शोक-प्रकाश-सूचक बात कहकर पुत्रके मनमें कष्टको वर्द्धित न किया। उन्होंने सारा दुःख मनके भीतर ही रक्खा।

पुत्रेर वचन शची शुने सावधाने।
शोक ना करिल आर ना करिला मने॥

(चै० मं०)

शचीमाता बहुत ही बुद्धिमती थीं। उन्होंने समझा कि पुत्रके मनमें दारुण व्यथा हो रही है। शचीमाता जानती थीं कि उनका पुत्र बहूके पीछे पागल रहता है। यौवन-सुलभ चपलताके वशीभूत होकर भलीभाँति गृहस्थी करनेके उद्देश्यसे वह

धनोपार्जनकी लालसासे विदेश गया था। जैसे उनकी पुत्रवधूके हृदयमें पति-विरह ज्वाला दीख पड़ी थी, उनके पुत्रके हृदयमें भी वही विरह-ताप जल उठा है—यह बात शचीमाताके समान वृद्धा स्त्रीको समझनेसे बाकी नहीं रही। उन्होंने पत्नी-शोकातुर पुत्रको गोदमें लेकर प्रेमपूर्वक कहा— "बेटा निमाई! तुम मेरे सात राजाके धन, एक माणिक हो! तुम जीते रहोगे तो मुझे अनेक बहू मिल जायेंगी। तुम्हारे चन्द्रवदनको इतने दिन न देखकर मेरे प्राण अत्यन्त व्याकुल हो रहे थे। अब तुम घर आ गये, मेरे मनमें कोई कष्ट नहीं रहा। आओ बेटा! आओ, अब हम सोने चलें। रात अधिक हो गयी है, तुम थके-माँदे हो, चलो विश्राम करो।"

शयन-गृहमें प्रभु

प्रभु और कुछ न बोल सके। शचीमाता उनका हाथ पकड़ कर अपने शयन-गृहमें ले गयीं। माता-पुत्र दोनों आज एक ही घरमें सोये। दूसरे घरमें मालिनी देवी चित्रलेखा आदि दो एक आत्मीय रमणियाँ सोयीं। प्रभुका शयन-गृह सूना पड़ गया।

शैया पर सोनेके बाद प्रभुको नींद न आयी। शचीमाता परिश्रान्त और कातर थीं। वे यथासमय निद्रा ग्रस्त हो गयीं। प्रभुने उस दिन जागकर रात बितायी। प्रभुके मनमें आज छः महीने पहलेकी बातें एक-एक करके याद आने लगीं। अपनी पति-विरह-विधुरा प्रियतमा लक्ष्मीप्रियाकी जगतको आलोकित करने वाली अनुपम अपरूप रूपराशि प्रभुकी आँखोंमें अचानक उद्भासित हो उठी। वे आत्म-संयम न कर पानेके कारण शैयासे उठ बैठे। माताको सोई देखकर घरका दर्वाजा खोलकर शयन-गृहकी ओर चले। शयन-गृहकी ओर ताककर एक लम्बी गर्म साँस ली। धीरे-धीरे घरका द्वार खोला। अपने हाथों प्रदीप जलाया। देखा कि घरमें सब कुछ सुसज्जित है, केवल एक व्यक्ति नहीं है, गृहकी गृहिणी, गृहकी गृह-लक्ष्मी नहीं हैं। प्रभु सिरपर हाथ रखकर जमीन पर बैठ गये। वे मुँह नीचा करके अजस्त्र आँसू बहाते हुए रुदन कर रहे हैं और सोच रहे हैं—"मैंने क्या किया? दुःखी-तापीका दुःख दूर करनेके लिए आया, परन्तु निजजनके दुःखको न समझा। अपनी प्राणप्रियाका प्राण हरण करके मैं स्त्री-हत्याके पापसे लिप्त हो गया हूँ।" अधम ग्रन्थकार-रचित प्रभुकी उक्तिका समयोचित एक पद्य यहाँ उद्धृत किया जाता है—

(१)	(१)
(हाय!) आमि एकि करिलाम।	अरे! मैंने यह क्या किया?
काँदाये घरणी, दिवस रजनी, तारे प्राणे मारिलाम।	पत्नीको दिन-रात घरमें रुला-रुलाकर उसके प्राण हर लिये।
पतिप्राणा नारी, पराणेते मारि, करिलाम महापाप।	पतिप्राणा नारीको प्राणोंसे मारकर मैंने महापाप किया।

(ताइ) मनस्तापे एत, ज्वाला सहि कत, बूझि इहा अभिशाप !	इसीसे मनस्तापकी इतनी ज्वाला मुझे सहनी पड़ रही है—मालुम होता है यह अभिशाप है।
कि पापे कि ह'ल, कर्म्म फलाफल किछु नाहिं बूझिलाम।	यह कर्मका फल किस पापसे हुआ, कुछ भी समझ नहीं पा रहा हूँ।
(हाय) आमि ए कि करिलाम !!	अरे ! मैंने यह क्या किया ?
(२)	(२)
(आमि) कारे बलि मन व्यथा ? मरम वेदना, हृदय यातना, बलिबार नय कथा।	मैं अपने मनकी व्यथा किसे सुनाऊं ? मर्मवेदना और हृदयकी यातना कहनेकी बात नहीं है।
सोनार संसार, ह'ल छारखार। एक लक्ष्मीप्रिया बिने।	लक्ष्मीप्रियाके बिना यह सोने जैसा संसार छार-छार हो गया।
बड़ साध करे, एनेछिनु घरे, सोनार रमणी-धने।	बड़ी अभिलाषा लेकर मैं सोने जैसे रमणीधनको घर लाया था।
ना देखि प्रियाय, कि हय हियाय,	प्रियाको न देखकर न जाने हृदयको क्या हो रहा है ?
(तार) देखा पाइ गेले कोथा।	कहाँ जानेसे उसको देख पाऊँगा ?
(आमि) कारे बलि मन-व्यथा ?	अपने मनकी व्यथा मैं किसे सुनाऊं ?
(३)	(३)
(आमार) कि धरम इथे हबे ? रमणी बधिया, मरि जे काँदिया, मू सम दुःखी के भवे !	मेरा अब यहाँ क्या धर्म होगा ? रमणीका वध करके मैं रो-रोकर मर रहा हूँ। मेरे समान संसारमें कौन दुःखी होगा ?
दुःखिनी प्रियार, मृदु हाहाकार (मोर) एखनो बाजिछे काने।	दुःखी प्रियतमाका मृदु हाहाकार अभी तक मेरे कानोंमें गूंज रहा है।
धार खरसान, विरहेर बान, विषम हानिछे प्राणे॥	उसकी तीव्रधार और उसके विरहका बाण मेरे प्राणोंको जोरसे बींध रहा है।
कोथा गिये आमि, जुड़ाई परानि,	मैं कहाँ जाकर अपने प्राणोंको शीतल करूँ ?
(आर) केऊ नाहि मोर भवे।	अब इस संसारमें मेरा कोई नहीं है।
(आमार) कि धरम इथे हबे ?	अब यहाँ मेरा क्या धर्म रह गया ?

(४)	(४)
ओ मोर लक्ष्मीप्रिया !	अय मेरी लक्ष्मीप्रिया !
बैकुण्ठ छाड़िया, आसिले नदिया, (मोरे) सेविले पराण दिया ।	तुम बैकुण्ठ छोड़कर नदियामें आयीं और और अपने प्राणपणसे तुमने मेरी सेवा की ।
साध मिटाइया, स्वधामे बसिया, (तूमि) केन कर एत रङ्ग ।	मेरे मनकी साध मिटाकर, निज धाममें रहकर तुम इतना रङ्ग क्यों करती हो ?
लक्ष्मी आमार, रङ्गिनी आमार, लहि मोरे तव सङ्ग ॥	हे मेरी लक्ष्मी ! मेरी रङ्गिनी ! मुझे अपने साथ रखो ।
तोमार विरह, बड़इ असह,	तुम्हारा विरह मुझे बड़ा असह्य हो रहा है ।
(ताते) ज्वले गेल मोर हिया ।	उससे मेरा हृदय जल रहा है ।
(पुनः) एस गो लक्ष्मीप्रिया ॥	हे लक्ष्मीप्रिये ! फिर चली आओ ।
(५)	(५)
एस वक्षेर धन ! एस !	हे मेरी हृदय-धन ! आओ ।
शून्य हृदयासन, तोमार कारण, आसिया ताहाते बस !	मेरा हृदयासन तुम्हारे कारण शून्य पड़ा है । आकरके उस पर विराजो ।
ना आसिले तुमि, मरे जाब आमि, एस हृदयेर राणि !	तुम्हारे न आनेपर मैं मर जाऊँगा । इसलिये हे हृदय-रानी ! तुम आओ ।
अयि लक्ष्मीप्रिये, कातर हृदये, बलि शुन दुःख बानी ।	हे लक्ष्मीप्रिया ! मैं कातर हृदयसे कह रहा हूँ मेरी दुःखवाणी सुनो ।
नदियाय पुन, कर वितरण, प्रेम भक्ति - रस ।	नदियामें फिर आकर प्रेम-भक्ति-रस बाँटो ।
एस बक्षेर धन ! एस !!	हे मेरी हृदय-धन ! तुम आओ ! आओ !

श्रीलक्ष्मी-विष्णुप्रिया-तत्त्व

श्रीभगवानने इस बहाने लक्ष्मी स्वरूपिणी निज स्वरूप शक्ति भक्तिदेवीको पुनः नदियामें आह्वान किया । स्वामी-सोहागिनी लक्ष्मी देवीके कानोंमें उनके प्राणवल्लभके करुण आर्त्तनादका अस्फुट स्वर पहुँचा । वे फिर बैकुण्ठमें स्थिर न

रह सकीं उनको पुनः नवद्वीप धाममें अवतीर्ण होना पड़ा। इस बार वे प्रच्छन्न-रूपसे आकर श्रीपाद सनातन मिश्र राजपण्डितकी परम रूपवती कन्या श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके शरीरमें अधिष्ठित हुईं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी साक्षात भक्तिदेवी हैं। उनके साथ मिलकर लक्ष्मीदेवीने इच्छामय प्रभुकी इच्छाको पूर्ण किया। यह श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके साथ श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका जो अपूर्व मधुर मिलन हुआ, वह श्रीगौर-भगवानकी इच्छासे ही हुआ।

श्रीभगवानके प्राणकी व्याकुलतासे यह शुभ मिलन हुआ। ऐश्वर्य और माधुर्यके सम्मिश्रणमें जो परम वस्तु नवद्वीपके राजपण्डित श्रीपाद सनातन मिश्रके घर प्रकट हुई, उसका तत्त्व अत्यन्तही निगूढ़ है। महाजन गणने इस निगूढ़ तत्त्वको बहुत गुप्त रक्खा। परन्तु श्रीगौराङ्गकी कृपासे आज वह कुछ-कुछ प्रकाशमें आया है। प्रभुकी इच्छाशक्ति हैं श्रीश्रीनित्यानन्द प्रभु। प्रभुकी जो इच्छा होती है, श्रीनित्यानन्द प्रभु उसको पूर्ण करते हैं। यह जो श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया तत्त्व जगतमें प्रचरित हुआ है, "जय श्रीविष्णुप्रिया-गौराङ्ग" नामसे कलिग्रस्त जीव आनन्दमें उन्मत्त हो रहे हैं। श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया युगल-सेवाके प्रचारके लिए सारे देशमें आन्दोलन हो रहा है, यह सब श्रीश्रीनित्यानन्द प्रभुका निज कार्य है। प्रभुकी इच्छासे उन्होंने इस शुभकार्यका भार ग्रहण किया है। जो कुछ प्रचार कार्य होता है, सब श्रीश्रीनित्यानन्दप्रभुका अति प्रियकार्य है। उनका सारा भजन-साधन प्रभुके नाम प्रचारको लेकर है।

भज गौराङ्ग, कह गौराङ्ग, लह गौराङ्गेर नाम रे।
जे जन गौराङ्ग भजे से हय आमार प्राण रे॥

यही थी उनकी साधना। इस समय वे प्रभुकी इच्छासे अपने निजजनके द्वारा श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया युगल नामका प्रचार करा रहे हैं। अतएव उनके अन्तरङ्ग भक्तगण उनकी ही प्रेरणासे प्रेमानन्दमें गा रहे हैं—

भज गौर-विष्णुप्रिया, कह गौर-विष्णुप्रिया
लह गौर-विष्णुप्रियार नाम रे।
जे जन गौर-विष्णुप्रिया भजे,
से हय आमार प्राण रे॥

इसमें एक और बात है। श्रीराधा-तत्त्व पहले गुप्त था। श्रीभागवतमें श्रीराधिकाके नामका भी उल्लेख नहीं है। पाँच हजार वर्षके बाद श्रीगौराङ्ग प्रभुकी प्रेरणासे उनके कृपापात्र निजजन षट् गोस्वामीवृन्द श्रीराधा तत्त्वको प्रकाशमें लाये।

श्रीश्रीराधाकृष्ण-युगल-तत्त्व-रहस्यके प्रकाशित होनेमें इतना विलम्ब होनेका कारण क्या था? इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिए इस ग्रन्थमें स्थान नहीं है। परन्तु संक्षेपमें इतना कहना ही यथेष्ट होगा कि यह युगल-तत्त्व, यह श्रीराधा-तत्त्व अतिशय

निगूढ़ वस्तु है। भक्तके भगवान भक्ति और भक्त-तत्त्व समझानेके लिए ही नदियामें अवतीर्ण हुए थे। जीवके अधिकारके अनुसार श्रीभगवानके साधन तत्त्वकी शिक्षा देनी पड़ती है। जो उत्कर्ष बुद्धि-सम्पन्न उत्कृष्ट जीव हैं, श्रीभगवानका तत्त्व समझनेमें समर्थ हैं, उनको भक्तितत्त्व या भक्त-तत्त्व समझनेकी उतनी अधिक आवश्यकता नहीं होती। सत्य, त्रेता और द्वापर युगके भाग्यवान उत्कृष्ट जीव, अपनी साधनाके बलसे, ध्यान-धारणाके बलसे परतत्त्वको हृदयङ्गम कर पाते थे। परन्तु कलिग्रस्त अधम जीवके लिए वह साध्य नहीं। इनके उद्धारका एक मात्र उपाय है भक्तिमार्ग। भक्तिमार्गका प्रधान साधन है भक्त-पूजा। श्रीश्रीराधा-कृष्णतत्त्व भक्त-भगवान-सम्बन्ध-सूचक है। श्रीराधातत्त्व और भक्ततत्त्व अनुरूप है। कलि-ग्रस्त जीवोंके लिए इस भक्ततत्त्व या श्रीराधातत्त्वका प्रचार जगतमें प्रभुकी प्रेरणासे कृपासिद्ध श्रीपाद गोस्वामी गणने किया। उसी प्रकार प्रभुकी प्रेरणासे उनके अन्तरङ्ग भक्त श्रीविष्णुप्रिया तत्त्वका जगतमें प्रचार करके कलिग्रस्त जीवका उपकार कर रहे हैं। श्रीराधातत्त्व और श्रीविष्णुप्रिया तत्त्वमें विशेष अन्तर नहीं है। ये तत्त्वकी बातें बहुत सूक्ष्म हैं। इनको समझानेकी शक्ति मुझमें नहीं है। गोलोकगत महात्मा श्रीशिशिर कुमार घोषने लिखा है—

"हे तत्त्व-कथा! तुम सूर्यके समान अति वृहत् तेजस्वी वस्तु हो। मैं तुमको पकड़ नहीं पाता। मैं क्षुद्र हूँ, तुम्हारे तेजको मैं सहन नहीं कर सकता। इस समय मुझे विदा करो! मैं प्रभुके लीलारूपी सुधा-सागरमें प्रवेश करके अपने सन्तप्त अङ्गको शीतल करूंगा। मैं क्षुद्र हूँ। बुद्धि तत्त्वकी बातें पूरी नहीं समझता। जो कुछ समझ पाया, वह सारी बातें यहाँ दे न सका, क्योंकि सारी बातें भाषामें व्यक्त नहीं हो सकतीं।"

मैं भी इतना कहकर तत्त्व-कथासे विदा ग्रहण करता हूँ। कृपालु पाठकवृन्द क्षमा करेंगे।

श्रीलक्ष्मीप्रिया-विष्णुप्रिया एक ही तत्त्व है। श्रीगौराङ्ग प्रभुका नदिया-अवतार ऐश्वर्य लेकर नहीं हुआ। इसी कारण ऐश्वर्यमयी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया प्रभुकी इच्छासे अन्तर्हित होकर माधुर्यमयी, भक्तिस्वरूपा, प्रेममयी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके साथ मिल गयीं। यह सारी बातें अत्यन्त निगूढ़ हैं। नवद्वीप रससे अनभिज्ञ अरसिक भक्तके हृदयमें इन वेद-गोप्य निगूढ़ तत्त्वोंका प्रकाश बहुत साधन-सापेक्ष है। नवद्वीप रसानन्दी रसिक भक्तवृन्द ही इस रसके एक मात्र अधिकारी हैं।

कृपालु पाठकवृन्द श्रीश्रीलक्ष्मी-विष्णुप्रिया-सम्मिलन रहस्यकी इस कहानी पर अविश्वास न करें। यह श्रीगौरभगवानका अलौकिक कार्य है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

कविराज गोस्वामी लिख गये हैं—

अलौकिक लीलाय जार हय ना विश्वास ।
इहलोक परलोक तार हय नाश ॥

श्रीभगवानकी सारी लीला अलौकिक है । वे नरवपु धारण करके अनेक अलौकिक लीला कर गए हैं। अलौकिक लीलारङ्गमें ही उनकी भगवत्ता और ऐश्वर्यका प्रकाश होता है । इसीसे अज्ञ-जीव भगवानके अवतार तत्त्वको समझ लेते हैं ।

हमारे प्रभुने शयन-कक्षमें भूतल पर बैठकर अपनी प्राण प्रियतमा स्वधामगता श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीको आकर्षित किया । जिस प्रकार भक्तके आतुर आह्वानसे श्रीभगवानका आविर्भाव होता है, उसी प्रकार श्रीभगवानकी इच्छा-शक्तिसे भक्तका हृदय भी आकर्षित होता है । लक्ष्मी-विरहोन्माद-दशा-ग्रस्त प्रभुके आकुल आकर्षणसे श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका आविर्भाव हुआ । देवीका आविर्भाव शयन-कक्षमें नहीं, प्रभुके हृदय-मन्दिरमें हुआ । उन्होंने जो शून्य हृदयासन कहकर आक्षेप किया था, वह भक्तके हृदयमें पहुँचा । प्रभुने देखा कि उनकी प्रियतमा लक्ष्मीप्रियाने पुनः उनके हृदय मन्दिरमें अधिष्ठान किया है । गौर-वक्ष-विलासिनीका एकमात्र स्थान श्रीगौराङ्ग-वक्षःस्थल है । प्रभु अपने खोये धनको वक्षःस्थलमें पाकर आनन्दसे द्रवित हो उठे । उनका सारा शोक दूर हो गया । भक्त भगवानका मिलन हुआ । भक्त भगवानने परस्पर मनकी बातें कीं । यह कोई जान न सका । यह जाननेका विषय भी नहीं है ।

ठाकुर जयानन्द रसिक भक्त थे । उन्होंने प्रभुके मनको समझ कर ही लिखा है—

"हेनइ समये ध्वनि, हइल आकाशवाणी,
विष्णुप्रिया गौराङ्ग-गृहिणी ।"

श्रीपाद सनातन मिश्रकी कन्या श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी अवस्था इस समय दस वर्ष है । वे रूप और गुणमें अतुलनीय है । श्रीपाद सनातन मिश्र नवद्वीपके राज-पण्डित हैं । श्रीचैतन्य-भागवतकारने लिखा है—

ताँर कन्या आछेन परम सुचरिता ।
मूर्तिमती लक्ष्मी प्राय सेइ जगन्माता ॥

लक्ष्मी समान श्रीमती विष्णुप्रिया देवी और श्रीगौराङ्गकी प्रथम गृहिणी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी अभेद मूर्ति हैं—श्रीगौराङ्गलीलाके व्यासावतार श्रीवृन्दावनदास ठाकुरने यही सङ्केत यहाँ किया है । लक्ष्मी शब्द प्रायः'लक्ष्मीप्रिया' शब्दका रूपान्तर

मात्र है। साधक भक्त कविकी हस्त-लिखित पोथी देखनेसे यह बात समझमें आ जाती है। ठाकुर लोचनदासने लिखा है—

प्रभुर निकटे आनि, जग-मन-मोहिनी,
विष्णुप्रिया महालक्ष्मी नामा।
तेरछ बयाने बङ्क, हेरि मुख गौराङ्ग,
मन्द मन्द हासि अनुपमा ॥

महालक्ष्मी नामा जग-मन-मोहिनी विष्णुप्रिया प्रभुके निकट आयीं। और अपनी तिरछी चितवनसे श्रीगौरचन्द्रका मुख देखकर मन्द-मन्द अनुपम हँसी हँसने लगीं।

महालक्ष्मी नामा श्रीपाद सनातन मिश्रनन्दिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवी और महालक्ष्मीरूपा श्रीपाद वल्लभाचार्य-नन्दिनी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवी एक वस्तु और एक तत्त्व हैं, यह उपर्युक्त पदमें रसिक भक्त कविने आभास प्रदान किया है।

ठाकुर लोचनदास दूसरी जगह लिखते हैं—

विश्वम्भर विष्णुप्रिया, बासरे बसिला गिया,
आइहगण करे अनुमान।
एइ लक्ष्मी विष्णुप्रिया, विष्णु विश्वम्भर हैया,
पृथिवी ते कैल आगमन ॥

जब विश्वम्भर और विष्णुप्रिया कौतुक गृहमें जाकर विराजे तब रमणी-गणने अनुमान किया कि लक्ष्मी विष्णु-प्रिया होकर और विष्णु विश्वम्भर होकर पृथ्वी पर अवतरित हुये हैं।

यह सब प्रभुके द्वितीय विवाहके समयकी बात है। अन्तिम चरणमें रसिक भक्त कविने और भी स्पष्ट रूपसे श्रीविष्णुप्रिया-तत्त्वको जगतमें प्रकाशित किया है। श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका प्रभुकी इच्छासे श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी देहमें अधिष्ठान हुआ था, इसको साधक कवि ठाकुर लोचनदासने प्रकाश करके कह दिया है।

श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीका तेज और ज्योति जब श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके शरीरमें प्रविष्ट हुई, उस समय उनको नवद्वीप वासी नर-नारियोंने किस रूपमें देखा, यह भी श्रीलोचनदासकी भाषामें श्रवण कीजिए।

विष्णुप्रियार अङ्ग जिनि लाख बान सोना।
झल्मल् करे जेन तड़ित प्रतिमा ॥
(चै० मं०)

श्रीगौराङ्ग प्रभुकी स्वरूप शक्ति ह्लादिनीकी सारभूता, साक्षात भक्ति स्वरूपा श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी आद्यन्त लीलासे युक्त एक सुवृहत् पुण्य चरित कुछ दिन पूर्व स्वयं प्रभुने इस अधम ग्रन्थकारके केश पकड़कर लिखवाया है। कृपालु प्रिय पाठकवृन्द कृपया इस श्रीग्रन्थ* का पाठ करके गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके सम्बन्धमें सारे तत्त्व जान सकते हैं!

---

*इसका हिन्दी अनुवाद शीघ्र ही मुद्रण होकर तैयार होनेकी आशा है। —प्रकाशक

भुवन-मङ्गल श्रीगौराङ्ग प्रभुने प्रियतमाके साथ युगल मिलित होकर प्रच्छन्न भावसे युगल-विलास किया। प्रच्छन्न अवतारकी लीला प्रच्छन्न भावसे ही संघटित होती है। नवद्वीप नित्यधाम है। प्रभुकी नित्यलीला इस नवद्वीपमें सदासे होती आ रही है, और सदा होती रहेगी। उनका यह सारा लीलारङ्ग लोकशिक्षाके लिए है। उन्होंने स्वयं यह बात संन्यासके पूर्व अपने भक्तोंको समझा दी थी।

लोकशिक्षा निमित्त से आमार सन्यास।
एतेक तोमरा सब चिन्ता कर नाश।।
(चै० भा०)

इसके कुछ दिन बाद श्रीगौराङ्ग प्रभुने दूसरा विवाह किया। वृद्धा जननीके सन्तोषके लिए उन्होंने अति शीघ्र श्रीपाद सनातन मिश्रकी परम रूपवती और सौभाग्यवती दुहिता श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको अपनी अङ्कलक्ष्मी बनाकर अपनी प्रथम गृहिणी श्रीमती लक्ष्मीप्रिया देवीके विरह-शोकको संवरण किया।

श्रीगौराङ्ग-आवाहन

हे श्रीगौराङ्ग-लीला-मधु-लुब्ध प्रिय पाठक वृन्द! आओ, सब मिलकर एक स्वरसे रो-रोकर आज श्रीगौराङ्ग प्रभुके शुभ जन्म दिवसके अवसर पर दिल खोलकर एक बार उनका प्रेमावाहन करें। हमारे प्रभु अवतार शिरोमणि हैं। एक दिन हृदयके आवेगमें मैंने लिखा था—

अवतार शिरोमणि गौराङ्ग आमार।
प्रेम धन विलाइते एस हे आवार।।

हे मेरे अवतार-शिरोमणि गौराङ्ग! प्रेम-धनका वितरण करनेके लिए फिर आओ।

करुणार निधि तुमि दयाल ठाकुर।
पतितेर प्रति तव करुणा प्रचुर।।

तुम दयाके सागर, दयालु ठाकुर हो। अधम जीवोंके प्रति तुम्हारी अपार करुणा है।

जीवेर दुर्गति हेरि काँदिछे पराण।
तराइते पापी-तापी एस भगवान।।

जीवोंकी दुर्गति देखकर प्राण रोते हैं। पापियों-तापियोंको तारनेके लिए हे भगवान! पधारो।

दुर्द्दिने पड़िया जीव करे हाहाकार।
पतित पावन नाम ना लेय तोमार।।

जीव दुर्दिनमें पड़कर हाकाकार कर रहे हैं, परन्तु फिर भी तुम्हारा पतित-पावन नाम नहीं लेते।

कलिर भावे तारा हये हतज्ञान।
तोमारे भूलिया करे वृथा अभिमान।।

कलियुगके प्रभावसे वे ज्ञान-शून्य होकर तुमको भूलकर वृथा अभिमान करते हैं।

धन-जन-सम्पदेर माया-मुग्ध हये ।
दिनान्ते बारेक तव नाम नाहि लये ।।

धन-जन-सम्पत्तिकी मायासे मुग्ध होकर दिन भरमें एक बार भी तुम्हारा नाम नहीं लेते ।

कुबुद्धि, कुतर्क-रत विचार-प्रवीण ।
दुश्छेद्य पाषाण सम हृदय कठिन ।।

कुबुद्धि और कुतर्कमें रत विचारोंमें प्रवीण उनका हृदय दुश्छेद्य पाषाणके समान कठोर है ।

हिंसा-द्वेष परतन्त्र दया-माया-हीन ।
विषम विषयासक्त रिपुर अधीन ।।

वे हिंसा और द्वेषसे परवश, दया-माया-हीन तथा विषम विषयासक्ति रूपी शत्रुके अधीन हो रहे हैं ।

ए सकल कलिजीवे दया करि तुमि ।
केशे धरि उद्धारह गौर-गुणमणि ।।

हे गौर-गुणमणि ! कलिग्रस्त इन सब जीवों पर दया करके केश पकड़कर उनका उद्धार करो ।

जननीके बलेछिले आसिबे आबार ।
ताइ तव भक्तवृन्द डाके बारम्बार ।।

तुमने माँसे कहा था कि फिर आऊँगा । इसीसे तुम्हारे भक्त लोग तुनको बार-बार पुकारते हैं ।

कृपा करि नाथ ! पुनः एस नदियाय ।
हरिनाम दिये तार पापी अभागाय ।।

हे नाथ ! कृपा कर इस नदियामें फिरसे आओ और हरिनाम देकर अभागे पापियोंको तारो ।

दयार सागर तुमि करुणावतार ।
असाध्य साधन हय कृपाय तोमार ।।

तुम दयाके सागर हो और करुणाके अवतार हो और तुम्हारी कृपासे असाध्य भी साध्य हो जाता है ।

परम पुरुष तुमि स्वतन्त्र ईश्वर ।
कटाक्षे करिते पार त्रिलोक उद्धार ।।

तुम परम पुरुष और स्वतन्त्र ईश्वर हो और अपने कटाक्ष मात्रसे ही त्रयलोकका उद्धार कर सकते हो ।

इच्छामय प्रभु तुमि त्रिजगत पति ।
पतित पाखण्डीगणे दाओ हे सुमति ।।

हे प्रभु ! तुम इच्छामय और त्रयलोकके स्वामी हो। पतितपाखण्डी लोगोंको सुमति प्रदान करो ।

कृपा करि कर प्रभु शुभ दृष्टि-पात ।
अधम तारण तुमि अनाथेर नाथ ।।

हे नाथ ! कृपा करके अपनी शुभ दृष्टि डालो । तुम नीचोंको तारने वाले और अनाथोंके नाथ हो ।

सर्व्व अवतार सार गौराङ्ग आमार ।
विष्णुप्रिया सङ्गे लये एस हे आबार ।।

सब अवतारोंके सार मेरे गौराङ्ग ! विष्णुप्रियाके साथ फिर पधारो ।

युगले देखिते तोमा करि अभिलाष।
निशदिन काँदितेछे दास हरिदास ॥

तुमको युगल रूपमें देखनेकी अभिलाषासे यह दास हरिदास निशिदिन क्रन्दन करता है।

श्रीगौराङ्ग अवतार सर्वश्रेष्ठ अवतार है, महाजनगणने यह बात एक-मतसे स्वीकार की है। वे नदियामें संकीर्त्तन यज्ञमें अवतीर्ण हुए थे। संकीर्त्तन महायज्ञमें अब भी उनका आविर्भाव होता है। वे संकीर्त्तनके पिता अर्थात् प्रवर्त्तक हैं। वे भुवन-मङ्गल करुणाके अवतार हैं। वे युगधर्म-पालक हैं। इसी कारण महाजनगण उनकी वन्दना कर गये हैं—

आजानुलम्बित भुजौ कनकावदातौ,
संकीर्तनैक पितरौ कमलायताक्षौ।
विश्वम्भरौ द्विजवरौ युगधर्मपालौ,
वन्दे जगत् प्रियकरौ करुणावतारौ ॥

श्रीगौराङ्ग प्रभुने संन्यास ग्रहणके पूर्व शचीमाताको समझाते हुए कहा था, (यथा श्रीचैतन्य-भागवतमें)—

आर ओ दुइ जन्म एइ संकीर्त्तनारम्भे।
हइब तोमार पुत्र आमि अविलम्बे ॥

उन्होंने और एक जगह कहा है—

एइ मत आछे आर दुइ अवतार।
कीर्तन आनन्द रूप हइब आवार ॥
(चै० भा०)

यह सब प्रभुकी स्वमुखसे निःसृत वाणी है। वे फिर आवेंगे। यह शुभवाणी वे स्वयं मातासे कह गये हैं। यह आशावाणी विफल होनेवाली नहीं है। प्राणपणसे सरल भावसे रो-रोकर उनको पुकारनेसे हमारे दयालु प्रभु फिर आवेंगे। वे सङ्कीर्त्तन-यज्ञेश्वर हैं। संकीर्त्तन यज्ञमें उनका शुभ-आवाहन करने पर, प्रेम-विह्वल चित्तसे उनको खुलकर पुकारने पर वे निश्चय ही आवेंगे। प्रभुके युगलरूपसे मुग्ध भक्तवृन्द उनका युगल रूपमें ही प्रेमाह्वान करते हैं। वे युगल रूपमें ही आवेंगे। आओ भाई! सब मिलकर आज प्रभुकी जन्म तिथिके दिन उनको प्राण खोलकर पुकारें। बोलो **"जय श्रीविष्णुप्रिया गौराङ्ग!"**

युगल-आवाहन

आओ, कोटिचन्द्र-विनिन्दित भुवन-मोहन अपरूप-रूपराशि लेकर श्रीगौर-विष्णुप्रिया ! युगलरूपमें आओ। पुनः रूप-क्षुधार्त्त कलिके जीवोंको तुम्हारी उस अपरूप युगल-रूप-माधुरीका दर्शन करनेकी बड़ी साध हो रही है। हे करुणामय नदिया-विभु ! हे माँ करुणामयि नवद्वीपेश्वरी ! कृपा करके उनकी रूप-क्षुधाको दूर करो, उनके प्राणोंकी रक्षा करो। युगलरूप-क्षुधासे वे छटपटा रहे हैं। रूप-सुधा वारिधिकी सुधा प्रदानकर उनकी रूप-क्षुधाको शान्त कर प्राण-दान करो। बहुत दिन बीते, परम भाग्यवान कलिके जीव जिस रूप-सागरमें डूबकर स्वर्ग-सुखको तुच्छ समझते थे, चतुर्वर्ग मुक्तिको शुक्ति मानकर गौर-नामका डङ्का बजाकर प्रेमानन्दमें उन्मत्त होते थे, जिस रूप-रसके आमोदमें तल्लीन होकर नदियावासी नर-नारी आहार-निद्रा त्याग करके तुम्हारा भजन करके अपनेको कृतार्थ समझते थे, उसी रूपार्णवको लेकर हे प्रभु ! एक बार युगल रूपमें आओ, आओ, आओ। कातर कण्ठसे तुम्हारी रूप-तृष्णाके कातर अगणित भक्तवृन्द तुम्हारा प्रेमावाहन करते हैं, महासंकीर्त्तन यज्ञके यज्ञेश्वर, कलिग्रस्त जीवोंका उद्धार करने वाले, प्रच्छन्नावतार हे प्रभु ! एक बार कृपा करके पतित पावनी तड़ित-प्रतिमा अपरूप रूप-लावण्यमयी, कैवल्यदात्री, कलिजीव-दुःख-हन्त्री, तुम्हारी शक्ति-स्वरूपिणी नवद्वीपमयी श्रीश्रीलक्ष्मी-विष्णुप्रिया देवीको सङ्ग लेकर आओ। दैव वाणी सुनता हूँ, प्रभु तुम आओगे, फिर भूतलको आलोकित करके गौड़भूमिमें उदय होगे। नवद्वीपेश्वरी पतितोद्धारिणी जगन्माताको साथ लाओगे। भूलोगे नहीं प्रभु ! लाखों-लाखों जीव उस शुभ दिनके लिये उद्ग्रीव होकर ताक रहे हैं, उनकी बड़ी आशा है कि युगल रूप दर्शन करके युगल विग्रहके चरणोंमें साष्टाङ्ग दण्डवत करें और युगल-रूप-माधुरी देखकर प्राण भरकर रोवें। उनको निराश न करना प्रभु ! वे इसी आशासे जीवन-धारण कर रहे हैं। मायाविनी आशाकी आशामें वे परमानन्दसे दिन व्यतीत कर रहे हैं। वह दिन कब आयेगा प्रभु ! उस शुभ दिनके आगमनकी प्रतीक्षामें वे आहार-निद्रा त्याग करके पथ देख रहे हैं।

इसी कारण मैंने उस दिन आनन्दमनसे लिखा था—

एस रसराज, नदियार राज,
हयेछे देववाणी।
एस मा ! एस मा ! तड़ित - प्रतिमा,
एस गो नदीया राणी॥

इस दैव वाणीको बहुतोंने सुना है, यह अब गुप्त मन्त्रणा नहीं रह गयी है। भुवन-मङ्गल गौर-विष्णुप्रिया नामकी आनन्द ध्वनि उठकर त्रिभुवनमें व्याप्त हो रही है। सब लोग एक एक स्वरसे कह रहे हैं, "प्रभो ! तुम फिर नदिया धाममें अवतीर्ण

होओगे, और तुम जन-जन-मोहन रूपमें युगल स्वरूपमें बैठोगे, जग-जन-मोहिनी श्रीविष्णुप्रिया देवीको वाम भागमें लेकर वैसे ही भुवन-मोहन रूपमें राज-राजेश्वर वेषमें राजसिंहासन पर बैठोगे।" इसी हेतु आनन्दित मनसे मैंने लिखा था।

युगल हइया, गौर-विष्णुप्रिया, एस हे आवार नदे।	युगल रूपमें श्रीगौर विष्णुप्रिया एक बार फिर नदियामें आओ।
पराण भरिया, युगले हेरिया, पूजिब युगल-पदे॥	जी भरकर युगल रूपमें देखकर युगल पादपद्मोंको मैं पूजूंगा।
एस गौराङ्ग, साङ्गोपाङ्ग, सङ्गे करिया एस।	हे गौराङ्ग! आओ और अपने सभी पार्षदोंको लेकर (इस नदियामें) पधारो।
सोनार प्रतिमा, विष्णुप्रियाके, बामे ते करिया बस॥	कनकांगी विष्णुप्रियाको अपने वाम भागमें लेकर विराजो।
उजल करिया, आवार नदीया, रूपेर आलोके तव।	अपने रूपके आलोकसे नदियाको फिर उज्ज्वल करके—
श्रीवास अङ्गने, कीर्त्तन-गाने, उठाओ तरङ्ग नव॥	श्रीवासके आँगनमें कीर्त्तन गानके द्वारा नयी-नयी तरङ्ग उठाओ।

हे प्रभु! तुम्हारे मन्त्र, पूजा आदिको लेकर जो व्यर्थ विवाद खड़ा हुआ है, उसमें कुतर्की भ्रमान्ध जीव ही सम्मिलित हो रहे हैं। तुम रूपका फन्दा डालकर उनके दर्पको चूर्ण करो। तुम्हारी अपरूप रूपराशिको देखते ही तुम्हारे लीलारससे वञ्चित ये अभागे जीव सब कुछ भूल जायेंगे, उनका पाण्डित्यका अभिमान, कुलशीलका सारा गर्व धूलमें मिल जायगा। तुम्हारे मनमोहन रूपका ऐसा ही गुण है, ऐसी ही आकर्षण शक्ति है। इसी हेतु मैंने लिखा था—

शची आङ्गिनाय, रूपेर प्रभाय, आवार हउक पूर्ण।	शचीमाताका आंगन रूप-छटासे फिरसे पूर्ण हो जाय।
भेक कोलाहल, पाषण्डीर दल, करहे आवार चूर्ण॥	वेशधारी कोलाहल करने वाले पाखण्डियोंके दलका फिर मानमर्दन करो।
एस गोराचाँद, पाति रूप फान्द, भुलाओ जगत सर्व्व।	हे गौरचाँद! आओ और अपने रूपका फन्दा डालकर सारे संसारको उसमें फँसा लो।
पण्डिताभिमान, जाति कुल मान, करहे गरब खर्ब्ब॥	पण्डितोंका ज्ञानाभिमान और जाति-कुल मान आदि गर्व सब नष्ट कर डालो।

भक्ति-स्वरूपिणी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको साथ लेकर आओ। प्रेमभक्ति, प्रेमधर्म संसारमें रह नहीं गया है। अधम पामर कलिके जीवको प्रेमभक्तिकी शिक्षा देनेके लिये, उनको प्रेमधर्म समझानेके लिये माँ जननीको आना ही पड़ेगा। अबोध सन्तानको माताके सिवा और कौन धर्मकी शिक्षा देगा ? इसी कारण माँ जननीको कातर स्वरसे मैं पुकार रहा हूँ—

एस मा जननि, गौराङ्ग-घरणी, शिखाओ प्रेमधर्म्म।	हे गौराङ्ग-घरणी माँ। पधारो और (जीवोंको) प्रेम-धर्म सिखाओ।
तेमनि करिया, प्रेम शिक्षा दिया, बुझाओ पीरिति मर्म्म॥	उसी तरहसे प्रेम-शिक्षा देकर प्रीतिका मर्म समझाओ।
गौर कि जे धन, करिया यतन, शिक्षाओ जगज्जीवे।	गौर कैसा धन है यह यत्नपूर्वक सारे संसारके जीवोंको सिखाओ।
भव सम्पद, पद कोकनद, के आर जीवेरे दिवे॥	अरुण कमल सदृश चरण वाली संसारकी सम्पदा जीवोंको और कौन देगा ?
सनातन बाला, पूर्ण शशिकला, एस मा ! गौर सङ्गे।	हे सनातन बाला ! पूर्ण शशिकला माँ ! गौरके सङ्ग आओ।
युगल हइया, एस गौरप्रिया, परम पीरिति रङ्गे॥	हे गौरप्रिया। युगल रूपमें परम प्रीतिके रङ्गसे पधारो।
गौर-सोहागिनी, एस विनोदिनी, कलि जीव-मातृ-मूर्ति।	हे गौरसुहागिनी ! हे विनोदिनी ! हे कलियुगके जीवोंके लिए मातृ-रूपिणी। पधारो।
कैवल्यदायिनी, पतित-पावनी, प्रेम-भक्ति-धन दात्री॥	हे मोक्षप्रदायिनी ! हे पतित पावनी ! हे प्रेम-भक्ति रूपी धनको देने वाली ! पधारो।

हे प्रभु ! एक और काम न भूलना। प्रेमदाता नित्यानन्दको साथ लाना न भूलना। तुम गौर-गोविन्द हो, वे सदानन्द है, साक्षात ब्रह्मानन्द स्वरूप हैं। तुम दोनोंके नृत्य बड़े ही मधुर होते हैं। तुम्हारे उस मधुर नृत्यका दर्शन करके फिर कलिके जीव कृतार्थ हो जायेंगे। तुम्हारा नटवर वेष बड़ा ही सुन्दर है। हे प्रभु ! उस नवीन नागर नटवर साजमें सजकर, रसरङ्गमें कलिके जीवको तुम्हारे सिवा कौन व्रजतत्त्वकी शिक्षा देगा ? अतएव मैंने मनके आवेगमें लिखा था—

गौर-गोविन्द, एस नित्यानन्द,
करह उभये नृत्य ।
प्रेम - विह्वल, गौर - गोपाल,
शिक्षाओ ब्रजेर तत्त्व ।।
नदीया नादुया, गौर विनोदिया,
करहे रसेर रङ्ग ।
विहने तोमार, भुवन आँधार,
सवार हृदय भङ्ग ।।

हे गौर-गोविन्द ! हे नित्यानन्द ! पधारो, और दोनों मिलकर नृत्य करो । हे प्रेममें विह्वल गौर-गोपाल ! ब्रज तत्वको सिखाओ । हे नदिया-नादुया ! हे गोर-विनोदिया ! रस रंग करो । तुम्हारे बिना संसार अन्धकारपूर्ण है और सबके हृदय भग्न हो रहे हैं ।

आओ हे! विष्णुप्रिया-वल्लभरूपमें भुवनको उन्मत्त करके नवद्वीप-रस-भण्डारको लुटा दो । तुम्हारा विष्णुप्रिया-वल्लभ नाम युगलरूप-पिपासुके लिए बड़ा प्रिय है, बड़ा ही अच्छा लगता है । हे विष्णुप्रियावल्लभ ! हे अखिल रस-सिन्धु ! हे मिखिल-भुवन-पावन गौरहरि ! आओ युगलरूलमें आओ ! रूप-पिपासासे कातर, युगल-भजन-निष्ठ, तुम्हारे अनुगत भक्तवृन्दके कातर रोदन पर कर्ण पात करो । आओ, प्राण गौराङ्ग ! आओ। आओ, दयामयी जगज्जननी माँ ! आओ। तुम्हारे शरणागत भक्तवृन्दने प्रेमाह्वानके सारे उद्योग कर रक्खे हैं। दिव्यासन प्रस्तुत है, जयमाल्य भक्तिपुष्पमें ग्रथित है, वरण डाला सज्जित है, महासंकीर्तनके गम्भीर नादसे त्रिभुवन कम्पित हो रहा है, पाखण्डियोंका दल सशङ्कित है । आओ, नदियाके चाँद ! वही त्रिभुवनको भ्रममें डालने वाले भ्रम फाँसको बिछाकर आओ। आओ, नदियाकी रानी ! राज-राजेश्वरी वेषमें अपने प्राणवल्लभके साथ आओ । माँ ! तुम और लक्ष्मीप्रिया देवी अभिन्न हो, यह हमने समझ लिया है । अपनी मर्मी सखी काञ्चनाको साथ लाना न भूलना । कितनी ही आशाएँ हमारे हृदयमें पड़ी हैं, अपनी अधम अकृती सन्तानके हृदयाकाशको घोर नैराश्यके अन्धकारमें निमग्न करके उसे मार न डालो । हृदयके अदम्य आवेगमें मैंने कविताके अन्तिम चरणको लिखा था —

एस जगन्माता, लक्ष्मी स्वरूपा,
आवार एस मा वङ्गे ।
जीवन-सङ्गिनी, यौवने योगिनी,
काञ्चनाके एन सङ्गे ।।
युगले एस मा, कनक प्रतिमा,
पूजिव चरण-द्वन्द्व ।
दास हरिदास, कत करे आश,
(तार) कपाल बड़इ मन्द ।।

हे जगन्माता ! हे लक्ष्मीस्वरूपा ! एक बार बङ्गालमें फिरसे आओ । हे जीवन संगिनी ! हे यौवन योगिनी ! कांचनाको साथ लाना । हे कनक प्रतिमाके समान माँ ! युगल रूपमें आओ । आप दोनोंके चरणोंकी पूजा करूँगा । यह दास हरिदास कितनी आशा लगाये है । इसका भाग्य बड़ा मन्द है (जो आप अभी तक नहीं पधारीं) ।

श्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगल-मूर्त्ति-दर्शनके भिखारी भक्तवृन्द आओ! सब मिलकर एक स्वरसे संकीर्तन यज्ञमें उच्च स्वरसे पुकारें –– "जय विष्णुप्रिया गौराङ्ग!"

जय श्री शचीनन्दन
जग - जन - वन्दन,
जगन्नाथ - नन्दन
सरव - गुण - निधिया।
जय सनातन-नन्दिनी
त्रिभुवन - वन्दिनी,
गौर - सोहागिनी
देवी विष्णुप्रिया॥

* ॐ इति शुभम् *

श्रीश्रीलक्ष्मीप्रिया-चरितके

प्रथम हिन्दी-संस्करणका शुद्धि-पत्र

पंक्ति संख्या गिननेमें अध्यायका नाम और साथके शीर्षक तथा उप-शीर्षकको नहीं गिना गया है।

पृष्ठ-संख्या	पंक्ति-संख्या बाएँ	दाएँ	अशुद्धि	शुद्धि
३०		२७	रूपच्छटा	रूपछटा
३६		२२	कन्यामात्र	कन्या
४०		१६	निमित्तमें	निमित्त मैं
४२	२२		ल्लभ	वल्लभ
४५	३		सुल	सुत
४७		२६	मालार्पण	माला
५१	२४ २५		शुभक्षणे दिते गन्धमाला चिते उलसित बाढ़े अङ्गेर छटा	शुभक्षणे दिते, गन्धमाला चिते; उलसित बाढ़े अङ्गेर छटा
५५	४		दूर्वा	दूर्व्वा
५५		२३	जलसहाकर कर	जलसहा कर कर
५८	अन्तिम		ॐानन्दसे	आनन्दसे
६२	१२		विश्वभर	विश्वम्भर
६४	२६		चादरे	चाँदेर
८३		११	वासर घरमेंनागर वर	वासरघरमें नागरवर
८३	१६		साखि	सखि
६२		२३	ग्रह-प्राङ्गण	गृह-प्राङ्गण
६७	शीर्षस्थान		गदाधरके यहाँ प्रभुका भोजन	प्रभुके यहाँ गदाधरका भोजन
१०१		१४	दुलारेको	शची दुलारेको
११८		२६	वल्लभाचार्य	वल्लभाचार्यके
११६		३	शक्ति	शक्तिका
११६		४	विवेचना शक्तिका परिचय देकर	(इतना वाक्य काट दीजिये)
१२४		२५	ज्ञान	ज्ञात
१२७		१२	बक्लेश्वर	वक्रेश्वर
१२७	२३		वक्लेश्वर	वक्रेश्वर

पृष्ठ-संख्या	पंक्ति-संख्या बाएँ	बाएँ	अशुद्धि	शुद्धि
१३७		३०	ग्रहिणीरूपमें	गृहिणीरूपमें
१३८		२७	दवांश-सम्भूता	देवांश-सम्भूता
१३९		१४	समझाने शक्ति	समझानेकी शक्ति
१४९		२९	प्रभु अधरामृत	प्रभुके अधरामृत
१५७		२	किसी प्रकार	किस विधाताने
१५७		२४	अतएव	क्योंकि
१७१	अन्तिम		कविराजजी	कविराजी
१८१		८	प्रभु	महाप्रभु
१९५		४	अब मैं	अब अभागी मैं
१९६		२६	तो देखी, और न सुनी।	न तो देखी, और न सुनी।
१९७		५	क्षीरोदसम्भदा	क्षीरोदसम्भवा
२०२		२०	गौरचन्द्रकी	गौरचन्द्रका
२०५	२६		भाव।	भाष।
२२३		२४	वेशधारी	मेंढ़कवत